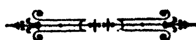
योग-साधन-माला । ग्रंथ ६



आ स न ।



लेखक और प्रकाशक ।

श्रीपाद दामोदर सातवळेकर,

स्वाध्यायमंडल, औंध (जि. सातारा.)

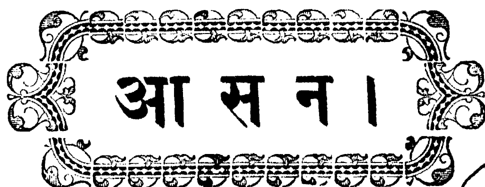


चतुर्थ वार ५०००

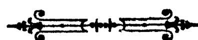
संवत् १९८७ शक १८५२, सन १९३०

योग-साधन-माला । ग्रंथ ६





आसन ।



लेखक और प्रकाशक ।

श्रीपाद दामोदर सातवळेकर,

स्वाध्यायमंडल, औंध (जि. सातारा.)



चतुर्थ वार ५०००

संवत् १९८७ शाक १८५२, सन १९३०

मुद्रक—रघुनाथ रामचंद्र बखले, मुंबईवैभव प्रेस, सर्व्हंटस्
ऑफ इंडिया सोसायटीज् बिल्डिंग, सँढर्स्ट रोड, गिरगांव-मुंबई.

प्रकाशक,
श्री. श्रीपाद दामोदर सातवळेकर, स्वाध्याय-मंडल,
औंध (जि. सातारा.)

ॐ

आसन ।

योगसाधन का उद्देश ।

बहुत लोग प्रश्न पूछते हैं कि, योगसाधन क्यों करें? योगसाधन करनेसे क्या लाभ हो सकता है? योगसाधन करने में प्रतिदिन जो समय खर्च होता है, उसके बदले हमें क्या मिल सकता है? इत्यादि प्रश्न वारंवार पूछते हैं। कई पाठकोंके पत्र हमारे पास आगये हैं, जिनमें उक्त प्रश्न तथा इन प्रश्नोंके समान अन्य प्रश्न पूछे गये हैं। इसलिये इस लेखद्वारा उनका उत्तर देनेका यत्न करना है। प्रथमतः यहां यह बात कहना आवश्यक है कि, जो "वैश्य-प्रवृत्ति" पाठकोंमें उत्पन्न हो गई है, वही उन्नतिकी विघातक है। बाजारोंमें जानेवाले लोग जिस समय दुकानदार को एक रुपया देते हैं, उस समय एक रुपयेकी चीजें उससे लेनेका यत्न करते हैं, यह बाजारके व्यवसायमें ठीकही है, परंतु यही प्रवृत्ति धार्मिक उन्नतिमें चलाना उचित नहीं है। एक घंटा मजदूरी करनेसे

दो आने मिलते हैं, इसलिये संध्या करनेके कार्य में जो घंटा चला जाता है, उससे भी दो आने मिलने चाहिये, ऐसा आग्रह धरना, और उसप्रकार धनप्राप्ति नहीं होती है, इसलिये संध्या न करना, यह सब हमारी हीन प्रवृत्तिका ही द्योतक है। यह बाजार करनेकी प्रवृत्ति आजकल बढ रही है, इसी लिये धार्मिक भाव न्यून हो रहा है और अन्य आपत्तियां बढ रही हैं।

यदि कोई कहे कि निद्रामें जो छः सात घंटे चले जाते हैं, उनसे कोई द्रव्यप्राप्ति नहीं होती, इसलिये मैं निद्रा ही नहीं लूंगा; तो उसकी उस प्रकार निद्रा न लेनेकी प्रवृत्तिसे उसीका नाश होगा। पांच सात दिन निद्रा न आनेसे उसीका सिर चक्कर खाने लगेगा, और उससे कोई कार्य नहीं हो सकेगा। सब लोगोंको अनुभवसे पता है कि, मनुष्यको अथवा प्राणिमात्रको निद्राकी अत्यंत आवश्यकता है। निद्रासे स्वास्थ्य अच्छा रहता है, सब शरीर कार्य करनेमें समर्थ होता है, तथा शरीर और मन में निद्राके कारण "नवीन जीवन" प्राप्त होता है।

ऐसा क्यों होता है? निद्रामें ऐसी कौनसी शक्ति है कि जिससे इतना लाभ होता है? निद्रा न आनेसे जो रूक्षता और गर्मी उत्पन्न होती है, जो निरुत्साह और बलका नाश होता है, वह क्यों है? पाठकोंको इसका अवश्य विचार करना चाहिए, क्यों कि इस बातके विचार से ही पूर्व प्रश्नोंका ठीक ठीक उत्तर प्राप्त होना संभव है।

मनके व्यापार बंद होनेसे ही निद्रा आती है। कभी ऐसा नहीं होता है, कि मनके विचार चलते हैं, और निद्रा आई है। चित्तकी वृत्तियां कम होतीं हैं, मनके व्यापार बंद होने लगते हैं, अहंकार का नाश होने लगता है, उस समय निद्रा आने लगती है। मनकी पूर्ण स्तब्धता ही निद्रा है। मन स्थिर होगया अथवा लीन हुआ, संकल्प-विकल्पकी लहरें मनमें न उठीं, तो निद्रा होती है। तात्पर्य जो लाभ निद्रासे होते हैं, वे मनकी वृत्तिकी स्तब्धताके कारण भी हो सकते हैं। यदि मन प्रक्षिप्त रहा, तो निद्रा नहीं आती और बेचैनी होती है। जागृतिमें मन चंचलताके व्यवहार करता है और थक जाता है, यह थकावट निद्रामें दूर होती है और नवजीवन प्राप्त होता है। इसका स्पष्ट अर्थ यह है कि, मनकी स्थिरता होनेसे उत्साह और बल की प्राप्ति होती है और मनकी चंचलतासे शक्तिका न्हास होता है, यह हरएक का प्रतिदिनका अनुभव है। इसीलिये प्रत्येक प्राणी प्रतिदिन निद्रा लेता है और नवजीवन प्राप्त करता है, तथा कमजोरीको दूर करता है। यदि किसी प्राणीको निद्रा न आयेगी, तो उसका शीघ्रही मृत्यु होगा; इतनी निद्राकी अर्थात् "मनके व्यापार लीन करनेकी आवश्यकता" है।

अब पाठकोंको इस बातका विचार करना चाहिये कि,

योग क्या है? "चित्तवृत्तियोंका निरोध" ही योग है। संपूर्ण "चित्त-वृत्तियोंका निरोध" करना और मनकी स्थिरता प्राप्त करना ही योगसाधन का साध्य है। मनकी स्थिरतासे जो लाभ होता है, उसका अनुभव निद्राका विचार करने से हमारे ध्यानमें आचुका है। निद्रामें तमोगुणकी अर्थात् अज्ञान की प्रधानता रहती है, और योगसाधनजन्य चित्तकी स्थिरतामें सत्त्वगुणकी विशेषता रहती है। तमोगुणमय अवस्थाकी अपेक्षा सात्त्विक अवस्था अधिक उच्च है, इसमें प्रमाणान्तर देनेकी कोई आवश्यकता नहीं है। अर्थात् जितना स्वास्थ्य, आनंद और बल निद्रासे प्राप्त होता है, उससे कई गुणा अधिक स्वास्थ्य, आनंद और बल मनकी स्थिरतासे प्राप्त होना संभवनीय है। योगसाधनजन्य इस अवस्थाको "योग-निद्रा" ही कहते हैं। साधारण "निद्रा" से जितना लाभ हो सकता है, उसकी अपेक्षा "योग-निद्रा" से कई गुणा अधिक लाभ होता है, अथवा अधिक लाभ होना संभवनीय है; यह बात पाठकोंके मनमें आगई होगी। योगसाधनसे जो लाभ होता है वह यही है। परंतु कई पाठक कहेंगे कि, चित्तकी वृत्तियोंका निरोध करनेके पश्चात् यह लाभ हो सकता है, उससे पहिले नहीं; इसलिये जबतक हमारा मन स्थिर नहीं होता, तबतक हमको क्या लाभ हो सकता है? यह प्रश्न ठीक है; परंतु देखना यह है कि, साधन करनेके विना किसीभी साध्यकी प्राप्ति नहीं हो सकती।

एक आमका वृक्ष है और उसपर पके हुए आम बहुत हैं। परंतु अपने स्थानसे उठना, उस आमतक पहुंचना, उसपर चढना, आम तोडना और पश्चात् उस आमको खाना होता है। आम खानेतक जितने व्यवसाय हैं, उनमें आम खानेका आनंद नहीं है। यदि कोई कहेगा कि, केवल वृक्षके पास पहुंचने मात्रसे आमका रसास्वाद नहीं प्राप्त होता, इसलिये मैं वहां नहीं जाऊंगा; तो उसको क्या कहा जाय? जिस प्रकार यह है, उसी प्रकार योगसाधनके विषयमें है। अंतिम साध्य प्राप्त करनेके लिये साधनकी अत्यंत आवश्यकता है। और जबतक एकनिष्ठासे प्रतिदिन अनुष्ठान होगा, तबतक साध्यका आनंद प्राप्तभी नहीं होगा।

तथापि योगसाधन के मार्ग में आक्रमण करते करते कोई लाभ नहीं होता. ऐसी भी बात नहीं है। यहां प्रत्येक सीढीपर लाभ होते हैं और अनुभव भी आते रहते हैं। अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य, अपरिग्रह इन पांच यमोंका परिपालन करनेसे मनुष्यका अन्य मनुष्यों और प्राणियोंके साथ यथायोग्य व्यवहार होता है। सामाजिक स्वास्थ्यके लिये इसकी बडीभारी आवश्यकता है। शौच, संतोष, तप, स्वाध्याय और ईश्वरप्रणिधान ये पांच नियम हैं, इनका पालन करनेवालों के अंदर वैयक्तिक शांति उत्तम प्रकार रह सकती है। तात्पर्य सामाजिक शांति चाहनेवालोंको पांच यमोंका पालन करना आवश्यक है,

और वैयक्तिक शांति की इच्छा करनेवालोंको पांच नियमोंका पालन करना चाहिये। कौन ऐसा मनुष्य है कि, जो वैयक्तिक और सामाजिक शांति नहीं चाहता ? सबही मनुष्य इन शांतियोंकी इच्छा करते हैं, इसलिये सबको आवश्यक है कि, वे इन यमनियमरूप योगसाधनका अवश्य पालन करें। इस विचार से पाठकोंको पता लगा ही होगा कि, योगसाधनके इन प्रारंभिक यमनियमोंसे भी कितना लाभ हो सकता है।

आसनोंके अभ्याससे शरीरका रुधिराभिसरण अच्छा होता है, और सब स्नायुओंका आरोग्य उत्तम रहता है, तथा संपूर्ण अंतडियोंकी गति ठीक प्रकारसे होती है। जो लोग जानते हैं कि, रुधिराभिसरण, नसनाडियोंकी निर्मलता और अंतडियोंकी गति के साथ मनुष्यके आरोग्यका कितना घनिष्ट संबंध है, उनको कहनेकी आवश्यकता नहीं है, कि आसनोंसे क्या लाभ होता है।

प्राणायामसे फेंफडों की शक्ति बढती है, रुधिर अधिक शुद्ध होता है और संपूर्ण नाडिचक्रोंमें चेतना उत्पन्न होती है। इसका स्वास्थ्यके साथ अत्यंत संबंध है। जिसके फेंफडे बलवान् होते हैं, वह दीर्घायु हो सकता है। जिसका रुधिर शुद्ध होता है, उसके अंदर रोगप्रतिबंधक शक्ति होती है; इसलिये उसके पास रोग नहीं ठहरते और वह हमेशा नीरोग रहता है। जिसके नाडिचक्रोंमें चेतना होती है, उसमें अनेक प्रकारकी शक्तियां

विकसित होती हैं। जैसा (१) मूलाधार–चक्र–गुदाके पास रहता है। इस चक्रमें चेतना उत्पन्न होनेसे वीर्यस्थिरता होती है, और वीर्यकी स्थिरता होनेसे संपूर्ण शरीर सुदृढ होजाता है। इस चक्रकी चेतना प्राप्त होनेसे मनुष्य ऊर्ध्वरेता हो सकता है। (२) स्वाधिष्ठान चक्र–मूलाधारके ऊपर चार अंगुल है। इसमें चेतनता प्राप्त होनेसे रोग दूर होते हैं, अद्भुत आरोग्य प्राप्त हो सकता है। शरीर की थकावट दूर हो जाती है, और उससे ऐसा प्रेमका प्रवाह चलता है कि उसके पास उसके शत्रुभी मित्र बन जाते हैं। हिंसक भाव उससे दूर भाग जाते हैं और प्रेमदृष्टि का उसमें उदय होजाता है। (३) मणिपूरक-चक्र–ठीक नाभिस्थान में है। इसकी चेतनता उत्पन्न करनेसे शारीरिक और मानसिक दुःख दूर होते हैं, विपरीत परिस्थिति में भी इसके मनकी स्थिरता हटती नहीं। दिव्य दृष्टि प्राप्त होकर मनुष्य अपने आपको शरीरसे भिन्न अनुभव करने लगता है। सब चक्रोंका यह मध्यस्थान है। संपूर्ण शरीरमें समता रखना इस चक्रका उद्देश है, और समता ही श्रेष्ठ स्वास्थ्य है। (४) सूर्यचक्र–यह चक्र नाभिके किंचित् ऊपर परंतु थोडासा सीधी ओर है। संपूर्ण पेट, आंतडियां तथा वहांके सब अन्य अवयवोंकी सुस्थिति इस चक्रकी चेतनासे सिद्ध होती है। दीर्घ आयु, अपूर्व आरोग्य आदि सब इसकी चेतनासे सिद्ध होता है। इसकी चेतनासे क्षुधा बढनेका प्रत्यक्ष अनुभव थोड़ेही दिनोंमें होता है। भस्त्रा प्राणायामसे विशेषतः और अन्य प्राणायामोंसे

सामान्यतः इसमें चेतनता आती है। शारीरिक बल, आरोग्य आदिके लिये तथा पेट और अंतडियोंके संपूर्ण व्यापारोंके लिये इस चक्रकी चेतना सहायक होती है। (५) मनश्चक्र-यह पेट अर्थात् अन्नाशयके समीप परंतु किंचित् ऊपर है। केवल कुंभक प्राणायामसे इसमें चेतना उत्पन्न होती है। तार्किक मननशक्तिका विकास आदि इससे होता है क्योंकि मस्तिष्कका इससे दृढ संबंध है। (६) अनाहत—चक्र-हृदयस्थानमें है, हृदयके साथ इसका संबंध है। हृदयके संपूर्ण व्यापार इससे नियमित होते हैं। इसकी चेतनासे हृदयमें बडा बल प्राप्त होता है। हृदयके बलपरही प्राणियोंका जीवन अवलंबित है, तथा जो प्रेम, भक्ति आदि हृदयके उच्च तथा नीच भाव हैं, वे इसीसे संबंधित हैं। योग्य प्राणायामसे इसकी शक्तिका विकास और अयोग्य विधिहीन प्राणायामसे इसकी क्षीणता होती है। (७) विशुद्धिचक्र-कंठस्थानमें है। कंठके मूलमें जहां दोनों ओर की हड्डियां आती हैं और बीचमें अंगुष्ठमात्र नरम स्थान होता है, वहां हनुका दबाव आनेसे इस चक्रकी चेतना प्राप्त होकर स्वरविज्ञान प्राप्त होता है। इस पर चित्त स्थिर करनेसे बाह्य जगत् का विस्मरण और अंतरात्माके स्वरूपका प्रकाश होता है। इसकी चेतनासे तारुण्य और उत्साह स्थिर रहता है और इससे रक्त शुद्ध होता है। साधन मार्गमें इसका महत्व बहुत है। (८) आज्ञा—चक्र-दोनों भौओंके मध्यमें है। इसकी चेतना प्राप्त होनेसे संपूर्ण शरीरपर उत्तम प्रभुत्व प्राप्त होता

है, हरएक नसनाडीकी स्वाधीनता प्राप्त होनेसे, अपने आत्माकी प्रेरणासे सब व्यवहार चल रहा है, ऐसा यहां अनुभव होता है। दीर्घायु प्राप्त करनेके लिये इस चक्रकी चेतना बड़ी सहायता देती है। (९) सहस्रार-चक्र—तालुस्थानके ऊपर है, इसका महत्त्व अत्यंत है। शरीरमें ऐसा कोई भी भाग नहीं कि जिसके साथ इसका संबंध नहीं। सब शक्तियां इसमें विराजमान होती हैं। (१०) भ्रमरगुहा किंवा ललाट-चक्र—यह ललाटके ऊर्ध्वभागमें है। इसका भी विलक्षण महत्त्व है।

इन सब चक्रोंमें तथा इनसे भिन्न जितने और शक्तिके केंद्र हैं उन सबमें प्राणायामसे चेतना उत्पन्न होती है। चेतना उत्पन्न होनेसे उस चक्रकी शक्ति विकसित होती है। प्राणायाम विधियुक्त और नियमपूर्वक करनेसे वर्ष दो वर्षोंमें भी किसी न किसी केंद्रकी शक्तिका विकास होनेका अनुभव आता है। तथा यदि किसीको विशेष चक्रकी शक्ति उद्बोधित करनी हो तो वह भी, विशेष प्रयत्नसे और विशेष नियमोंके अनुसार आचरण करनेसे हो सकती है। परंतु यदि कोई कहेगा कि, कोई प्रयत्न न करनेपर भी शक्तिकी जागृतिका अनुभव आना चाहिये, तो वह इच्छा कबीभी सफल नहीं हो सकती है। पुरुषार्थ करनेपर सिद्धि हो सकती है, न करनेपर कैसी हो सकेगी ?

प्रत्याहार का अभ्यास करनेसे इंद्रियोंकी स्वाधीनता होती है। इंद्रियोंकी स्वाधीनता भी एक बडी भारी शक्ति है। इंद्रियों-

की स्वैर वृत्तिको रोकनेसे ही अपने अंदर शक्तिकी वृद्धि होती है। जिसकी इंद्रियां स्वैर हैं, अंदाधुंदीसे जो विषयोंका सेवन करता है, वह निःशक्त, अल्पायु और मनका कमजोर बनता है, यह सार्वत्रिक अनुभव है। इसलिये प्रत्याहार से हरएक व्यक्तिका लाभ निःसंशय होता है।

धारणा और ध्यान ये दोनों प्रकार मनकी एकाग्रता के लिये अत्यंत आवश्यक हैं। मनकी एकाग्रता जिसको साध्य है, वह एक प्रकारकी अद्भुत शक्तिसे युक्त होता है। मनके नियंत्रणके अंदरही संपूर्ण इंद्रियां कार्य कर रहीं हैं, इसलिये मनकी स्वाधीनतासे संपूर्ण इंद्रियोंकी स्वाधीनता होती है। इसके अतिरिक्त "ध्यान" का और भी एक महत्त्व है। किसी विषयके संबंधमें मनुष्यको यदि निदिध्यास लगा, तो वह बात वैसी ही बनजाती है। इसका प्रयोग असंभव बातोंमें करनेका नहीं है। जैसा कि कोई चाहेगा कि मैं चांदमें जाकर बैठूं, तो वह बात सिद्ध नहीं होगी; परंतु यदि कोई चाहेगा कि, मैं अपनी इच्छाशक्तिसे अपने शरीरमें कई बातें सिद्ध करूं, तो उसकी सिद्धि होना संभवनीय है। ध्यानसे तद्रूपता प्राप्त होती है। तथा ध्यानसे अपनी शक्ति बढती है।

इसप्रकार योगके प्रत्येक अंगसे लाभ होता है। तात्पर्य विधियुक्त योगसाधन करनेसे किसी प्रकार नुकसान नहीं हो सकता। जो कहते हैं कि, यदि हमें लाभ होगा; तोही हम योगसाधन करेंगे, नहीं तो नहीं; उनके लिये ही यह लेख

लिखा है और इसमें बतानेका यत्न किया है कि योगके हर-एक अंगसे सामान्यतः किन किन शक्तियोंका विकास हो सकता है। योगसाधन करनेवाला मनुष्य अधिक अनुष्ठान करनेसे समाधि तक शीघ्र पहुंच सकता है, इसमें कोई संदेह ही नहीं है। परन्तु इतना साधन करना हरएक मनुष्यके लिये आजकल असंभव है। इसलिये साधारण मनुष्य जो घंटा दो घंटे ही प्रतिदिन इस योगके अनुष्ठान के लिये दे सकते हैं; अथवा घंटा आधा घंटा ही नियमपूर्वक दे सकते हैं, उनको भी साल छः महिनोंमें उचित अनुभव प्राप्त होगा, और अपनी शक्तिके विकासका अनुभव उनको भी मिलेगा।

यह योगसाधन ऐसा है कि, इसका थोडासा अनुष्ठान हुआ तो भी उचित लाभ हो सकता है। समाप्तितक अभ्यास न होनेसे कोई नुकसान नहीं होता। संपूर्ण शास्त्रोंमें यह योग-शास्त्रही प्रत्यक्ष अनुभव का शास्त्र है। थोडा अभ्यास करने-वाले को थोडा लाभ अवश्य होगा, और दृढ अभ्याससे जो अधिक अनुष्ठान करेगा उसको अधिक लाभ होगा, तथा बीचमें अधूरा छोडनेवालेका कभी नुकसान नहीं होगा।

परन्तु अनियमित व्यवहार करनेवालेका, नियमविरुद्ध आचरण करनेवालेका इससे अवश्य नुकसान होता है। कई लोग प्राणायामादिक क्रियाएं अपनी ही कल्पनासे करते रहते हैं, उनका नुकसान होना संभव है। तथा आहार–विहार आदिका अनियम करनेवालोंका भी नुकसान होता है तथापि

यह योगसाधन का दोष नहीं है। यह उस करनेवाले मनुष्यके नियमविरुद्ध आचरणका दोष है। इस प्रकार दोषी मनुष्यका अहित होता ही है तथा योगसाधनको छोडकर किसी भी अन्य व्यवसायमें अनियम होनेसे घात होता है। अस्तु।

इसप्रकार नियमानुकूल व्यवहार करनेवालोंका निःसंदेह लाभ करनेवाला योगसाधन है। इसलिए इसके अनुष्ठानके लिये स्थानस्थानमें, नगरनगरमें और ग्रामग्राममें योगसाधन करनेवालोंके संघ होने चाहिये, और वहां सबको मिलकर प्रयत्न करने चाहिये। वैदिक धर्मके तत्त्वोंका साक्षात्कार करनेका यही एकमात्र उपाय है, इसलिये आशा है कि इस विषयकी ओर पाठकोंका ध्यान आकर्षित हो जायगा।

सब पाठकोंको अपने अपने स्थानोंमें समान विचारोंके लोग आकर्षित करना उचित है। अलग अलग अनुष्ठान करनेसे वैयक्तिक लाभ होगा, परन्तु संघ बनाकर विचारपूर्वक अनुष्ठान करनेसे बहुत ही अधिक लाभ होता है। इसलिये पाठकोंसे सानुरोध प्रार्थना है कि वे इसका अवश्य विचार करें, और अपने स्थानमें जो हो सकता है करनेका यत्न करें।

योगसाधनकी तैयारी ।

(लेखक—श्री० परशुराम हरि थत्ते, नासिक.)



येन ज्ञातमिदं सर्वं ज्ञातं भवति निश्चितम् ॥
तस्मिन्परिश्रमः कार्यः किमन्यच्छास्त्रभाषितम् ॥

शिवसंहिता ।

"जिसके ज्ञात होनेसे सबका निश्चित ज्ञान होता है, उसीको जाननेके लिये सबको प्रयत्न करना चाहिये ।" अन्य परिश्रम व्यर्थ हैं । इस प्रकार निश्चित ज्ञान होनेका शास्त्र एकही योगशास्त्र है, इसलिये इसीके जाननेके लिये प्रयत्न होने चाहिये । कई कहते हैं कि ज्ञानसे मोक्ष होता है, यदि यह सत्य है तो योगकी क्या आवश्यकता है ? इसके उत्तरमें निवेदन है कि, तलवारसे जय मिलता है यह सत्य है, परंतु युद्ध करनेके वीर्ययुक्त पुरुषार्थके विना केवल तलवारसे जैसा विजय नहीं प्राप्त हो सकता, उसी प्रकार योगरहित ज्ञानसे क्या होना है ? इसी लिये सब ऋषिमुनि प्राणायाममें तत्पर होते हुए योगाभ्याससे चित्तवृत्तियोंका निरोध करके राजयोगके मार्गसे उन्नतिको प्राप्त करते रहे । भगवद्गीतामें भी कहा है कि—" तपस्वी लोगोंकी अपेक्षा कर्मयोगी श्रेष्ठ है, ज्ञानी

पुरुषोंकी अपेक्षा भी श्रेष्ठ है, और कर्मकांडवालोंकी अपेक्षा भी श्रेष्ठ समझा जाता है; इसलिये हे अर्जुन ! तूं योगी हो।" (भ० गीता ६।४६) इस प्रकार योगका महत्त्व है, इसलिये योगका आचरण करनेका यत्न करना उचित है।

इस योगका अभ्यास हरएक कर सकता है। ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र अथवा ज्ञानी, शूर, व्यापारी और साधारण जन ये सब योगाभ्यास कर सकते हैं। स्त्री और पुरुषको भी इसमें अधिकार है। तरुण, वृद्ध, अति वृद्ध, व्याधियुक्त, दुर्बल तथा स्त्रियां आदि सबको इस योगका अधिकार है। क्यों कि इससे प्रत्यक्ष लाभ होता है, इसलिये इसके लाभसे कोईभी वंचित न रहे। जिसके मनमें योगका अभ्यास करने की इच्छा हो, वह इसका अभ्यास अवश्य करे। परंतु शठ, कपटी, दुर्बल, शिश्नोदरपरायण अर्थात् कामी और भोगी, वेषधारी, ढोंगी इस प्रकारके जो छली और कपटी होते हैं, वे योगके अधिकारी नहीं हैं ऐसा घेरंडाचार्यका कथन है और वह सत्यभी है। क्यों कि इस प्रकारके कपटी लोग योग करने लगेंगे तो निःसंदेह अनर्थ होगा।

जो (१) विद्या पढनेमें दत्तचित्त, (२) जितेंद्रिय, (३) शांतचित्त, (४) सत्यवादी, (५) गुरुसेवामें तत्पर, (६) पितामाताकी सेवा करनेवाला, (७) विधिके अनुकूल कर्म करनेवाला, (८) शुद्ध, पवित्र, (९) स्नानादि कर्मोंमें तत्पर, (१०) स्वधर्ममें श्रद्धा रखनेवाला,

(११) सीधे स्वभावसे युक्त, (१२) और कुलीन, सच्छील है, वह मनुष्य योगसाधन करनेके लिये प्रशस्त और योग्य है; और उसीको सिद्धि प्राप्त हो सकती है। यहां स्मरण रहे कि वेष धारण करनेसे योगकी सिद्धि नहीं हो सकती, परन्तु अनुष्ठान करनेसेही सिद्धि हो सकती है। इसलिये नियमपूर्वक अनुष्ठान न करनेवाले इस मार्गमें न आजांय।

योगसाधनमें मुख्य बात मन और शरीरकी है। आत्माका संबंध मन और शरीरसे है। शरीर जड स्थिर तथा (शीर्यत इति शरीरं) जीर्ण होनेवाला है, तथा मन सूक्ष्म और अत्यंत चंचल है। इसलिये शरीर का ज्ञान होनेपर भी मनका ज्ञान होना कठिन है, और मनका ज्ञान होनेपर भी आत्माका ज्ञान होना अत्यंतही कठिण है। परन्तु मनकी चंचलतासे बाधित न होकर यदि मनके अंदरसे, मनके परे देखनेका यत्न किया जाय, तोही उस आत्माका दर्शन होना संभव है। इस विषयमें निम्नलिखित बातें सदा ध्यानमें धरने योग्य हैं—

(१) शरीर, मन और आत्मा इस त्रयीमें शरीर स्थूल और मन सूक्ष्म है परंतु ये दोनों जड हैं। आत्मा ही केवल चेतनरूप है परंतु मनके समान तथा उससेभी अधिक अदृश्य है।

(२) शरीरके अंदर मन, और मनके अंदर आत्मा है। जैसी एक थैलीमें दूसरी थैली होती है, अथवा प्याजके बाहिरके छिलकेके अंदर दूसरे छिलके होते हैं, तद्वत् उक्त कोश एकमें दूसरा विद्यमान है। इन तीनोंमें आत्मा मुख्य है।

उसकी विद्यमानतासे ही मन और शरीर की स्थिति होती है। उसके चले जानेसे शरीर जलाने योग्य समझा जाता है। आत्माके बाहिर मन और उसके बाहिर शरीरके कवच हैं। इनमें परस्पर घनिष्ठ संबंध है। शरीरके स्वास्थ्य और सुखसे मन स्वस्थ और सुखी होता है तथा मनके स्वास्थ्य और सुखसे शरीरभी वैसाही होता है।

(३) आत्मा अमर है और मन तथा शरीर ये दो उसके पहननेके वस्त्र हैं जब ये जीर्ण होते हैं तब वह दूसरे पहनता है।

इनका परस्पर संबंध कैसा है इसका विचार करनेके कई प्रयोग करके देखने योग्य हैं। इनमें एक प्रयोग ऐसा है कि—जब आप उपोषण करना प्रारंभ करेंगे, तब आपका शरीर क्षीण होने लगेगा, पश्चात् मन भी अशक्त होने लगेगा। सात आठ दिन अन्न न सेवन करनेसे बैठना उठना भी मुष्किलसे हो जायगा। जो अध्ययन किया हुआ ज्ञान होगा, वह भी भूल जायगा। इसी प्रकार पंद्रह दिन उपोषण करनेसे और भी स्मृति नष्ट होगी और शरीरकी क्षीणता बढेगी इससेभी अधिक दिन उपोषण करनेसे संपूर्ण इंद्रियाँ क्षीण होगीं, आंखसे दीखना बंद हो जायगा, कानसे सुनाई नहीं देखा, तथा अन्य इंद्रियांभी अपने कार्य करनेमें असमर्थ हो जायंगी; अंतमें ऐसी अवस्था आवेगी कि, जीव शरीरको छोडनेकी तैयारी करने लगेगा। इस अवस्थामें थोडा थोडा अन्न सेवन करनेसे पुनः पूर्ववत् सब इंद्रिय कार्य करने लगेंगे, मनकी स्मरणशक्ति पुनः आवेगी और शरीर पूर्ववत् कार्य-

क्षम हो जायगा। इस प्रकार अन्न शरीर, मन और जीवका संबंध है। अन्नसे शरीर पुष्ट होता है, इंद्रिय ठीक अवस्थामें रहते हैं, मन कार्य करनेमें समर्थ होता है और आत्मा उनमें रहना चाहता है।

दूसरा प्रयोग ऐसा है कि, आंख नाक आदि पंच ज्ञानेंद्रियां पंच कर्मेंद्रियां जो शरीरमें हैं, उनमें किसी एक दो के न होनेसे शरीर चलता ही है; परंतु प्राण चला गया, तो शरीर कार्य करनेमें असमर्थ होता है। इससे सिद्ध होता है कि अन्य इंद्रियोंकी अपेक्षा प्राणका अत्यंत महत्व है।

योगका साधन करनेवालोंको इन प्रयोगोंका अनुभव लेना उचित है। इसका अनुभव कल्पनासेभी आ सकता है। इसलिये विचारकी दृष्टिसे हरएक मनुष्य उक्त बातका अनुभव लेवे और शरीर, मन, प्राण तथा आत्माका संबंध जाननेका यत्न करे। इनमें प्रेरक स्फूर्तिदायक आत्मा है और प्रेरित होनेवाले इतर पदार्थ हैं। यह व्यवस्था जैसी एक शरीरमें है वैसी ही विश्वमें है, विश्वमें परमात्मा ही प्रेरक है और इतर पदार्थ प्रेरित होते हैं। तात्पर्य आत्माकी प्रेरणासे यह सब प्रेरित हो रहा है, इसका विचार करके आत्माकी प्रेरणा मनद्वारा शरीरमें कैसी होती है, इसका अनुभव करके सर्वत्र आत्माकी चेतना ही देखनी चाहिये।

आत्माकी प्रेरणा मनमें और मनकी शरीरमें हो रही है, यह बात जब अनुभवमें आजायगी; तथा जब यह भी अनुभवमें आ जायगा कि अन्नसे शरीर, शरीर-

से मन और मनसे आत्मा कार्यक्षम होता है, तब यह बात स्पष्ट हो जायगी, कि इनको एक दूसरेके सहायक बनानेसेही उन्नति होना संभव है। अर्थात् शरीर और मन एक दूसरेको सहायक हों और इन दोनोंकी सहायता आत्माके लिए हो। शरीर स्थिर है इसलिये उसकी घृणा करनी, मन चंचल है इसलिये उसका सब व्यवहार बंद करना कदापि उचित नहीं है; परंतु उचित यही है कि शरीर मन और प्राण आत्माके सहायक बनें, आत्माके आधीन कार्य करें और आत्माकी शुद्ध प्रेरणाके वाहक बनें; तात्पर्य आत्माका विरोध न करें, परंतु आत्माका कार्य करने योग्य बनें! इनको ऐसे सुयोग्य बनाना ही "योग" है। ये योग अनेक हैं; हठ-योग, कर्म-योग, भक्ति-योग, ज्ञान-योग, राज-योग इत्यादि।

मन स्थिर होनेसे उसीको चित्त कहते हैं, और चित्त अस्थिर होनेसे वही मन संज्ञाको प्राप्त होता है। वास्तविक मन और चित्त एकही है। मन अत्यंत शक्तिशाली है, परन्तु जबतक वह चंचल रहता है, तबतक उसकी शक्ति व्यर्थ जाती है। जिस प्रकार जलकी भांप खुली छोडनेसे कोई कार्य नहीं कर सकती, उसी प्रकार चंचल स्वैर मन कोई कार्य करनेमें असमर्थ है। परन्तु वही भांप यंत्रमें रखनेसे बडे कार्य करती है, उसी प्रकार मनभी नियमनमें रखनेसे अथवा एकाग्र होनेसे विलक्षण कार्य करनेमें समर्थ होता है। इसलिये उसको किसी मार्गसे एकाग्र करना चाहिये। इस कार्यके लिए सबसे सुगम मार्ग यही योग मार्ग है, क्यों कि इस योगसे ही शरीरकी

तथा मनकी एक समयमें ही शक्ति विकसित होती है और वह आत्माके योग्य सहायक बनते हैं।

योगमें हठयोग, राजयोग तथा चिंतामणि–राजयोग ये तीन भाग हैं। हठयोगमें आसनाभ्यासकी तथा आग्रहयुक्त और हठयुक्त नियमोंकी प्रधानता होती है। राजयोगमें ध्यान-धारणा द्वारा मनःसामर्थ्य बढानेका महत्व विशेष है। तथा चिंतामणि–राजयोगमें तृतीयनेत्र, आज्ञाचक्र अथवा सहस्रदल कमलके चिंतामणिपर संयम करके आत्मशक्तिका अनुभव लेना मुख्यतया होता है। इसमें जो सहज हो सकता है वही आसन पर्याप्त होता है। प्रारंभमें प्राणायाम इसलिये किया जाता है कि उससे नस नाडियोंकी शुद्धि होजाय। यह सब प्रथम अवस्थामें आवश्यक है परंतु इसके लिये उक्त स्थानोंमें संयमही विशेषतः अत्यंत आवश्यक है। योगके आठ अंग हैं। यम, नियम, आसन, प्राणायाण, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान और समाधि।

अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य, क्षमा, धृति, दया, आर्जव, मिताहार और शौच ये दस यम हैं। (१) काया वाचा तथा मनसे किसीको कोई क्लेश न देना अहिंसा कहलाती है। (२) जिससे सब भूतोंका हित है और जिसमें असत्य नहीं है वह सत्य है। (३) दूसरेकी वस्तुका अपहार न करना अस्तेय है। (४) स्थिरवीर्य होनेका नाम ब्रह्मचर्य है। (५) प्रिय अथवा अप्रिय अवस्थामें चित्तकी समता रखना क्षमा है। (६) संपत्ति अथवा विपत्तिमें धैर्यसे कर्तव्य तत्पर रहना धृति है। (७) शत्रु मित्र तथा उदा-

सीनोंका हित करनेका भाव धारण करना दया कहलाती है। (८) सरलताकी वृत्तिका नाम आर्जव है। (९) पेटके चार विभाग मानकर उनमें दो विभाग अन्नसे पूर्ण करने, एक विभाग पानीसे पूर्ण करना और एक विभाग वायुकेलिये रखना मिताहार कहलाता है। (१०) आंतरिक तथा बाह्य पवित्रता रखनेका नाम शौच है। इसके अतिरिक्त " असंचय " अर्थात् निर्लोभता, बडा धन संचय करनेकी इच्छा न रखना और संतोष वृत्तिसे रहना; तथा निर्भय वृत्तिसे सब व्यवहार करना, ये भी दो यम हैं ऐसा कई कहते हैं।

तप, संतोष, आस्तिक्य, दान, ईश्वरभक्ति, सिद्धांतश्रवण, ह्री, मती, जप, हुत ये दस नियम हैं। (१) द्वंद्व सहन करनेका नाम तप है। (२) सहज जो सुख दुःख प्राप्त होगा, उसको पवित्र मनसे सहन करना संतोष कहलाता है। (३) ईश्वर तथा धर्म विषयमें आस्तिक्य बुद्धि धारण करना आस्तिक्य है। (४) न्यांयसे प्राप्त धन सत्पात्रमें अर्पण करना दान कहलाता है। (५) ईश्वरकी भक्ति परमात्मपूजन है। (६) धर्मसिद्धांत ग्रंथोंका श्रवण और मनन करना सिद्धांत श्रवण कहलाता है। (७) अपने हाथसे दुष्कर्म होनेपर जो संकोचभाव मनमें होता है वह ह्री होती है। (८) शास्त्रविहित कर्मानुष्ठानमें दृढ श्रद्धा रखना मती नामसे प्रसिद्ध है। (९) मंत्रका वारंवार स्मरण जप कहलाता है। (१०) हवन करनेका नाम हुत है।

इस प्रकार यम नियमोंका स्वरूप है। इनका अभ्यास

जितना हो सके अवश्य करना चाहिये । इससे बहुत लाभ हैं । कई आचार्य यम नियम पांच पांच हैं ऐसा कहते हैं, कई दस दस कहते हैं और कई इससेभी अधिक कहते हैं । इनकी संख्या न्यूनाधिक होनेसे कोई बिगाड नहीं है । ये सब एक दूसरेके आश्रयसे रहनेवाले गुण हैं । विचारसे इनकी न्यूनाधिकताका भ्रम दूर हो सकता है ।

योगका तीसरा अंग आसन है । उत्तम स्वच्छ पवित्र और निरुपद्रव स्थानमें रह कर आसनोंका अभ्यास करके नाडीशुद्धिकी सिद्धी करनी चाहिये । इस योगका प्रारंभ वसंत ऋतुमें अथवा शरदृतुमें करना उचित है । इस विषयमें और एक बात यह है कि सीधे नाकसे श्वास चलनेके समय भोजन तथा दूसरे नाकसे श्वास चलनेके समय शयन करनेसे बडा लाभ होता है ।

सर्व साधारण. ध्यानादिके लिये सिद्धासन अच्छा होता है। वामपादकी एंडी गुदा और वृषणके बीचमें लगाकर दक्षिण पादकी एंडी शिस्नके ऊपर लगाकर हनु कंठमूलमें हृदयके ऊपर स्थिर करनी । शरीर स्थिर तथा सीधा रख, इंद्रिय संयम कर, आंख न हिलाते हुए भौंहोंके बीचमें दृष्टि स्थिर करनी इस प्रकार बैठनेको सिद्धासन कहते हैं । इस आसनमें स्थित हो कर मुख बंद कर, जिह्वा मूलस्थानमें संचालित करके वहां जो अमृतस्राव होता है, उसका प्राशन करनेसे बडा लाभ होता है । इसलिये हरएकको योग साधन करके लाभ उठानेका यत्न अवश्य करना चाहिये ।

मुझे आरोग्य कैसा प्राप्त हुआ ?

[लेखक—श्री. पं. पांडुरंग गोपाल बाळ महाजन, मुंबई.]

‘ आसनोंसे लाभ । ’

आजकल बहुतसे लोगोंका ध्यान शरीर शास्त्र और आरोग्यकी ओर हो रहा है, अनेक विद्वान विविध उपायोंका पुरस्कार कर रहे हैं । कई कहते हैं कि सैंडोकी व्यायाम पद्धति बडी अच्छी है, दूसरे कई समझते हैं कि नूतन आरोग्य संप्रदाय वालोंकी बस्तिविधि लाभदायक है, तीसरे कई लोग डा. कुन्हे महोदय की जल चिकित्सा बहुत पसंद करते हैं, इसी प्रकार अन्यान्य लोग अन्यान्य नवीन युरोपियन पद्धतियोंका पुरस्कार करते हैं । परन्तु यहां शोकसे कहना पडता है कि, जिन ऋषि मुनियोंके हम वंशज हैं, उनकी “योग पद्धति” की ओर किसीकाभी ध्यान नहीं जाता। अनुभवसे अब मेरा यह निश्चय हो चुका है कि, आरोग्य संपादनकी “योग प्रक्रिया” सर्वांग सुंदर और परिपूर्ण है । सब युरोपियन पद्धतियोंसे भी कई गुणा श्रेष्ठ, निर्दोष और परिपूर्ण “ अष्टांग योग पद्धती ’ हमारे पास होते हुए भी हम अभागे लोग अपने आरोग्यके लिए अन्य अधूरे उपायोंके ही शरण जाते हैं । यह हमारी अवस्था देखकर जिन प्राचीन पूर्वजों और ऋषि मुनियोंने इस योगपद्धतिका आविष्कार किया, वे क्या

कहते होंगे ? वे हमारे पूर्वज हमारे विषयमें किस प्रकारकी संमति धारण करते होंगे ? प्रिय पाठको ! इसका यहां अवश्य विचार कीजिए । अपनी प्राचीन अष्टांगयोगपद्धति हमारे लिए हमारे रहने सहनेकी सुविधाके विचारसे बहुतही सुगम और बडी आरोग्यदायक है । न इसमें कोई व्यय करना पडता है, न इसमें किसी प्रकारका खतरा है । कई विचारी युरोपीयन और अमेरिकन लोगभी अब इसीको अपनाने लगे हैं । इतनाही नहीं प्रत्युत जो यूरप अमेरिकाकी नूतन आरोग्य पद्धतियां हैं, उनके बीज हमारे अष्टांगयोग पद्धतिमें विद्यमान हैं ।

अपनेपास जो आरोग्यसाधक योगपद्धति है, उसका उत्तम विचार करके तत्पश्चात् अन्य देशीय आरोग्यपद्धतियोंमें जो अनुकरणीय भाग होगा, उसका स्वीकार करनेमें कोई दोष नहीं; परंतु अपनी पद्धतिकी ओर ध्यान न देते हुए दूसरोंके पीछे नाचनेकी तैयारी करना बडाही हानिकारक प्रतीत होता है । अपना छोडकर जब हम दूसरेका स्वीकारने लगते हैं, तब हमको अपनाभी मिलता नहीं, और दूसरेका तो हमें पहिलेसेही अप्राप्त था । हमारे पूर्वजोंने बडे चातुर्यके साथ योगाभ्यासको हमारे जीवनमेंही मिलादेनेका प्रयत्न किया था और इसी लिए उपनयनके साथही आसन, प्राणायाम, ध्यान (संध्या) आदि योगांगोंको दैनिक अनुष्ठानमेंही संमिलित किया था । परंतु अब उपनयन एक जलसेके सदृश होने लगा है और सुशिक्षितोंमें प्राणायाम और ध्यानका नाम भी

न रहा !.! ! परंतु जिनका अनुकरण हमारे सुशिक्षित लोग कर रहे हैं, वे युरप अमेरिकाके सज्जन अब प्राणायामका महत्व जानने लगे हैं, और उसके अभ्यासमें बडी प्रगति कर रहे हैं। इसलिए हमारे लोगोंको अपनी " अष्टांग-योग-साधन-पद्धति " की ओर योग्य ध्यान देना चाहिये, और अपना आरोग्य बढानेके कार्यमें उसीका उपयोग करना चाहिये। इसविषयमें मैं अपना अनुभव संक्षेपसे यहां देता हूं।

यद्यपि मैं स्वयं अनपढ, ग्रामीण, तथा अशिक्षित हूं; तथापि मेरी अपनी कहानी आजकलके लोगोंको बडी बोधप्रद होगी, इस लिये मैं उसको यहां अतिसंक्षेपसे देता हूं।

" मैं जन्मसे रोगी, दुर्बल और क्षयीसा था। मेरा घराना प्राचीन परंपराकी रूढी माननेवाला था, छोटेसे पिंडमें रहनेके कारण मैं नवीन शिक्षासे अनभिज्ञ था। तथापि मेरे अन्य भाई बाहिर नगरोंमें जाकर पुरुषार्थ करके बडे विद्वान् और आंग्ल विद्यासे सुभूषित बने; परंतु व्याधिग्रस्त, दुर्बल आदि होनेके कारण मैं घरमेंही रहा और इस लिये अनपढही रहा। मेरे शिक्षित भाई तथा अन्य लोग भी मेरी वारंवार अप्रतिष्ठा करने लगे, वारंवार अपनी अप्रतिष्ठा होती है, यह देखकर मैं भी मनमें अत्यंत खिन्न और दुखी हो जाता था। परंतु करना क्या था !

" ग्राममें दुष्ट लोग थे उन्होंने अपने दुष्टभावसे प्रेरित होकर, मेरे शिक्षित भाइयोंमें और मेरेमें विद्वेष उत्पन्न कराया। इस

विद्वेषसे संभवतः उनका कुछ औरही हेतु था, परंतु मैं सावधान होनेके कारण उनका वह हेतु सफल न हुआ। मैं पहिलेसेही रोगी था और उसमें अधिक मूर्खताके कारण भंग पीने आदि व्यसन करने लगा। इन व्यसनोंके कारण शरीरमें नाना प्रकारकी बीमारियां बढ गईं, और बहुत क्लेश हुआ। बहुत वर्षोंके पश्चात् किसी महात्माके उपदेशसे भंगका व्यसन छोड दिया, तथापि जो रोग शरीरमें आ बसे थे, चले नहीं गये।

"विविध रोगोंसे अत्यंत कष्ट होनेके कारण वैद्य और डाक्टरोंके पास जाना पडता था। परंतु औषधोंसे क्षणमात्र गुण हो जाता था। कभी मुझे ऐसा नहीं हुआ कि, किसी वैद्की किसीभी औषधिसे पूर्णतया आरोग्य प्राप्त हुआ हो। वारंवार ऐसा हुआ करता था कि, इस औषधीसे गुण न हुआ तो दूसरी लेलो। इस डाक्टरसे अच्छा गुण न हुआ तो दूसरेके पास जाओ। इस प्रकार प्रतिसप्ताह नये वैद्य, नये डॉक्टर और नये औषध होनेके कारण कई सालोंके पश्चात् औषधोंपरसे मेरा विश्वास हटगया। पश्चात् होमियोपथीका इलाज प्रारंभ हुआ, परंतु कोई लाभ न हुआ। अंतमें डॉ. कुन्हेका जलचिकित्साका उपाय शुरू हुआ। इससे किंचित् लाभ प्रतीत हुआ। इसी इलाजको करते हुए मैं अपने एक मित्रके साथ लाहौर पहुंचा और वहां श्री. पं० विष्णु दिगंबरजीके "गांधर्व महाविद्यालय" में रहने लगा। श्री. पंडितजीकी

उदारताके कारण तथा गायनमें मन रमनेके कारण यहां मुझे बडा आनंद मिलने लगा। परंतु कुछ देरके पश्चात् मेरी बीमारी वैसीही मुझे क्लेश देने लगी। यह देखकर तथा पहिले भी पं. विष्णु दिगंबरजी मुझे कहतेही थे कि यह जलचिकित्साका उपाय ठीक नहीं है, इससे आपको बडे कष्ट भोगने पडेंगे। परंतु मेरा विश्वास जलचिकित्सापर बहुत था, इस लिये मैं पंडितजीके कहनेकी ओर विशेष ध्यान नहीं देता था। जल-चिकित्सासे मुझे बडा लाभ भी हुआथा, परंतु पूर्ण गुण प्राप्त नहीं हुआ था। इतनेमें एक दिन लाहौरमें भूंचाल हुआ। बडा जोरका यह भूंचाल था। बस, इस भूंचालके दिन ही मेरे अर्धांगमें विकार शुरू हुआ और थोडेही समयमें मेरा आधा शरीर चेतना रहित हुआ।

"मैं पंडितजीका मेहमान था, इसलिये पंडितजीने बडी कृपा करके अपने मित्रोंके द्वारा मुझे मेयो इस्पितालमें दाखल करदिया। पंडितजी तथा उनके सदय मित्रोंकी कृपाके कारण इस इस्पितालमें मेरा उपचार ठीक रीतिसे होने लगा। इस समयके युरोपीयन डाक्टर बड़े सज्जन थे और वे विशेष मेहनतसे मेरी चिकित्सा कर रहे थे। इस अर्धांग वायुकी बीमारीके कारण मेरा एक आंख बिलकुल बिगडा था, जिव्हाकी रस ग्रहण शक्ति चली गई थी, यहां तककी किना-ईनकी कडवाहट भी बिलकुल समझती नहीं थी। 'एक कान पूर्ण रीतिसे बंद हुआ था। हाथ और पांव बिलकुल शून्यसा

होगया था, तात्पर्य मेरी इस समयकी अवस्था बडीही परस्वाधीन और शोचनीय होगई थी।

" डाक्टर कहने लगे कि वायुकी गतिमें देरतक बैठनेसे अथवा किसी प्रकार मस्तिष्कमें आघात होनेसे यह पक्षघातकी बीमारी हो जाती है। यह डाक्टरोंकी राय थी। पं. विष्णु दिगंबरजी का मत था कि यह बीमारी जलचिकित्साके कारण जो शीतता शरीरमें उत्पन्न होगई, उसके कारण उत्पन्न हुई है। अस्तु। किसीभी कारण बीमारी उत्पन्न हुई हो, पहिली बीमारियोंमें और इस भयानक बीमारीके कारण एक संख्या बढगई और बडे कष्ट भोगने पडे। कई मास मैं इस इस्पितालमें रहा, किंचित्सा गुण हुआ, परंतु पूर्ण आरोग्य प्राप्त न हुआ। इस्पितालमें इतने मास रहनेके कारण मेरे मनकी अस्वस्थता बहुत हुई और मैंने बंबई जानेकी आज्ञा मांगी। डाक्टरोंने भी देखा कि, अब इसका सुधार होना कठिन है, इसलिये यह चला जायगा तो अछा है; ऐसा विचार करके उन्होंने मुझे बंबई जानेकी आज्ञा दी। पश्चात् एक मित्रकी सहाय्यताके साथ मैं उसी बीमार अवस्थामें बंबई पहुंच गया। घरमें जब मैं पहुंचा तब मेरा पहिलेसेभी अधिक उपहास हुआ, इसलिये कि अब और एक बडी भयानक बीमारी मेरे शरीरमें आघुसी है, और शरीरभी अत्यंत परस्वाधीन हुआ है। मेरे मित्रों और संबंधियोंका यह उपहास सुनकर मुझे अत्यंत खिन्नता हुई। किसी दवाइसे आराम

प्राप्त नहीं होता था और परिवारमें मेरा कोई उपयोगभी नहीं था, इस लिये सब मेरा अपमान कर रहे थे। यह अवस्था देखकर सच मुच मुझे बहुत क्लेश हुए। इतनेमें एक मेरे मित्र आगये और उनके द्वारा श्रीमान् योगी श्री पांडुरंग गंगाधर नामजोशी जीके साथ मेरा परिचय हुआ। ये स्वयं योगाभ्यासी हैं और योगविद्याके प्रचारके लिये बडा प्रयत्न करते और कईयोंको योगसाधन सिखातेभी हैं।

" इनके साथ परिचय होनेसे मैंने निश्चय किया कि सब अन्य उपाय छोडकर इस अष्टांगयोगमार्गका ही मैं अवलंबन करूंगा। परंतु मेरे मार्गमें बडे विघ्न थे, मेरी आयु बडी होगई थी पहिलेसे शरीर रोगी था, अर्धांग वायुके कारण आधा शरीर बधिरसा होगया था; इसलिये योगसाधन होना कठिन प्रतीत होता था। परंतु मेरे गुरुजीकी सुगम रीतिके कारण और मेरे निश्चयके कारण मेरा प्रवेश योगसाधनमें थोडा थोडा होगया। पहिले जो आसन अत्यंत असंभव प्रतीत होते थे, वेही दो तीन महिनोंमें मैं सुगमताके साथ करने लगा। प्राणायाममें भी मेरी थोडी गति होगई। धौती और बस्ति-विधी मैं अच्छी प्रकार करने लगा।

" इतना होनेके लिये कई महिने नियमपूर्वक अभ्यास मुझे करना पडा। पहिले जो शरीर बिलकुल हिलताही नहीं था, वही मेरा शरीर शनैः शनैः प्रत्येक आसन करने योग्य होने लगा। कई आसन करनेके लिये प्रथमतः मुझे अत्यंत कष्ट हुए,

परंतु मेरे गुरुजीने अनेक योजना करके मेरेसे वे आसन करवाये। आसनोंके अभ्याससे शरीरकी नसनाडियोंकी ऐसी शुद्धि हुई कि सब स्नायु उत्तम प्रकार कार्य करने लगे और थोडेसे महिनोंके निरंतर और नियमपूर्वक अभ्याससे मेरे शरीरमें योग्य परिवर्तन होकर मुझे यह निश्चय हुआ कि इस अष्टांग योगके साधनसे मैं निश्चयपूर्वक नीरोग हो जाऊंगा।

" विश्वास बढ जानेके कारण मेरा अभ्यास अधिक दृढता के साथ होने लगा, और जैसा जैसा अभ्यास बढता गया वैसा वैसा मुझे आरोग्यभी प्राप्त होता रहा। बालपनसे जो अनेक बीमारियां थी वह दूर होने लगीं, शरीर नीरोग और तेजस्वी होने लगा, अर्धांग वायुकी बीमारी जो बडे बडे डाक्टरोंके इलाजसे दूर नहीं होती थी, इस योगसाधनसे दूर होने लगी। और मुझे "नव-जीवन" प्राप्त हुआ। मेरे मित्र आनंदसे मुझे पूछने लगे कि " क्या आपका पहिला शरीर कहां गया ? और आपने यह शरीर कैसा प्राप्त किया !! " जो लोग पहिले मेरा उपहास करते थे वेही अब मेरी प्रशंसा करने लगे !!! मेरी नीरोगता देखकर गुरुजीको भी बडी प्रसन्नता हुई, और उनकी कृपासे मुझे ऐसा आरोग्य प्राप्त हुआ कि जैसा मुझे कभी जन्मभरमें प्राप्त नहीं था।

" यम नियमका साधारण पालन, आसनों का विशेष अभ्यास, प्राणायाम का योग्य अनुष्ठान तथा धारणा ध्यान-

पूर्वक साधारण उपासना करनेसे मुझे यह आरोग्य प्राप्त हुआ है। धौती तथा बस्ति करनेसे मेरे सब कोष्ठगत दोष दूर हुए हैं। त्राटक करनेसे मेरे नेत्रविकार दूर हो चुके हैं। अब इस समय यह अवस्था है कि मेरे शरीरकी ओर देखकर सब लोग आश्चर्यचकित होते हैं और कहते हैं कि देखो, यह कैसा था और अब योगसाधनसे कैसा बन गया है!"

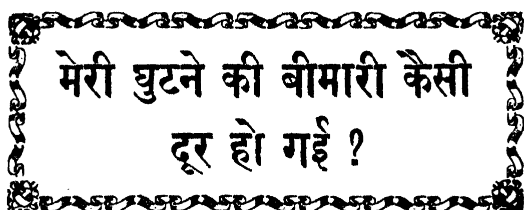
यह मेरा अनुभव है। इसलिये अब मेरा विश्वास योग-साधनपर पूर्णतासे है। मैं समझने लगा हूं कि अष्टांग योगके अनु-ष्ठानसे प्रत्येक मनुष्यका शरीर नीरोग, सुदृढ, और बलवान बन सकता है, और क्षयके समान भयानक बीमारीभी दूर हो सकती है। जो पहिलेसे नीरोग हैं उनको योगाभ्यास करनेसे कभी बीमारी हो नहीं सकती। प्रतिदिन घंटा आधा घंटा योगसाधन करनेसे ही उक्त लाभ हो सकते हैं। योग-साधन करनेके लिये किसी प्रकार उपकरणों और नानाविध साधनोंकी आवश्यकता नहीं है; शरीरको विविध कष्ट देनेकी जरूरत नहीं है, बहुत पदार्थ खानेकी जरूरत नहीं है, किसी अन्य देशमें जानेकी आवश्यकता नहीं है, अपने ही स्थानमें थोडे परिश्रमसे यह साधन हो सकता है तथा जितना साधन होगा उतना लाभ इससे होना संभव है। अर्थात् किया हुआ अनुष्ठान निष्फल नहीं होसकता।

इस योगका साधन करनेसे विना आयास आरोग्य प्राप्त होता है। डाक्टरोंके बिल देनेकी आवश्यकता नहीं है,

इस साधनसे शक्ति, बुद्धि और उत्साहकी वृद्धि होती है। प्रतिदिनके भोजनसे भी थोडा भोजन खानेसे अधिक बल प्राप्त होता है। इससे पैसा बचता है और शांतिका समाधान बढता है। इच्छा होनेपर ध्यान धारणा समाधितक मनुष्य जा सकता है, परंतु जिसको आगे बढनेकी इच्छा नहीं है, वह आसन प्राणायामके अभ्याससे अपना आरोग्य अवश्य बढावे।

यद्यपि यह योगसाधन प्रत्यक्ष लाभ देने वाला होनेके कारण इसके अनुष्ठानसे कोई हानि नहीं और लाभ बहुत हैं, तथापि कई लोग इसका उपहासभी करते रहते हैं, और जो योगसाधन करेगा उसकीभी निंदा करते हैं। परंतु साधन करनेवालोंको उनका विचार करना नहीं चाहिये। और अपने साधनमेंही दृढतासे प्रगति करनी चाहिये। यह शरीर पुरुषार्थ का साधन है। इसलिये इसको उत्तम अवस्थामें रखना अत्यंत आवश्यक है। इस शरीरको आरोग्य संपन्न रखनेके जो अनेक साधन हैं उनमें सबसे उत्तम यह योगसाधन है। स्त्री बच्चे और परिवार छोडकर इसके पीछे आनेकी आवश्यकता नहीं है। हर एक गृहस्थी इसका अनुष्ठान करके लाभ उठा सकता है। सुविचार से अपने इंद्रियोंका संयम करना चाहिये। ऐसा यदि हरएक स्त्री और पुरुष करेंगे, तो प्रत्येक कुटुंब अपूर्व शांति सुखका अनुभव कर सकता है।

मेरी अवस्थाका यह वृत्तांत इस समय बहुत मनुष्योंको मार्गदर्शक हो सकता है। आशा है कि विचारी सज्जन इससे योग्य बोध लेकर योगसाधनके मार्गमें आकर शांतिके भागी बनेंगे।



मेरी घुटने की बीमारी कैसी दूर हो गई ?

"आसनोंका विलक्षण प्रभाव।"

(लेखकः—श्री. गणेश शिवराम रानडे, उद्योगमंदिर,मुंबई.)

सन १९१५ के अप्रेल मासमें मैंने बायसिकलपर चढनेका अभ्यास किया। जब बायसिकल चलाना मुझे आगया, तब मैं अधिक प्रवीणता प्राप्त करनेके लिए समुद्रके किनारेपर, प्रतिदिन सबेरे बायसिकल लेकर जाता था और बहुत ही घूमता था। किसी दिन तो इस बायसिकल की सवारीसे मुझे इतनी थकावट हो जाती थी, कि उसका परिणाम पूरे दिनभर रहता था। इसी प्रकार ता. ५ मार्च के दिन मैंने हदसे अधिक बायसिकलकी सवारी की, जिसके कारण न केवल प्रतिदिनके समान थकावट ही हुई, परंतु घुटनेमें भयानक

बीमारी भी उत्पन्न हुई ! ! मुझे पूर्ण स्मरण है कि इस दिन मुझे शौचभी खुलकर नहीं हुआ था। उक्त परिश्रमके कारण दिनभर बेचैनी रही थी। किसी न किसी प्रकार दिन बीत गया, और सायंकालका भोजन करनेके लिये मैं तैयार होने लगा। इतनेमें ७, ७॥ बजे शौच जानेकी इच्छा हुई। मैं शौच गया, परंतु इस दिन विलक्षण कब्जी होनेके कारण शौच न हुआ। संपूर्ण शरीरसे बहुतही पसीना आ गया और थोडे समयमें बहुतही थकावट बढ गई। जब मैं उठने लगा तब घुटनेमें बडा दर्द हुआ। यही मेरी बीमारीका प्रारंभ है !

उसी अवस्थामें हाथपांव धोकर भोजन करनेकी इच्छासे भोजन करनेके लिये बैठ गया। परंतु इस दिन भोजन करने-का योगही नहीं था, क्यों कि बैठतेही सब शरीरमें इतनी खुजली प्रारंभ हुई कि, पांचही मिनिटोंमें मैं अपना संपूर्ण शरीर खुजलाते खुजलाते पागलसा होगया ! ! मुझेही स्वयं आश्चर्य होने लगा, कि यह मेरी कैसी अवस्था थोडेही समयमें बन गई ! ! ! और यदि इसी प्रकार अवस्था बदलती चली गई, तो और थोडे समयमें क्या होगा ?

और दोचार मिन्टोमें खुजलीका सहन करना असंभव हुआ ! जब सब शरीरभर खुजली हो जाये, तब केवल दो हाथोंसेही कितना खुजलाया जा सकता है ? इस प्रकार अवस्था बननेपर डाक्टरोंको बुलाया गया। पंद्रह मिनिटोंके अंदर डाक्टर आगये और चिकित्सा प्रारंभ होगई। बीमारीका नाम

" रक्त-पित्त " निश्चित किया गया और दवाईयां शुरू होगईं ! चूर्णे, गोलियां, और बोतलोंमें औषधोंके मिश्रण मेरे पास पहुंचे । इतनेमें मुझे बडी सर्दी लगने लगी और बडे जोरका बुखार आगया । मैं बिस्तरे पर सो गया, आधा घंटा तक मुझे थोडीसी निद्राभी आगई, पश्चात् जब जाग आई, तब मैं उठने लगा, तो प्रतीत हुआ कि मेरे घुटनेमें बडी सूजन होगई है, और इस लिये हिलना जुलना असंभव होगया है; तात्पर्य मेरे पांव अब मेरे शरीरके " साम्राज्य " में रहनेसे इन्कार करने लगे, और उन्होंने अपना अलग " स्वराज्य " जारी कर दिया है ?

इस प्रकार पावोंका अलग " स्वराज्य " स्थापित होनेसे, मेरी आज्ञा पालन करनेसे उन्होंने इन्कार कर दिया, और जो पांव कलही मेरे दास थे, वेही आज " स्वतंत्र " होनेके कारण, मैं ही उनका दास बन गया ! सम्राटोंका वैभव कितना क्षणभंगुर है, और प्रजाकी अनुमतिका कितना महत्व है, इसका ज्ञान इस प्रकार मुझे प्राप्त हुआ । आत्मा सम्राट् है और शरीर के सब अवयव उसके आश्रित देश (Dependencies) हैं, परंतु जिस समय कोई आश्रित देश अपने निश्चयके बलसे अपनी संघशक्ति द्वारा " स्वतंत्र स्वराज्य " की स्थापना करेंगे, उस समय बडा शक्तिशाली सम्राट् भी बिचारा क्या कर सकेगा ? जो मैं कलही इन्ही पावोंको बायसिकल चलाने में लगाता था, और उनके आराम की पर्वाह न करता हुआ

उनसे जितना चाहे उतना काम लेता था; वही मैं आज उनका दास होकर बिस्तरे पर पडा हूं! पांव हिलता भी नहीं था, उठना असंभव होगया, इतनाही नहीं प्रत्युत कलवट लेनाभी दूसरेकी सहायता के विना अशक्य होगया!

यह अवस्थान्तर इतना शीघ्र होगया कि, मुझे यह सब स्वप्नवत् ही प्रतीत होने लगा! जो लोग मुझे देखनेके लिये आते थे, वे भी कहते थे कि, अब यह पांव और घुटना सुधर जाना कठिन है। दूसरे दिन फिर डाक्टर आगये और उन्होंने सब हाल देख लिया और कहा कि यह "घुटनेकी बीमारी" है। यह बीमारी महाराष्ट्र राज्यके संस्थापक वीरशिरोमणी अतुलप्रतापी श्री शिवाजी महाराजको हुई थी, और इसी बीमारी के कारण उनका देहान्त होगया था! श्री शिवाजी महाराज जैसे पवित्र सत्पुरुषके देहका स्पर्श होनेके कारण यह बीमारी भी पवित्र ही बनगई थी, इसलिये मुझे कोई घबराहट नहीं हुई, यद्यपि मेरे मित्र घबराने लगे थे। मेरी समझमें नहीं आता कि, किसी बीमारीको लोग क्यों घबराते हैं? मेरी समझमें अंतिम समय में भी धैर्य और धर्मपर विश्वास ही सच्चा सहाय्यकारी होता है और जहां यह विश्वास होगा वहां घबराहट आवेगी ही नहीं।

दिन बीतते गये और वैद्यों तथा डाक्टरोंके उपाय होते रहे। इसके अतिरिक्त इष्टमित्रोंके भी उपाय बीच बीचमें चलते रहे। औषधि बनस्पतियोंकी मूलियां, जडें, दवाइयां, कषाय, लेप

और अनेक रीतिके उपचार करते रहे। इस सब प्रयत्नसे मेरा यही मत बना कि, यद्यपि इष्टमित्र शुभ इच्छासेही उपाय करते हैं, तथापि उनके प्रयत्नसे बीमारके कष्ट बढ जाते हैं; तथा वैद्यों और डाक्टरोंके प्रयत्न भी ठीक मार्गसे नहीं होते। तथापि बीमारको उनके वशमें रह करही कष्ट भोगने पडते हैं। इसी प्रकार पहिले आठ दिन तक सेक और लेप होता रहा परंतु कोई आराम नहीं हुआ।

इसके पश्चात् बडेबडे डाक्टरोंकी कमिटी बुलाइ गई, उन्होंसे सब देख भालकर दवाईकी योजना निश्चित की, और कहा कि केवल दूधपरहि रहो और कोई अन्न न खाओ। इस प्रकार उनकी दवाका सेवन शुरू हुआ, अन्न छोड दिया और केवल थोडासा दूधही सेवन करने लगा। तथा पांवका हिलाना डाक्टरोंने बंद किया और उन्होंने ही "स्कॉट्स् ड्रेसिंग" से पांव बांधकर रख दिया! डाक्टरोंने कहा कि पांव हिलानेसे बीमारी बढ जायगी, घुटनेमें पानी होगया है। इस लिये इसको हिलाना नहीं चाहिये। यदि इस प्रकार बीमारी दूर न हुई तो (tap करके) पानी निकाल देंगे, कोई फिक्र न करो।

इस प्रकार एक महिना हो चुका, दर्द कम होगया, परंतु सूजन कम नहीं हुई। फिर डाक्टरोंकी कमिटी हुई; बडा विचार हो कर निश्चय हुआ कि लकडीके फट्टीपर पांव बांध-कर रखना और उसको बिलकुल हिलाना नहीं और पंद्रह

दिनके पश्चात् फिर विचार करना। इस प्रकार होता रहा परंतु कोई गुण नहीं हुआ।

इस समय मेरी अवस्था बहुतही बुरी होगई थी। पेटमें अन्न नहीं, बडी तेज और उष्ण दवाइयां पेटमें जाती थीं, इस लिये उष्णता बहुत बढ गई थी, प्रतिदिन थोडा ज्वर आता था, निद्रा नहीं आती थी, सदा लेटे रहनेके कारण शरीर बढा दर्द करता था, और इतने कष्टोंकी पूर्णता करनेके लिये बवासीरकी बीमारी भी प्रारंभ हुई! उठना बैठना अशक्य हो गया था। बवासीरके कारण बडे कष्ट होने लगे, गुदद्वार में बडा दर्द होने और शौचद्वारसे रक्तस्राव होने लगा, इस लिये बस्ति विधि द्वारा जलप्रयोगसे शौच करानेकी आवश्य-कता होगई। इससे बवासीरका कष्ट किंचित् कम होने लगा।

इस घुटनेकी बीमारी का अंग्रेजी नाम " सायनो व्हाइटिस " है। इसमें घुटनेमें जल अथवा द्रवरस बनता है और संधिस्थानमें बडा सूजन होता है। कई महिने गुजर जानेपर भी डाक्टरोंके इलाजसे कोइ आराम न हुआ। इसलिये डाक्टरोंने मेरे रक्त की परीक्षा की, उसमें (टयूबरक्युलर सायनो व्हाइटिस्) घुटने की बीमारीके यक्ष्म कृति हैं ऐसा निश्चय हुआ। प्रत्यक्ष बीमारीकी अपेक्षा रोगोंके नाम सुनकर भी बीमार घबरा जाता है इसी प्रकार इस नाममें (tubercular) राजयक्ष्माका नाम सुनकर कई मेरे मित्र घबरा गये! परंतु मेरा धैर्य कायम रहा था। रोगोंके नाम सुनकर घरके आदमी और इष्ट मित्र

घबरा जाते हैं उनकी घबराहट का परिणाम बीमार पर होता है, और यदि बीमार कमजोर हुआ, तो इस लोक को छोड-नेकी तैयारीमें लगता है ! ! बीमारीकी अपेक्षा आदमी घब-राहटके कारण अर्थात् मनकी कमजोरीके कारणही शीघ्र मर जाते हैं । परंतु मैं ऐसा घबराने वाला नहीं था । मैं अपने मनको स्वाधीन कर धैर्यरूप हो कर बैठा था । इसलिये घब-राहट मेरे पास नहीं आती थी । मैं परमेश्वरपर दृढ विश्वास करके उसीका नामस्मरण करता रहता था, इसलिये मेरा मन शांत और अचल रहा था ।

इस प्रकार चार पांच महिने हो गये । डाक्टरोंके उपचा-रोंसे किसी प्रकारभी आराम नहीं हुआ ! तीक्ष्ण दवाईयोंके कारण बडी कष्टदायक बवासीर होगई, अन्य कष्टभी बढने लगे, इस कारण डाक्टरोंके औषधों पर से मेरा विश्वास हट गया । और मैने उनके उपचार बंद करनेका विचार किया । इतनेमें " होम्योपथी " के डॉक्टर मिलगये, उनके औषध सेवन करनेके लिये अच्छे होनेके कारण, उनका इलाज प्रारंभ हुआ । परंतु पंद्रह दिन तक औषध लेनेपर भी कोई लाभ नहीं हुआ । तत्पश्चात् " बायो केमिक " औषध लिया परंतु वह भी मेरे लिये निकम्मा सिद्ध हुआ ! इस प्रकार छः मास व्यतीत हुए । जो पांव डाक्टरोंने फट्टियोंमें बांध कर रखा था वह, हिलना बंद होनेके कारण, बारीक होगया है और सूखने लगा है, ऐसा मेरे ध्यानमें आगया; यह एक नवीन आपत्ति

शुरू हुई ! यदि इस प्रकार पांव सूख गया, तो आगे कैसा होगा यह विचार मुझे सताने लगा ।

इतनेमें दूसरे पांव की जंघामें एक ग्रंथीसी उत्पन्न हो गई । बहुत दिन वह दूखती नहीं थी, परंतु प्रति दिन थोडी थोडी बढ जाती थी । अंतमें १५।२० दिनोंमें केलेसे बडी हो गई । यह एक नवीन आपत्ति आगई । इसका उपाय सोचनेके लिये फिर भी डाक्टरोंकी शरण लेनी पडी !!! डाक्टर आगये और उन्होंने परीक्षा करके कहा कि यह (Tubercular gland) यक्ष्मग्रंथी है । इस लिये इसके रक्तसे (otto cerum) स्वरस औषधि बनाकर, उसका प्रवेश पिचकारिसे खूनमें कराकर सब बिमारीको हटा देंगे । किसी कारण ७।८ दिन डाक्टर न आसके, इतने समयमें उक्त ग्रंथी पक गई, और एक दिन उसमेंसे बडा सारा पीप निकल आया । इसके पश्चात् डाक्टर आगये, परंतु अब उनका आना व्यर्थ होगया, क्यों कि वहां ग्रंथी रही नहीं थी । रात्रिके समय जब मैं यह व्रण धोने लगा उस समय उसमेंसे एक बारीक धागेके समान बडा लंबा कृमी, (जिसको मराठी भाषामें नारू कहते हैं) निकल आया । ठीक इसी समय मेरी धर्मपत्नी प्रसूत होकर लडकी होगई ! मेरे व्रणसे कृमीका निकलना और पुत्रीका जन्म होना ठीक ही एक समय हुआ और इसी समयसे मेरे कष्ट कम होने लगे । कई कहेंगे कि एक दूसरेका कोई संबंध नहीं है । संबंध हो या न हो, मेरा अनुभव जो है यह मेरे लिए सत्यही है ।

वास्तवमें इस ग्रंथीका और घुटनेकी बीमारीका कोई संबंध न था, परंतु डाक्टरोंकी परीक्षामें दोनोंका एकही मूल कारण था और इसी विश्वाससे डॉक्टरोंने निश्चय किया था कि इसका स्वरसौषध बनाकर रोगको हटा देंगे ! परंतु यह सब डाक्टरोंका भ्रम सिद्ध हुआ। जिस दिन उक्त ग्रंथी पक कर सब पीप निकल गया उस दिनसे प्रतिदिनका ज्वर हटने लगा, और एक दो दिनके पश्चात् थोडासा आने लगा। ग्रंथीमेंसे एक लंबा कृमि निकल गया, तथापि उसमें और भी वैसे कृमि होंगे ऐसा प्रतीत होने लगा। (Alopathy) डॉक्टरीमें इस प्रकारके कृमि विकारपर कोई इलाज नहीं है, और इसी कारण उनकी परीक्षा भी गलत सिद्ध हुई। इस अवस्थामें अब क्या करना ? यह विचार मेरे मनमें खडा रहा।

मेरे मित्रोंने कहा कि ग्रामीण वैदू लोग यद्यपि अनपढ होते हैं तथापि इन कृमियोंको निकालनेमें प्रवीण होते हैं। मैंने उनको बुलाया। उन्होंने अजब रीतिसे कृमियोंको निकालना शुरू किया। कई कृमि उन्होंने डॉक्टरोंके सामनेही मेरी जंघाकी ग्रंथिसे निकाल दिये। अस्तु। इस रीतिसे यह ग्रंथीका प्रकरण समाप्त हुआ परंतु घुटनेकी बिमारी वैसी ही थी।

घुटनेकी पीडा के कारण मैं इतने महिने बिस्तरेपर ही लेट रहा था। पेटमें पूरा भोजन नहीं था, व्यायाम न होनेके कारण पचन शक्ति खराब हो गयी थी, मेरा शरीर अत्यंत क्षीण हो रहा था, मेरा काम धंदा मेरी अनुपस्थितीके कारण कम हुआ

था, मेरी निर्धनता यहांतक बढ गई थी कि डाक्टरोंकी फीज देनेके लिये भी मेरे पास पैसे नहीं थे, ऐसे कठिन प्रसंगमें बीमारी ऐसी अवस्थामें पहुंच चुकी थी कि कोई चिकित्सा होनेकी संभावना भी प्रतीत नहीं होती थी। प्रतिदिन निराशा का पटल बढ रहा था और आशा का आधार न्यून हो रहा था । बडे बडे डाक्टरोंकी चिकित्सा निकम्मी सिद्ध हुई थी, और कोई अच्छा चिकित्सक मिलना असंभव हो गया था ।

ऐसी अवस्था होनेके बाद मेरे मित्रोंने कहा कि अब तुम बंबई छोडकर किसी अन्य स्थानमें जाकर रहो और प्रकृतिके आराम का विचार करो । परंतु मेरा विचार बंबईमें ही रहने का था । इस लिये कि यहां ही सबसे अछी चिकित्सा होना संभव है, और मेरे मनमें अभीतक किसी प्रकारकी भीति उत्पन्न नहीं हुई थी । इस कारण मैंने अपने मित्रोंको नाराज करके बंबईमें ही स्थिर रहनेका निश्चय किया ।

इस प्रकार कई दिन व्यतीत हुए, परंतु कोई आराम का चिन्ह दिखाई नहीं दिया । बैठे बैठे मेरी क्षीणता बढ गई थी और पचन शक्ति बहुत ही कम हुई थी, इसका कुछ उपाय करना चाहिये ऐसा विचार मनमें आया । डाक्टरोंका कथन था कि हिलना नहीं, इस लिये विना हिले जुले किस रीतिसे व्यायाम किया जा सकता है इसका मैं विचार करने लगा । विचार करते करते " प्राणायाम " करनेसे व्यायाम

होगा, ऐसी एक कल्पना मनमें आगई इतनेमें एक मेरे मित्रके द्वारा म० नामजोशीजीके साथ मेरा परिचय हुआ । ये महाशय बडे सज्जन और योगाभ्यासी हैं। इन्होंने आकर प्रेमदृष्टिसे मेरी अवस्था अवलोकन की और सरल शब्दोंमें कहा कि "देखिये, कि मैं कोई वैद्य अथवा डाक्टर नहीं हूं । न मुझे शारीरशास्त्रका ज्ञान है परंतु मैं थोडासा योगाभ्यास करता हूं और आसन प्राणायाम का किंचित् ज्ञान मुझे है । इस योगशास्त्रके विज्ञानके अनुसार जो उपाय मुझे सूझेगा, मैं करूंगा। परंतु मैं आपसे एक निवेदन अवश्य करूंगा कि, जैसा आपने गुण न होनेपर भी डाक्टरोंके मतके अनुकूल पथ्य किया, उसीप्रकार श्रद्धा भक्ति पूर्वक मेरे कथनके अनुसार बर्ताव अवश्य करना चाहिये।" मुझे यह संमत हुआ क्यों कि सहस्रों रुपयोंका व्यय करके डाक्टरोंके इलाजसे ५, ७ महिनोंमें कोई लाभ नहीं हुआ था, इस लिये डाक्टरी इलाज छोडनाही मुझे मंजूर था। इस तरह "योगसाधन" के साथ मेरा प्रथम परिचय हुआ।

डाक्टर कहते थे कि पांव अवश्य हिलाना नहीं चाहिये, परंतु ये योगीराज कहने लगे कि पांव अवश्य हिलाना चाहिये। दोनोंके इलाजमें इतना विरोध था ! ! ! अर्थात् मुझे डाक्टरोंकी पट्टियां खोलकर अलग रखनी पडीं और पांवोंको हिलानेका प्रारंभ हुआ। हिलाना कठिन प्रतीत हुआ। पहिले पहिले पांव बिलकुल हिलता नहीं था, क्यों कि इतने मास तक उसको बिलकुल

हिलाया नहीं था। पांवको प्रथम हाथसे ऊपर उठाने और नीचे रखनेका कुछ प्रयत्न किया। दो तीन दिनोंमें योगी महोदयजीकी सहायतासे "शिर्षासन" करनेका प्रयत्न किया। इस आसनके करनेके समय मेरे पांवमें बडाही दर्द हुआ और मेरे सहायकों को भी मेरा शरीर संभालनेमें बडे कष्ट हुए। पश्चात् एरंडीके तेलकी मालिश करके आकके पत्तोंसे सेक दिया। इस प्रकार चार दिन किया। पांचवे दिन विना किसीके आधारके मैं कुछ देर तक "शीर्षासन" में स्थिर रहा। आगे यह अभ्यास बढाते बढाते पंद्रह दिनोंमेंही मैं आधा घंटातक शीर्षासन करने लगा। प्रारंभ में दर्द होता था, परंतु प्रतिदिनके अभ्याससे शनैः शनैः दर्द हटता गया, और मुझे स्वास्थ्य प्राप्त होता रहा।

आसनोंके अभ्यास करनेसे केवल आठ दिनोंमेंही मैं सोटी की सहायतासे कुछ न कुछ चलने लगा। आसनोंका अभ्यास करनेसे योग साधनपर मेरा विश्वास दृढ होता गया, क्यों कि इसी चिकित्सासे लाभभी अत्यंत शीघ्रही हुआ। इसलिए मैंने आसनोंका अभ्यास बढाया और दस दिनके पश्चात् सोटीकी सहायताके विनाही मैं चलनेमें समर्थ हुआ। चलनेके समय कष्ट होते थे, शामके समय सूजनभी बढ जाती थी, दर्दभी होता था, परंतु मैं योगी महाशयजीके कथनके अनुसार ही करता रहा। आसन करना और सेक देना इसके विना और कोई इलाज नहीं था और उससे प्रतिदिन आरोग्यभी बढ रहा था।

इतना होने परभी घुटनेका संधि सख्त ही था, अभी तक जैसा चाहिये वैसा हिलता नहीं था । ५,६ दिन लगातार प्रयत्न करनेपर उसमें किंचित् सी गती उत्पन्न हुई । मैं अब अपने मनकी " इच्छा शक्ति " को भी काममें लाने लगा, और मुझे अनुभव हुआ कि उससे बडाही लाभ होता है ।

इस प्रकार आसनोंकी चिकित्सासे केवल दो महिनोंमें मुझे पूर्ववत् आरोग्य प्राप्त हुआ । मैं जब डाक्टरोंके दवाखानेमें पहिले गया, उस समय डाक्टर साहेबकोभी बडा आश्चर्य हुआ, कि इतना आराम कैसा हुआ । उनके पूछनेपर उनसे कहा कि यह सब " योगके आसनों " का चमत्कार है । यह आसनोंके विषयमें मेरा स्वयं अनुभव है । इस उपचारमें कोई व्यय नहीं और शीघ्र आरोग्य होता है । डॉक्टरोंके इलाजमें हजारों रु. खर्च हुए और किसी प्रकारका आराम नहीं मिला । इस योगासनोंके इलाजमें कोई व्यय नहीं और आराम शीघ्र प्राप्त हुआ ।

इन आसनोंपर मेरा अब इतना विश्वास है कि मैं आजकल सवेरे उठनेके पश्चात शौचादिसे निवृत्त होते ही थोडी देर शीर्षासन करता हूं और पश्चात् दूसरे कार्य करता हूं । आशा है कि जनताको भी योगाभ्याससे इसी प्रकार लाभ होगा ।

नीरोग अवस्थामें आसनोंसे लाभ।

(लेखक-श्री नागेश वासुदेव गुणाजी B. A. LL., B.)
(चीफ आफिसर सिटी म्युनिसीपालिटी बेलगांव.)

गत लेखमें श्रीयुत ग. शि. रानडे महोदयजीने आसनोंके विषयमें अपना अनुभव दिया है । आसनोंके प्रभावसे उनकी 'घुटनेकी बीमारी' दूर हो गई । यह अनुभव स्पष्टतासे बता रहा है, कि आसनोंका प्रभाव कितना विलक्षण है। उक्त महाशयजीका अनुभव रोगी अवस्थाका है । अब मैं जो अपना अनुभव बता रहा हूं वह नीरोग अवस्थाका है। यदि रोगी अवस्थामें आसनोंसे रोग दूर हो सकते हैं, तो नीरोग अवस्थामें आसनोंसे अपूर्व आरोग्य भी प्राप्त हो सकता है। इस लिये मेरा अनुभवभी पाठकोंको बडा बोधप्रद हो सकता है। इसलिये जैसे रोगी वैसे नीरोगी पाठकभी इसका विचार करें।

मेरे मातापिता सदाचारी, निर्व्यसनी, और सुदृढ थे, इसलिये उनकी कृपासे मुझेभी उत्तम नीरोग शरीर प्राप्त हुआ, बचपनमें माताका विपुल दुग्ध मुझे बहुत दिनतक प्राप्त होनेसे मेरी शरीरसंपत्ति छोटी उम्रसेही बडीही

अछी थी । मेरे माता पिता मेरे लिये सुदृढ शरीर न देते हुए यदि विपुल धन देते, तो उससे मुझे जितना लाभ होना संभव था; उससे कई गुणा अधिक लाभ, उनसे प्राप्त हुए आरोग्यपूर्ण सुदृढ शरीरसे मुझे हुआ, और इसी कारण मैं अनेक बिकट अवस्थाओंमें तथा कष्टमय परिस्थितिमें धैर्यके साथ अपना कार्य चला सका । तात्पर्य यह कि माता-पिता अपने बच्चोंके लिए चाहे धन न छोडें, परंतु आरोग्य-पूर्ण बलवान शरीर अवश्य अर्पण करें । वीर्यकी निर्दोषता और निरोगताकी ओर जनता विशेष ध्यान दे, यही कहनेका मेरा यहां हेतु है । जैसा रजवीर्यसे निर्दोष और नीरोग शरीर बलवान हो सकता है वैसा रजवीर्यके दोषोंसे दूषित शरीर नहीं हो सकता, इसका कारण स्पष्टही है । अस्तु ।

छोटी आयुसेही मुझे विविध व्यायाम करनेका शौक था । छोटेपनमेंही मैं अनेक प्रकारके खेलकूदके तथा सर्कसके विविध प्रकार करता था । आयु थोडी बडी होनेपर मैं मलखांब, दंड, बैठक आदि देसी व्यायाम करने लगा । कुछ समय व्यतीत होनेपर मैं एक पहिलवानके आखाडेमें दाखल हुआ । वहां नित्य मैं पांच सौ दंड, एक हजार बैठक और अनेक मित्रोंके साथ कुस्ती करता था । यह अभ्यास कई वर्षतक लगातार और निरंतर चलता रहा । तथा मैं नित्य प्रातःकाल में दौड करनेके लिये भी जाता था । इस प्रकार व्यायाम करके मेरा शरीर बडा सुडौल बन रहा था ।

मराठी प्राथमिक अभ्यास संपूर्ण होनेके पश्चात् मैं बेलगांवमें "सर्दार्स हैस्कुल" में अंग्रेजी पढनेके लिए दाखल हुआ। वहां मि. हुग्वर्फ साहिब हैडमास्टर थे, मलखांबका काम करनेकी मेरी कुशलता देखकर, तथा अन्य व्यायाम करनेकी मेरी प्रवीणता देख कर वे मेरे साथ बडा प्रेम करने लगे थे। परंतु अंग्रेजी अभ्यास जैसा जैसा बढता गया वैसा वैसा देसी व्यायाम बंद होता गया और उनके स्थानमें डंबेल्स, सिंगल तथा डबल बार आदि विदेशी व्यायाम शुरू हुए। इस प्रकार देसी व्यायामकी रुची कम होकर विदेशीकी ओर रुची बढ गई।

देसी रीतिके व्यायामसे शरीर सुडौल बनता है, परंतु व्यायाम छोड देनेपर स्थूल और शिथिलसा होने लगता है। वही मेरी अवस्था हुई। अति व्यायामके कारण हाथ और पांवके संधि कमजोर होगये थे, इसलिये सिंगल और डबल बार करनेके समय पांव सीधे रखना भी मेरे लिए कठिन होता था। तथापि नित्य अभ्यास करनेसे यह संधिस्थानकी कमजोरी कुछ समयके पश्चात् दूर हो गई। देसी व्यायामोंमें कुस्ती ही एक ऐसी है कि, जिसके करनेसे आगे शरीरकी शिथिलता वैसी नहीं होती, जैसी कि इतर व्यायामोंसे होती है।

दंड, बैठक, नमस्कार आदि देसी व्यायाम करनेवालोंके लिये एक सूचना मैं यहां करना चाहता हूं, देसी व्यायाम

करनेवाले उसका अवश्य विचार करें। जो व्यायाम करना है वह "कितनी वार" करता हूं इसका विचार करनेकी अपेक्षा "किस रीतिसे" कर रहा हूं इसका विचार हरएकको करना योग्य है। यदि कोई व्यायाम अशुद्ध रीतिसे करनेकी आदत हुई, तो जितनीवार वह व्यायाम किया जायगा उतनी अधिक अशुद्धियांही बढ जायगीं। मान लीजिये कि आप प्रतिदिन दो तीन सौ दंड अशुद्ध रीतिसे निकाल रहे हैं, तो उसका यही तात्पर्य है कि, दो तीन सौ गलतियां आप प्रतिदिन कर रहे हैं। जबतक तारुण्यका रक्त शरीरमें रहेगा, तबतक आपको पता नहीं लगेगा, परंतु शक्ति क्षीण होनेपर उन गलतियोंका परिणाम आपको अवश्यही भोगना पडेगा। इसलिये हरएक व्यायाम विधिपूर्वक ही करनेका यत्न प्रत्येकको करना उचित है।

अंग्रेजीके अभ्यासके साथ साथ ही मैं विदेशी व्यायाम करता था और मुझे उसमें बहुतही प्राविण्य प्राप्त हुआ था। जब मैं बेलगांव से मुंबई चला गया और विलसन कालेजमें दाखल हुआ, तब मैं सर दिनशा मा. पेटिटके सरकारी व्यायामशालामें प्रविष्ट हुआ। प्रवेशके लिए डाक्टरका सारटिफिकिट आवश्यक होता है, परंतु मेरा शरीर अत्यंत उत्तम था, इसलिए मेरा प्रवेश सुगमतापूर्वक हुआ। दो वर्षके पश्चात् व्यायाम की परीक्षामें मैं न केवल उत्तीर्ण हुआ परंतु मुझे उत्तम व्यायाम करनेके कारण "चाँद" भी बक्षीस मिला।

इसके पश्चात बी. ए. और एल्. एल्. बी. के अभ्यास करनेके समय मैं सेंडोके तथा मूलरके व्यायाम करने लगा। इस समय मेरा आरोग्य बहुतही उत्तम था और इसी कारण मेरा अभ्यास उत्तम होता था और मेरी परीक्षाएं भी विना आयास हो जाती थीं। इस प्रकार शरीर स्वास्थ्यके साथ ही मेरी एल्, एल्, बी की परीक्षा उत्तीर्ण होगई।

इस समय सरकारी–शिक्षा–विभागके अधिकारी मि. चाट-फिल्ड थे। वे जब बेलगांव आये थे, उस समय मैंने अपने व्यायाम उनको करके बताये, तब उन्होंने संतुष्ट होकर कहा कि, "बी. ए. परीक्षामें उत्तीर्ण और व्यायामशास्त्रमें भी इतना प्रवीण ऐसा जवान मैंने अपनी संपूर्ण आयुमें यही एक देखा।"

इसके पश्चात् मैंने बेलगांवमें वकालत करना प्रारंभ किया और साथ साथ दांडपट्टा, लाठी, तथा जापानी जूजुत्सु आदिका भी मैंने पर्याप्त अभ्यास किया। इस समय मैं प्रति-दिन प्रातःकाल ४।५ मील दौड करता था। यह व्यायाम मैंने ७।८ वर्ष लगातार किया।

जन्मसे उत्तम शरीर, पश्चात् इतना नियमपूर्वक व्यायाम करनेपर भी चालीस वर्षकी ऊमर होनेके पश्चात् मेरा शरीर गिरने लगा। देसी, विदेशी, जापानी तथा इतर व्यायाम कर-नेमें जो जो अशुद्धियां मैंने की थीं, उनका फल मुझे अब मिलने लगा!!

विदेशी व्यायामोंके कारण मेरे शरीरका लचीलापन नष्ट होचुका था; और पीठ, कंधे, बाहू आदि भाग कि जिनपर विदेशी व्यायामके कारण बहुत कार्य पडा था, वे भाग अब दूखने लगे और बडा कष्ट हुआ। यह विदेशी व्यायामोंका अनिष्ट परिणाम है, पाठक इसका विचार करें।

इस अवस्थामें मेरे मित्र श्रीयुत वे. कृष्णराव इंजिनियरकी, मुझे बडी सहायता हुई। इन्होंने "आसनों" और मालिशोंके व्यायामोंके विषयमें बडा परिश्रम किया है और इस विषयमें ये बडे अनुभवी हैं। इन के कहनेके अनुसार मैं 'आसनों' का अभ्यास शुरू किया, उनके साथही मैं सुगम आसन करने लगा।

इस समय मेरे शरीरमें मेद बहुत बढ गया था। यद्यपि व्यायाम करनेसे बहुत बढने नहीं पाया था, तथापि शरीरमें दर्द शुरू होने योग्य बढ गया था। किसी भी अन्य देसी विदेसी जापानी तथा अन्य व्यायामोंसे मेरा मेदका विकार कम नहीं हुआ। जैसा जैसा मैंने आसनोंका अभ्यास शुरू किया, वैसा वैसा मेरा मेद कम होता गया। प्रथम अवस्थामें मेरेसे सुगम आसन भी नहीं होते थे, परंतु प्रतिदिन नियमपूर्वक प्रयत्न करनेपर चार मासमें सुगम आसन करने योग्य मेरा शरीर बन गया और पश्चात् योगके अन्य आसन करनेसेही मेरा मेद दूर होगया। और जो शरीरके अवयवोंमें दर्द होता था, वह भी मेदके साथ ही दूर होगया।

आसनोंके व्यायाम का ऐसा अनुभव आनेसे अब मेरा ध्यान आसनोंकी व्यायाम पद्धतिकी ओर हो गया। सब आसनोंका शास्त्रीय रीतिसे विधिपूर्वक व्यायाम स्वयं किया और बहुतोंको आसन सिखाये। बहुत विचार करके आसनोंके अंदर जो तत्व है उसका पता लगाया और उस तत्वके अनुसार आज कलके लोगोंको प्रतिदिन करने योग्य "आसनोंके व्यायाम की नूतन पद्धति" तैयार की। इस पद्धतिके अनुसार स्वयं व्यायाम किया और अनेकोंके शरीरोंपर भी इसका परिणाम ध्यानपूर्वक देखा, जिससे निश्चय हुआ कि इस "आसनोंके व्यायाम" से शरीरके सबदोष दूर होते हैं और रोग भाग जाते हैं, इसमें कोई संदेहही नहीं है। मैंने सब प्रकारके देसी विदेसी व्यायाम किये हैं, सब व्यायामोंके गुण और दोष मुझे स्वयं पता है। इसलिये मैं कहता हूं कि शरीरकी नस नाडीकी शुद्धता करनेके लिए, शरीर निर्दोष और नीरोग करनेके लिए, जैसी हमारी आसनोंका व्यायाम करनेकी पद्धति निश्चयसे उपयोगी है, वैसी कोईभी अन्य व्यायामकी रीति नहीं है।

तथापि केवल "आसन" करनेसे शरीरमें फूर्ति, उत्साह, ओज और बलकी वृद्धि नहीं हो सकती। शरीर निर्दोष करना हीं आसनोंका मुख्य प्रयोजन है। इसलिये आसनोंके साथ उत्साहवर्धक व्यायाम अवश्य करने चाहिये।

इन सब बातोंका विचार करके जो व्यायाम पद्धति अब मैंने निश्चित की है वह निम्न प्रकार है—

(१) नसनाडियोंकी शुद्धि करनेवाले सुगम आसनोंके व्यायाम—इससे अन्य व्यायामोंकी गलतियोंके कारण अथवा अन्य हेतुसे उत्पन्न होनेवाले सब दोष दूर हो सकते हैं। (Stretching exercises)

(२) प्राणायामके व्यायाम—इन व्यायामोंसे फेंफडे हृदय आदि मुख्य अवयवों का आरोग्य प्राप्त होता है। (Breathing exercises)

(३) उत्साहवर्धक व्यामाम—शरीरमें फूर्ति, उत्साह, उत्तेजना आदि उत्पन्न करनेके लिए उत्साहवर्धक व्यायाम। (Active exercises)

(४) बलवर्धक व्यायाम—शरीरका बल बढाने के लिये प्रतिरोधक व्यायाम। (Resistant Exercises)

हमारी व्यायामपद्धतिकी यह "चतुःसूत्री" है इसमें योगके "आसन और प्राणायाम" हैं और साथ साथ अन्य व्यायामोंके विशेष भाग भी हैं। इस प्रकार नियमपूर्वक ३।४ मास व्यायाम करनेसे शरीर नीरोग, उत्साहपूर्ण, ओजस्वी और फूर्तियुक्त निःसंदेह हो जाता है। तरुण विद्यार्थीयोंको उचित है कि वे इस पद्धतिसे अवश्य लाभ उठावें। अन्य देसी विदेसी व्यायामोंके दोष इसमें नहीं हैं और आसन प्राणायामोंके पूर्ण गुण इसमें हैं।

अब एक बातका अवश्य उल्लेख यहां करना है। वह यहं कि एक समय ऐसा हुआ कि किसी कारण विशेष लगातार कई मास मैंने कोई व्यायाम नहीं किया, जिससे शरीरमें फिर मेद् बढने लगा। तथापि उसकी ओर मेरा ध्यान नहीं गया था। इतनेमें एक योगीके साथ मेरा परिचय हुआ। उनको मैंने अपने चतुर्विध व्यायाम बताये। उन्होंने कहा कि ये व्यायाम ठीक हैं, परंतु उन्होंने फिर पूछा कि आपके शरीरपर इतना मेद् क्यों है? उत्तरमें कहना पडा कि कई मास किसी कारण व्यायाम बंद् हुआ है। इसपर योगीने कुछ विशेष आसन बताये और कुछ प्रक्रियायें सिखाईं तथा खानपानके नियमभी कहे।

इस रीतिके अनुसार ५।६ मास करनेसे संपूर्ण मेद् दूर होगया, और अब शरीरपर मेद् रहा ही नहीं। अब मेरे शरीरमें हलकापन है, पहिले भारीपन था। मेद् कम होनेपरभी ओज, शक्ति, आरोग्य और फूर्ति बहुतही बढ गई है। इस समय मेरी आयु ५० वर्षकी करीब है, परंतु मेरा उत्साह १६ वर्षके युवकके समान है, और मेरे मनमें हमेशा निम्न मंत्र रहता है—

कुर्वन्नेवेह कर्माणि जिजीविषेच्छतं समाः॥ यजु. ४०।२

"शतं समाः जिजीविषेत्।" यह वेदाज्ञा मेरे हृदयमें जागृत है। मनका उत्साहभी सौ वर्षकी पूर्ण आयुकी महत्वाकांक्षा सामने रखता है। अन्तमें इतना ही कहना है कि, यदि किसीको मेदकी बिमारी हो, तो पूर्वोक्त आसनादि उपायोंसे

हम निःसंदेह ठीक कर सकते हैं। किसी प्रकार शक्ति क्षीण नहीं होगी और विना व्यय केवल आसनादिका अभ्यास करनेसेही संपूर्ण मेदका विकार पूर्णतासे दूर होगा। आशा है कि, मेदके रोगी इससे लाभ उठावेंगे।

शीर्षासन से दस लाभ।

(लेखक—श्री. पं. "अभय" देवशर्माजी)

मैंने दो ढाई वर्ष तक शीर्षासन का अभ्यास किया है। इस लिये यह समझ कर कि, मेरा अनुभव भी पाठकोंको रुचिकर और कुछ सेवाकारक हो सकेगा, इस विषयपर निम्न पंक्तियाँ लिखने लगा हूं।

(१) भूखपर—

शीर्षासन करनेसे भूख खूब बढी। अथवा यह कहना अधिक ठीक होगा कि, शीर्षासनसे शरीरमें किसी चीज की आवश्यकता अनुभव होती थी, जो कि हलके और स्निग्ध भोजन खा लेनेसे भी मालूम होती थी। यह सत्य है कि, शीर्षासन करने वाले को घी दूध आदिका विशेष सेवन करना चाहिये, नहीं तो पेट अग्निसे जलने लगता है। कभी कभी ऐसा भी होता था कि, यह उपर्युक्त आवश्यकता तो शरीरमें जरूर

अनुभव होती थी, किन्तु समयपर भूख नहीं प्रतीत होती थी। ऐसी अवस्थामें एक दो वार मैंने भूख न देख कर भोजन नहीं किया, किन्तु इसका फल यह हुआ कि, एक आध घंटेके बाद जोरसे असह्य भूख लगी। मेरी समझमें शीर्षासन करनेवाले को नित्य नियमित रूपसे अवश्य भोजन करते रहना चाहिये, अर्थात् इस विपरीत करणी क्रिया के कारण स्थान भ्रष्ट हुए विजातीय द्रव्य (foreign Matter) का परदा कभी कभी आमाशय पर आजानेसे भूख कभी लुप्तसी हो जाये, तो भी भोजन की आवश्यकता शरीर को रहती है, इसलिये भोजन करना चाहिये।

(२) वीर्यरक्षा पर—

शीर्षासन से यद्यपि (बिन्दुजय) पूर्णवीर्यरक्षा तो मुझे नहीं प्राप्त हुई, परंतु, स्वप्नदोष की मात्रा और संख्या अवश्य कम होगई, और यह तो सर्वथा निश्चय होगया कि, इस क्रियासे पूर्ण वीर्यरक्षा कालान्तर में होजायेगी। 'वीर्य का शरीरमें खप जाना' इस बातका अनुभव शीर्षासन करने वालेको जरूर होने लगता है।

(३) नेत्रोंपर—

कुछ दिनों शीर्षासन करने से नेत्र खुलतेसे प्रतीत होते थे।

(४) निद्रापर—

शीर्षासन करनेके बाद ही शरीरमें ऐसा आराम और शान्ति अनुभव होती थी कि, अक्सर मुझे इसके उपरान्त

थोडीसी निद्रा आजातीथी। परंतु मेरी रात्रीकी निद्रापर इसका बहुत स्पष्ट प्रभाव प्रतीत नहीं हुआ। उखडे हुये विजातीय द्रव्यों (Foreign Matter) की शरीरमें हलचल इसका कारण थी, जिससे कि गाढ निद्रा बहुत बार नहीं आती थी।

(५) सिरदर्दपर—

मैं कुछ आग्रही स्वभाव का हूं, इसलिये चाहे कुछ ही क्यों न होजाये, मैं शीर्षासन दोनों समय करही डालता था। तीन चार बार ऐसा हुआ कि, सायंकालके समय मेरे शीर में दर्द हो रहा था, परंतु फिरभी मैंने शीर्षासन किया ही। हरेक बार इसका परिणाम यह हुआ कि; शीर्षासन से एकवार तो जोरसे सिरमें दर्द बढी और कुछ डकारें आई और फिर एकदम दर्द बिलकुल अच्छा होगया, एकदम ऐसा गायब होगया कि, आश्चर्य होता था।

परंतु अभी मैं और लोगोंको यह सलाह देनेको तैयार नहीं हूं कि, जब आपके सिर में दर्द हो तब आप शीर्षासन करके खडे होजायें। बल्कि यह कह सकता हूं कि, शीर्षासनके अभ्यास से शिरदर्द पैदा होना ही बन्द हो जायेगा।

(६) आगन्तुक रोगोंपर—

मेरा यह निश्चित अनुभव हो गया था कि, जब कभी मुझे कुछ रोग होनेका भय होता था, तब वह मेरे शीर्षासनके समयके आनेके पाहिले. पहिले ही मुझे दबा सकता था, इसके बाद नहीं। कई बार जब चारों ओर बीमारी फैली हुई थी, मुझे भी कुछ

ज्वर होनेकी आशंका हुई—कभी कभी ऐसा भी मालुम हुआ कि, शायद कुछ ज्वर होभी गया है;—परंतु शीर्षासन करनेके बाद शरीर बिलकुल ऐसा निर्व्याधि हो जाता था कि, कोई आशंका नहीं रह जाती थी। कई बार बीमारी की कई अलामतें भी पैदा होजाती थीं। परंतु शीर्षासनके बाद मैं आश्चर्यसे देखता था कि, वे सबकी सब हट जाती थीं। कुछ ज्वर या हरारत, कानमें दर्द, जुकाम, खांसी की ठसक आदि अलामतें पैदा होकर भी शीर्षासनके बाद स्वयमेव उड जाती थीं, कभी छातीमें सर्दी लग गई है ऐसा भय हो जाता था, परंतु शीर्षासन कर लेनेके बाद सारा शरीर एक समान उष्ण होकर सर्दीका नाम भी न रह जाता था। मेरा विचार है कि यदि किसीको निमोनिया होनेका भय हो (बल्कि प्रारंभिक अवस्थामें, आभी गया हो) तो यदि उससे शीर्षासन कराया जासके तो वह रोगके आक्रमणसे मुक्त हो सकता है। राजयक्ष्म (तपेदिक) के बीमार को भी यदि शीर्षासनकी क्रियासे अद्भुत लाभ पहुंचे तो मुझे कुछ भी आश्चर्य नहीं होगा। परंतु यह अभी और अधिक परीक्षण करके देखने योग्य है।

(७) निर्बलता पर—

यहां मैं अपनी एक घटनाका वर्णन करूंगा। सन् १९२० की बरसातमें मैं अपने कसबेसे १½ मील की दूरी पर एक कुटीमें रहता था। ३१ जुलाईके दिन मैंने कसबेके आर्य भाईयोंसे अगले दिन रात्रीके समय कसबेमें आकर व्याख्यान

देनेका वायदा कर लिया । परंतु अगले दिन प्रातःकालही मुझे ध्यान आया कि आज पहली अगस्त है, और महात्मा गांधीके असहयोगका प्रारंभ दिन है । आज देशमें बहोतसे लोग उपवास रखेंगे, मुझे भी उपवास रखना चाहिये । मैंने दिनभर उपवास रखा परंतु उस दिन न जाने क्यों उपवासके कारण बहुत अधिक कमजोरी अनुभव हुई । शामको कसबेमें जानेकी इच्छा न थी । परंतु प्रतिज्ञा कर चुका था, जी कड़ा करके चल पड़ा । मन में बहुत बल का ध्यान करता था, परंतु कमजोरी अनुभव हुए विना न मानती थी । आधे रास्ते चलकर ही थकावट और कमजोरी से मुझे अधिक चलना भारी होगया । साथ में अपना घोडा था, चाचाजीके कहने से उस पर चढ गया कि कुछ आराम मिलेगा । परंतु घोड पर चढ कर मैंने और भी अधिक श्रम अनुभव किया और घर पहुंचतेही सामने पडी हुई एक चारपाई पर बेजान सा हो कर पड गया । अपनी अवस्था देख कर मन में विचार होने लगा कि शायद अब उपवास तोडना पडेगा और व्याख्यान तो मैं देही न सकूंगा । परंतु शीर्षासन का भी समय हो रहाथा, जिसे कि मैं छोड भी नहीं सकता था, और उसके करने की अपने में हिम्मत भी नहीं दीखती थी । आखिर दिल मजबूत करके उठा और धीरे धीरे कमरेके अन्दर गया, सिरके नीचे कपडा रखा और दीवारके सहारेसे उलटा खडा होगया । मन में सोचा था, कि यदि शीर्षासन न कर सकूंगा,

तो अवश्य ही जाकर भोजन करलूंगा । परंतु शीर्षासन का अब चमत्कार देखा । १० मिनट के बाद शरीरमें जान सी आने लगी, सारा शरीर सबल होगया । आनन्द से घन्टाभर शीर्षासन करके बाहर निकला । यह भी भूल गया कि आज मैंने भोजन नहीं कर रखा है । समाज में गया और अच्छी तरह से व्याख्यान दिया । भोजन अगले दिन दस बजे किया और तब तक भी सचेतन बना रहा ।

(८) कब्जपर—

दोन वर्ष हुए कि मैं वैदिक धर्म के पाठकोंको अपनी कोष्ट बद्धता की कष्ट-कहानी सुना चुका हूं । उस समय तक भी मैं कोष्ट-बद्धतासे सर्वथा मुक्त नहीं था, क्यों कि कुम्भक के वलसे ही मलत्याग किया करता था । परंतु अब एक वर्ष से मुझे विना कुम्भक किये ही स्वयमेव नित्य शौच हो जाता है । इस उन्नति पानेमें अन्य आसनादिकके साथ शीर्षासन का भी प्रभाव है । शीर्षासनका विशेष लाभ मुझे यह अनुभव होता है कि (१) एक तो उससे पेट में वायु नहीं रह सकती वह सब जरूर निकल जाती है । (२) और दूसरे शौच बंध कर होता है ।

(९) सर्वाङ्ग पर—

शायद सबसे पाहिला अनुभव शीर्षासन से यह होता है कि संपूर्ण शरीर हलका और फुर्तीला हो जाता है । सारे शरीर पर एक प्रकार की कान्ति आजाती है । संपूर्ण त्वचा पर विना

तैलादिक मले ही स्निग्धता बनी रहती है। यह अनुभव मुझे ३, ४ मास अभ्यास करने पर ही प्रगट होगये थे।

(१०) प्राण पर—

शीर्षासन से प्राण की गति स्थिर और शान्त होने लगती है। स्वयमेव प्राणायाम होता है। इस समय प्राणायाम करने की स्वयं चेष्टा कदापि न करनी चाहिये, इससे रेचक पूरक होने लगेंगे। परंतु शीर्षासन में "केवल कुम्भक" होता है। इसकी सर्वोत्तम विधि यह है कि (श्वास प्रश्वास पर बिलकुल ध्यान न ले जाकर) मन को कहीं एकाग्र करना चाहिए जैसा संध्या करना, अपने तेज का ध्यान करना, कपाल, आज्ञाचक्र, या हृदय आदिमें ध्यान करना, या प्रणव जाप करना आदि) इससे स्वयमेव यह प्राणायाम होगा। शीर्षासन करनेके पश्चात् अवश्य स्वेच्छा पूर्वक प्राणायाम करना उचित है। मुझे इसका अनुभव इस प्रकार हुआ कि शीर्षासनके पश्चात् स्वयमेव श्वास रोकनेकी इच्छा होती थी, और रोकने पर विना कष्टके चिरकाल तक श्वास रुका रहता था। शीर्षासनके बाद प्राणायाम करनेसे उत्तमतया रक्तशुद्धि हो जाती है क्यों कि संपूर्ण शरीरका रुधिर मलों को लेकर फेफड़े में पहुंचता है।

मेरा विचार होता है कि केवल शीर्षासनके तथा उसके साथ और बाद में होनेवाले प्राणायामसे भी अभ्यासी समाधी तक पहुंच सकता है। कई योगाभ्यासियोंके कथन सुनकर

मैंने अपना यह मत बनाया है उनका कहना है कि, प्रति-दिन तीन घन्टा कपाली मुद्रा (शीर्षासन) के अभ्याससे षट्चक्रवेध आदि सब कुछ सिद्ध हो जाता है। इसका कारण यही है कि, शीर्षासनसे प्राण अन्दर खिंचने लगता है। योग मार्गमें शीर्षासनका सबसे बडा लाभ यही है। प्राणका आयाम होनेसे जैसे कि योगग्रंथोंमें लिखा है इस आसनसे आयुर्वृद्धि होती है और कालपर विजय पाई जाती है।

वस्तुतः शीर्षासन आसनों में शीर्षस्थानीय है।

अन्तमें मैं यह अवश्य कहना चाहता हूं कि, क्यों कि यह आसन बहुत उत्तम है इसी लिये सावधानीसे करना चाहिये। प्रारंभमें बहुत धीरे धीरे बढाना चाहिये। यदि कुछ हानि प्रतीत हो तो तत्काल इसे छोड कर विचार कर लेना चाहिये कि क्यों हानि हुई। कई वार सावधानीसे परीक्षण करना चाहिये। होसकता है कि किन्हीं कारणोंसे किसी व्यक्ति को यह आसन अनुकूल सिद्ध न हो। उन्हें इस पर आग्रह भी न करना चाहिये। उनके लिये योगी गुरुजन अन्य साधन बतायेंगे, जो उनके अनुकूल हों।

शीर्षासन करनेसे लाभका अनुभव।

'मुंबई, गंगाराम क्षत्रियचाळ–ठाकुरद्वारसे ता. १।११।२२ के पत्रमें श्री. पं. पांडुरंग गंगाधर नामजोशी लिखते हैं—

" ....किसी मनुष्यके पांव अशक्त हैं और वह पावों-पर खडा नहीं हो सकता, तो उसके पांवोंमें शक्ति आनेके लिये " शीर्षासन अत्यंत लाभदायक है। पहिले पंद्रह दिनोंमें पांच मिनिटतक करना योग्य है, तत्पश्चात् प्रति पंद्रह दिनोंमें पांच मिनिट बढाते हुए, तीन मासोंमें आधा घंटा तक कर सकते हैं। इस आसनका अभ्यास करनेसे पांवोंकी शक्ति बढती है। इस आसनमें पांव ऊपर करने होते हैं इसलिये रुधिराभिसरण अच्छी प्रकार होता है, पांवका अशुद्ध रक्त फेंफडोंमें सत्वर आता है। और वहां शुद्ध बनकर फिर पांवकी ओर भेजा जाता है। इस आसनसे रक्तप्रवाह ठीक होनेके कारण अशक्त अवयव सशक्त बन सकते हैं।

" आजकल स्कूल और कालेजोंके विद्यार्थियोंमें धातु-क्षयका विकार बहुत बढा है। इस बीमारीके कारण सब जानते ही हैं। लडके और लडकियोंका निकट संबंध, नाटक सिनेमा आदिके अश्लील भावोंका दर्शन, बीभत्स विज्ञापन और उनका औषधोंका स्वेच्छासे उपयोग, अश्लील उपन्या-

सादिका वाचन आदि अनेक कारणोंसे इस धातुक्षयकी उत्पत्ति और बाधा तरुण युवकोंमें होती है। इसप्रकारके धातुक्षीण मनुष्यने यदि नियमपूर्वक और विधियुक्त शीर्षासन किया, तो उसका वीर्यपात एकमासके अंदरही बंद होगा। इसके अनेक कारण हैं, परंतु सबको ज्ञात हो सकता है ऐसा एकही कारण यहां देता हूं, वह यह है कि जलरूप वीर्यकी ऊर्ध्वगति होती है तथा वीर्यस्थानीय नस नाडियोंकी अशक्तता दूर होती है। इसका अनुभव कई तरुणोंपर देखा है। निःसंदेह लाभ होता है।

"हमारा एक मित्र बवासीरसे दुःखी था। उसने दो मास नियमपूर्वक शीर्षासन किया, जिससे उसका बवासीरका कष्ट दूर हुआ। यहां इस विषयमें इतना कहना आवश्यक था कि यह बवासीर बिलकुल प्रारंभिक अवस्थामें थी। अधिक बढी हुई बवासीर अच्छी होगी, या नहीं और होगी तो कितनी देर के अभ्यास से होगी, इसका अनुभव लेना चाहिये। गुदाके स्थानका रक्त हृदयकी ओर खींचा जानेसे बवासीरके स्थानमें रक्तका प्रवाह कम हुआ, इस कारण बवासीर दूर होगई ऐसा मेरा ख्याल है। इसके साथ पथ्ययुक्त भोजन करनेसे अधिक लाभ होता है।

"मेरा एक मित्र म. गणपतराव रानडे हैं, उनकी घुटनेकी बीमारी शीर्षासन करनेसे ही दूर होगई।

"सुस्त मनुष्य यदि नियमपूर्वक शीर्षासन करेगा, तो थोडे समयके पश्चात् उसकी सुस्ती दूर होगी और वह फूर्तिला मनुष्य बन सकता है। शीर्षासनसे आलस्य दूर होता है इसमें कोई संदेह नहीं है। प्रतिदिन नियमपूर्वक आधा घंटा शीर्षासन करनेसे बद्ध कोष्टता दूर होती है और शौचशुद्धि उत्तम प्रकारसे होती है। इस विषयमें बहुतोंके ऊपर अनुभव लिया है।

"मस्तकके विकारोंमें शीर्षासन करनेके बहुत लाभ होता है, शीर्षासनसे रुधिराभिसरण ठीक होनेसे कारण सिरदर्द हट जाता है। इस प्रकार मेरे अनुभव हैं।"

[उक्त अनुभव स्वर्गीय श्री. पं. पांडुरंग गं. नामजोशीजीके पत्रसे उद्धृत किया है। श्री. नामजोशी दृढ योगाभ्यासी थे और अपने समयमें उन्होंने आसन प्राणायाममें सैंकडों विद्यार्थियोंको दीक्षा दी थी। योगके कई दुःसाध्य प्रयोग इन्होंने सिद्ध किये थे, इसलिये इनका पूर्वोक्त पत्र विशेष महत्त्व रखता है। इसी प्रकार हरिपूर सांगली निवासी वैद्य श्री. पं. गणेश पांडुरंग परांजपेजी शीर्षासनके विषयमें अपने अनुभव ता. ३।११।२२ के पत्रमें निम्नप्रकार लिखते हैं]

"........अनेक विद्यार्थियोंके सिरदर्द केवल शीर्षासनसे दूर होनेका विलक्षण अनुभव मैंने लिया है। इनमेंसे एक दो यहां लिखता हूं—

"....श्री. लक्ष्मणराव शिंदे सुभेदारजी का पुत्र चि. गणपति, १८ वर्षकी आयुवाला सांगली हैस्कूलमें पढता है।

दो तीन वर्षोंसे इसके सिरमें बडा दर्द होता था । थोडासा पठन पाठन अथवा विचारका कार्य करनेसे सिरमें बडी पीडा होने लगती थी। आंखोंकी जलन, सिरका दर्द और रात्रीमें स्वप्नदोष होनेके कारण उक्त विद्यार्थीकी अवस्था बडी खराब होगई थी। बहुत दवाइयां कीं परंतु किसीसे लाभ न हुआ। ठंढे पानीका स्नान और शीत वायुमें सो जानेसे किंचित् आराम होता था। यह लडका हमारे दवाखानेमें ता. ५।८।२२ के दिन दाखल हुआ। १५।२० दिन औषध प्रयोग करनेपर-भी कोई परिणाम नहीं हुआ । पश्चात् शीर्षासनका प्रयोग किया । शीर्षासन करनेपर इन्होंने कहा कि पृष्ठ वंशसे कुछ ठंढा पदार्थ सिरमें उतरनेका भास हुआ और जब वह पदार्थ सिरमें पहुंचा तब सिरदर्द बंद हुआ। १५ दिन नियम पूर्वक करनेपर सिरदर्द बिलकुल हट गया, स्वप्नदोषभी दूर हुआ। यह विद्यार्थी अबभी शीर्षासन कर रहा है।

" ....मेरा नाम विष्णु कृष्ण आडके है और मैं जातिका ब्राह्मण हूं परंतु दर्जीका पेशा कर रहा हूं । (निवास स्थान हरिपुर–सांगली) मैं पांच वर्षोंसे सिरदर्दके कारण बहुत बीमार था । दिनमें २४ घंटे बडा सख्त सिरदर्द होता था, रात्रीमें निद्रा नहीं आती थी, बेचैनी सदा ही रहती थी और हाजमा भी बिगड गया था। स्वदेसी और विदेशी वैद्यों और डाक्टरोंके बहुत उपाय किये, परंतु किसीसे भी कुछ लाभ नहीं हुआ। किसी औषधसे किंचित् आराम मिलता था परंतु

फिर वैसाही दर्द हो जाता था। किसी उपायसे स्थिर लाभ नहीं हुआ। इसके पश्चात् सांगली हरिपुरके "आरोग्यसंवर्धन मंडलके" संचालक श्री. गणेश पांडुरंग परांजपे जी की प्रेरणा-से ता. २८।८।२२ के दिन शीर्षासन करनेका प्रारंभ किया। पहिले दिन १०।१५ सेकंद ही हुआ। बढाते बढाते इस समय २।३ मिनिट कर सकता हूं। लगातार दस दिन शीर्षा-सन करनेसे सब सिरदर्द हट गया। शीर्षासन करनेके समय सिरमें तथा आंखोंमें विलक्षण शीतता प्रतीत होती थी और इससे मुझे क्रमशः आराम प्राप्त होता गया। अब मैं प्रति-दिन शीर्षासन कर रहा हूं और अब किसी प्रकारका सिरदर्द रहा नहीं है।"

शीर्षासन के विषयमें मेरा अनुभव यह है कि सिरकी कई बीमारियोंमें इससे बडा लाभ होता है। पृष्ठवंशमें जो रस है वह मस्तिष्ककी ओर योग्य रीतिसे पहुंचनेके कारण मज्जातंतु-ओंकी दुर्बलता इस आसनके करनेसे दूर होती है। तथा जितने रोग मज्जातंतुओंकी अशक्ततासे होते हैं वे सब दूर होते हैं। सिरदर्द, आंखोंकी जलन, दृष्टिकी मंदता, कानमें आवाज होना, बधिरता, आदि विकार बहुत अंशमें दूर होते हैं। नाभिकेपास जो पाचक चक्र है, उसको योग्य गति प्राप्त होनेके कारण तथा उसका रुधिराभिसरण ठीक होनेके कारण पचनक्रिया ठीक होती है। तथा वीर्यनाश, स्वप्नं अवस्था, धातुक्षीणता आदि विकार दूर होते हैं। मैंने इस आसनसे

अपने रोगियोंकी अनेक वार चिकित्सा की है और उससे विलक्षण गुण प्राप्त हुआ है। इसलिये मुझे आशा है कि अन्योंको भी इससे अवश्य लाभ होगा। इसके कई अनुभव नीचे देता हूं—

(१) म. नरहर दत्तात्रय मुजुमदार (विद्यार्थी, विलिंगडन कालेज, सांगली) लिखते हैं—"मुझे सिर दर्दकी बहुत पीडा थी औषधोंसे आराम नहीं हुआ। पश्चात् आपने शीर्षासन करनेको कहा। मैं यह आसन सात बजे करता था। प्रतिसमय ४।५ मिनिटही करता था जिससे मेरा सिर-दर्द लाभदायक है।" (ता. १४।११।२२)

(२) म. चंपालाल शिवराव मारवाडी, सोलापुर, लिखते हैं—"अपनी आयु के २१ वे वर्ष आम्लपित्तके रोगसे अशक्तता हुई। यह बीमारी ३ वर्ष थी। बहुत औषध किये परंतु कोइ आराम नहीं हुआ। तेईसवे वर्ष साष्टांगप्रणिपात, शीर्षासन, शेषासन तथा इतर व्यायाम करने लगा जिससे एक वर्षके अंदर मेरा शरीर उत्तम प्रकारसे सुधर गया।" (ता. ३०।७।२२)

(३) म. हरिहर वा. देशपांडे, उमरावती वऱ्हाड, लिखते हैं—"अग्निमांद्य जीर्णज्वर, बद्धकोष्टता आदिके कारण मैं बहुतही बीमार रहा था। दो वर्ष औषध सेवन करनेपर भी कोई गुण नहीं हुआ। पश्चात् शीर्षासन, मयूरासन, साष्टांग-

नमस्कार, आदि करने लगा, तथा साथ साथ मलखांब, बैठक, कुस्ती, आदि भी करने लगा। तैरना भी किया करता था। इससे एक वर्षमें शरीर अच्छी प्रकार सुधर गया। अब मैं पूर्णतासे नीरोग हूं। " तं (ता. २२।६।२२)

(४) म. बाळू अण्णा मोजकर, जैन बोर्डिंग सोलापूर, लिखते हैं—संग्रहणी, पांडुरोग, सूझन आदिसे मैं रोगी था। कई वर्ष औषध लेते लेते थक गया, तथापि गुण प्राप्त नहीं हुआ। पश्चात् मैं मयूरासन, शीर्षासन, दौडना. खोदना, दंड और बैठक करने लगा और दवाइयां छोड दीं। उक्त व्यायामोंसेही मेरा स्वास्थ्य अच्छी प्रकार सुधर गया। (ता. १७।६।२२)

इस प्रकार औरोंकेभी अनुभव बहुतसे हैं। आशा है कि अन्य लोग भी दवाइयोंका दास्य छोडकर आसनोंसे लाभ उठावेंगे।

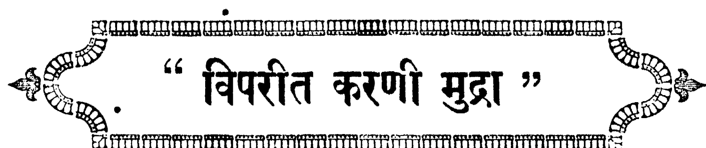
पचास वर्षकी आयुकी अवस्थामें शीर्षासनसे लाभ।

" शीर्षासन " के विषयमें जो आपने " वैदिक-धर्म " के अंकमें लेख लिखा है; तबसे मैं प्रतिदिन " शीर्षासन " करता हूं। पूर्वकी अपेक्षा अब मेरा शरीर बहोत फुर्तिला रहता है। शरीरकी सुडौलताके साथ शक्तिभी दिन प्रतिदिन बढती

जाती है। प्रतिदिनके अभ्याससे मुझमें इतना बल आया है कि मैं अब एक साधारण शक्तिके जवानके साथभी कुश्ती कर सकूंगा। ईश्वरकी कृपासे तीन वर्षसे मेरा अखंडित ब्रह्मचर्य रहा है। आपके लिखे आसन करनेसे मानसिक विकारकी व्याधि भी शनैः शनैः दूर हो रही है। गत फर्वरी माससे पचासवां वर्ष मेरी आयुका शुरू हुआ है। परंतु नेत्ररोगके सिवाय किसी बीमारीने मुझे दर्शन नहीं दिया है। तीन वर्षके पूर्व मैं गृहस्थाश्रमके नियमानुसार ऋतुगामी रहकर ब्रह्मचारी रहा था। अब स्त्री गुजर जानेके पश्चात् मेरा ब्रह्मचर्यका पालन अखंडित हो रहा है।

भवदीय

नंदलाल महीपत भट्ट, वीरमगांव।



"विपरीत करणी मुद्रा"

Equilibrium by opposite exaggeration.

(लेखक-श्री. नागेश वासुदेव गुणाजी B. A, L. L. B. चीफ ऑफिसर सिटी म्युनिसिपालिटी, बेळगांव शहर.)

इसके पूर्व "शीर्षासन" के विषयपर सुंदर, सचित्र और अनुभव पूर्ण लेख प्रसिद्ध हुए हैं। वे अनुभवसिद्ध होनेके कारण ठीकही हैं। परंतु आज इस लेखमें मैं शीर्षासन

के एक विशेष तत्त्वका विचार करना चाहता हूं, इसलिये इस लेखका शीर्षक मैंने " विपरीत करणी मुद्रा " रखा है। योग ग्रंथोंमें आसनोंकी अपेक्षा " मुद्रा " का श्रेष्ठत्व सुप्रसिद्ध है। मुद्राएं अनेक हैं, उनमें एक " विपरीत करणी " भी है। आसनोंमें केवळ शरीरकी नसनाडियोंका संबंध आता है, परंतु मुद्राओंमें शरीरके साथ प्राण और मनका भी विशेष संबंध होता है। इसी कारण आसनोंसे मुद्राओंका महत्व विशेष है। " विपरीत करणी " इस शब्दसे ही उलटा खडा होनेका भाव स्पष्ट हो जाता है। निद्राके समयको छोडकर हम बैठते, खडे होते और चलते हैं, इस समय हमारा " मस्तक ऊपर और पांव नीचे " होते हैं। इसके विपरीत स्थिति अर्थात् " मस्तक नीचे और पांव ऊपर " करने का नाम " विपरीत करणी " है। योग ग्रंथोंम इस मुद्राका वर्णन निम्न प्रकार किया है—

" नाभिस्थानमें सूर्य है और तालुमूलमें चंद्र है। चंद्रसे अमृतका स्राव होता है, इस अमृतको सूर्य पीता है, इस हेतु मनुष्य मृत्युके वश होता है। इसलिये भूमिपर दोनों ओर दो हाथ रखकर उनके बीचमें अपना मस्तक रखना और पांव ऊपर करके खडा होनेसे सूर्य ऊपर ओर चंद्र नीचे होता है और सूर्य अमृत पी नहीं सकता। यही विपरीत करणी मुद्रा है। इस मुद्राका नित्य अभ्यास करनेके जीर्ण अवस्था और अकाल मृत्यु नहीं होता, जठराग्नि प्रज्वलित होता है, भूख

बढती है। छः मास नियम पूर्वक करनेसे श्वेत बाल काले हो जाते हैं और शरीर परसे वार्धक्यके चिन्ह हट जाते हैं। पहिले थोडी देर करके क्रमशः अभ्यास बढाना चाहिये।" इ०

यह योगग्रंथोंका वर्णन आलंकारिक है, इसका सुबोध-भाषामें रूपांतर यदि कोई योगी करनेकी कृपा करेगा, तो उसके बडे उपकार हो सकते हैं। हमारे शरीरमें स्नायु, मज्जातंतु, प्राण और मनके जो दिनरात व्यापार चलरहे हैं, उनके कारण प्राणशक्ति और आयु का क्षय हो रहा है। इसी क्षयसे अपना बचाव करना योगसाधनके विविध क्रियाओंका मूल उद्देश्य है। उक्त "विपरीत करणी मुद्रा" से जो अनेक लाभ होते हैं, उसकी उपपत्तिका विचार आधुनिक शास्त्रकी दृष्टिसे भी होना संभव है। इस विषयका विचार अब करता हूं—

हमारे शरीरके प्रत्येक व्यापारमें स्नायुओंका आकुंचन और प्रसारण होता है। इस गतिके कारण शरीरके कई अणु मरते हैं, और उससे शरीरमें विषमय द्रव्य उत्पन्न होता है। यह विष शरीरके "लिंफ" नामक रसमें मिलता है। बडे परिश्रमके व्यवहार करनेवालोंके शरीरोंमें तो यह विष द्रव्य उत्पन्न होता ही है, परंतु साधारण हालचल करनेवालेके शरीरमें भी होता है। यह शरीरके स्वास्थ्यके लिये अत्यंत आवश्यक है कि उक्त विष शरीरसे शीघ्र ही बाहिर चला जाय और शुद्ध रक्त शरीरमें संचारित हो। जिस प्रकार चूलेमें अग्नि

जलनेसे राख उत्पन्न होती है, और राख बहुत अधिक होनेसे चूलेमें आग ठीक प्रकार जल नहीं सकती; ठीक इस प्रकार शरीरमें यह स्नायुकी राख (Muscular ash) स्थानस्थानमें जमा होती है, और यदि यह बाहिर न गई तो वहां का कार्य ठीक प्रकार चल नहीं सकता। इसीका नाम बीमारी है। हमारे शरीरमें फेंफडोंके व्यापार, हृदय तथा धमनियां आदिके जो कार्य हो रहे हैं, उनका मुख्य उद्देश्य इतनाही है कि शरीरके दोष दूर हों और शुद्ध रक्त सब शरीरको मिल जाय।

अब प्रश्न यह है कि हमारे शरीरमें कैसा व्यवहार चल रहा है? जो अतिपरिश्रम करनेवाले आदमी हैं उनका विचार छोड दें, परंतु जो खडे रहते अथवा चलते हैं, क्या उनको भी व्यायाम होता है? विचार करनेपर पता लग जायगा कि केवल खडा रहनेमें भी पांवसे लेकर मस्तिष्क तक अनेक स्नायुओंपर जोर पडता है। छोटे छोटे बालक जिस समय खडा रहनेका यत्न करते हैं उस समय उनको कितने क्लेश होते हैं, इसका विचार करनेसे निश्चय हो सकता है कि केवल खडा रहनेसे भी शरीरके स्नायुओंमें व्यय होता रहता है। बहुत खडा रहनेसे अथवा बहुत चलनेसे पांवमें सूजन आती है उसका यही कारण है कि, श्रमके कारण उत्पन्न हुए दोष शीघ्र बाहिर नहीं जाते और वहां ही रहकर दोष उत्पन्न करते हैं। गुरुत्वाकर्षणके नियमानुसार शरीरमें उत्पन्न हुए दोष वारंवार शरीरमें रक्तके

साथ घूमते हैं, इसी कारण बडी थकावट उत्पन्न होती है और स्थान स्थानमें दोष पैदा होते हैं। परंतु जिस समय हम अपना सिर नीचे और पांव ऊपर करते हैं तब गुरुत्वाकर्षणका कार्य विरुद्ध दिशासे होता है, और जो दोष सदा खडे होनेके कारण उत्पन्न होते थे, उनके विपरीत आचरण होनेसे परिणाम भी लाभदायक होता है। रक्त और लिंफसे दूषित पदार्थ वापस होते हैं और बाहिर निकलनेके मार्गमें लग जाते हैं। दूषित द्रव्य फेंफडोंमें पहुंचते हैं वहां उच्छ्वासके द्वारा बाहिर जाते हैं, अथवा अन्यप्रकार पसीनेके द्वारा बाहिर जाते हैं। इसी कारण " विपरीत करणी मुद्रा " करनेसे थकावट दूर होती है और स्नायुओंमें बल प्राप्त होनेका अनुभव होता है। अमेरिकन लोग बहुत भ्रमण करनेके बाद बैठे बैठे ही अपने पांव सिर तक ऊपर उठाते हैं, इसमें भी अल्प अंशसे उक्त तत्त्व ही कार्य करता है, ऐसा डा० ब्रंटनका मत है। अपनी योगपद्धतिकी " विपरीत करणी मुद्रा " से इष्ट लाभ पूर्णताके साथ और विना आयास होते हैं, इससेही सिद्ध हो सकता है कि योगियोंको शारीरशास्त्रका ज्ञान कितना परिपूर्ण था, और शरीरकी नसनाडीके व्यापारके साथ उनका कितना परिचय था।

जब हम एक ही अंगपर बडी देर सोते अथवा बैठते हैं, तब वहांसे उठनेके समय हम स्वभावतः विरुद्ध दिशासे शरीरको खींचते हैं। पशुओंमें भी यह रीति स्वभावसे रहती है। विना

सीखे पशु यही करते हैं। एक ही अंगपर बडी देर सोने अथवा बैठनेसे जो खून वहां जमा होता है उसको अन्यत्र आकर्षित करनेके लिये उक्त प्रकार विरुद्ध दिशाके खिंचाव की आवश्यकता रहती है। अन्यथा पूर्ण सम अवस्था प्राप्त नहीं हो सकती। इसलिये पशुओंमें स्वभावतः ही विरुद्ध खिंचाव करनेकी बुद्धि परमात्माने रखी है और मनुष्योंमें भी है। तात्पर्य इस विरुद्ध खिंचावसे शरीरमें "समता" आती है और "समत्व प्राप्त करना ही योग है।"

"समत्वं योग उच्यते" (गीता. २।४८)

विरुद्ध दिशासे विरुद्ध व्यवसाय करके शरीरकी समता प्रस्थापित करनेका विषय (Equilibrium by opposite exaggeration) म० माइल्स महोदयने उत्तम रीतिसे प्रतिपादन किया है, यह बात "विपरीत करणी मुद्रा" से उत्तम प्रकार सिद्ध होती है, इसी लिये इस मुद्राका इतना वर्णन योगशास्त्रमें हुआ है। प्रायः देखा जाय तो हमारे व्यवसाय सिर ऊपर और पांव नीचे रहकर ही होते हैं, इस कारण विषद्रव्य शरीरमें रहते हैं और शनैःशनैः सब शरीरमें फैलते हैं। अंतमें हृदय, फेंफडे और मस्तिष्कमें विषद्रव्योंका संचय अधिक बढ जानेसे अकाल मृत्युतक अवस्था पहुंचती है। इसलिये जो विपरीत करणी मुद्राका प्रतिदिन नियमपूर्वक अभ्यास करेगा, उनको अनुभव हो जायगा कि नीचेका सब रक्त फेंफडोंमें आकर शुद्ध हो रहा है और नवजीवन प्राप्त हो रहा है। सब रक्त शरीरके

ऊपरके भागमें अधिक प्रमाणमें आनेसे ऊपरके शरीरके भाग, अवयव, चक्र, स्नायु, मज्जातंतु आदिका अधिक आरोग्य होता है और इनका अधिक आरोग्य होनेसे आयुष्यकी वृद्धि होना स्वाभाविक ही है। विपरीत करणी करनेके पश्चात् फिर खडा होनेसे शुद्ध रक्त पुनः सब शरीरमें भ्रमण करता है। इस प्रकार इससे सब शरीरका आरोग्य सिद्ध होजाता है।

जिस समय मनमें बडे विचार आते हैं और उनके कारण निद्रा भी नहीं आती है, उस समय "विपरीत करणी मुद्रा" करनेसे निःसंदेह मस्तक शांत होता है और आरामसे निद्रा प्राप्त होती है। इसका कारण यही है कि उक्त मुद्रा करनेसे बहुत रक्त मस्तकमें जाता है और वहां जो दूषित द्रव्य होगा उसको बाहिर लाता है। इस प्रकार मस्तक निर्दोष होनेसे शांतिसे निद्रा प्राप्त होती है इस प्रकार यह विपरीत करणी मुद्रा शरीरका स्वास्थ्य बढानेवाली है।

मैं यह आसन बचपनसे ही करता था, लडकपनमें खेलते कूदते अपने सिरपर खडा रहनेका अभ्यास मुझे बाल पनसे ही था। परंतु इसका तत्त्व मुझे उस समय विदित नहीं था। इसका तत्त्वज्ञान अब हुआ है। जो लोग इसका अभ्यास करना चाहते हैं उनको उचित है कि वे प्रथम किसी मित्रकी सहायतासे करें तथा दिवारके साथ नरम बिस्तरे पर अभ्यास करनेका यत्न करें; इससे गिरनेका भय न होगा, और गिरने पर भी कोइ कष्ट नहीं होगा। पहिले दिन थोडा

और पीछे शनैः शनैः अधिक देर तक अभ्यास करनेसे बडा ही लाभ होता है। यह शीर्षासन सब आसनोंमें श्रेष्ठ है और सब व्यायाम होनेके पश्चात् इसको अवश्य करना चाहिये। हमारी व्यायाम पद्धतिमें प्रतिदिनके व्यायामके पश्चात् इसको अवश्य किया जाता है।

कोई व्यायाम करनेके समय और विशेषतः आसनों और मुद्राओंके अभ्यासके समय विशेष उच्च और पवित्र भावना मनमें धारण करनेसे अधिक लाभ होता है। शीर्षासन अथवा विपरीत करणी का अभ्यास करनेके समय निम्न लिखित भावना मनके अंदर धारण करनी योग्य है। हम सब—

(१) जननी जन्मभूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी।

(२) वंदे मातरम्।

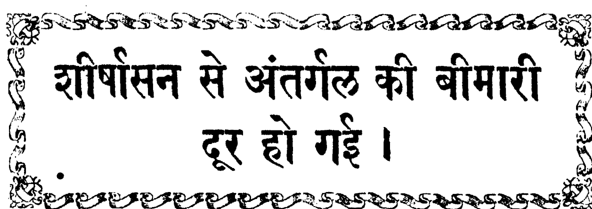
अर्थात् " माता और मातृभूमि स्वर्गसे भी श्रेष्ठ है। उस माताको नमन करते हैं। "

(३) माता भूमिः पुत्रो अहं पृथिव्याः।

अ. १२।१।१२.

" मेरी माता भूमि है और मैं मातृभूमिका पुत्र हूं। " इस प्रकारकी कल्पनायें हमारे अंदर प्रचलित हैं। परंतु हमारा आचरण देखा जाय तो हम मातृभूमिके शरीरपर सदा अपने पांव ही रखते हैं। क्या यही हमारी मातृभक्ति है? इस लिये सच्चा मातृभूमिकी भक्तिका भाव मनमें धारण करके यदि

उस मातृभूमिके पद्पर (पृष्ठ भागपर) हम अपना मस्तक रखेंगे तो उसको शरण जानेका पुण्य हमें प्राप्त होगा । हम उसके पुत्र हैं और वह हमारी माता है, इसलिये पुत्रको उचित है कि वह अपनी माताके चरणोंपर अपना मस्तक रखे । ऐसा करना शीर्षासनमें होता है जिसको विपरीत करणी भी कहते हैं । उक्त प्रकार माताके चरणोंपर मस्तक रखनेसे माता हमारे दोषोंको दूर करेगी और हमारा आरोग्य बडायेगी । आशा है कि पाठक वृंद उक्त भावके साथ उक्त मुद्रा करके शरीरमें समता, आरोग्य और प्रसन्नता प्राप्त करेंगे ॥



शीर्षासन से अंतर्गल की बीमारी दूर हो गई ।

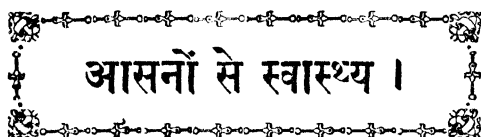
मुझे बडे दिनोंसे कब्जीकी शिकायत थी । एक समय ऊपरकी मंजिल से नीचे उतर रहा था, पांच छे पौडियां उतर आनेपर अंड कोशके ऊपर और नाभीके नीचे इतना सखत दर्द शुरू हुआ कि दो चार निमेषोंमें वह दर्द असह्य हुआ, और बढता ही गया । यह दर्द इतना फैला, कि नाभीसे लेकर अंडकोशतक फैलता गया । मेरेसे चलना फिरनाभी

अशक्य हुआ। और प्रतिक्षण दर्द बढने लगा। इतनेमें "शीर्षासन" करके देखनेका विचार मनमें आगया। परंतु शीर्षासन होगा या नहीं इस विषयमें शंका थी। तथापि दर्द के स्थान को हाथसे पकडकर मैं अपने कमर में चला गया, और दीवारके आधारसे "शीर्षासन" करनेका यत्न किया। जिस समय मेरा सिर नीचे और पांव ऊपर होगये, उसी निमेषसे दर्द बिलकुल हट गया। मुझे इतना आनंद और आराम हुआ कि उसका वर्णन होना अशक्य है। इसके बाद आधा घंटा मैं शीर्षासन करता रहा, पश्चात् आसन खोल कर खडा हुआ। परंतु कोई दर्द न था, परंतु अंडकोशके उपर एक गोलासा था और वहां जलन रहती थी। शीर्षासन करनेतक यह गोला चले जाता था, और पुनः खडा होनेपर आजाता था और जलन करता था।

मैं दिन में दो तीन वार शीर्षासन करने लगा, इससे चार दिन में यह सब बीमारी हट गयी। पीछे डाक्टरोंसे यह अवस्था निवेदन की, उन्होंने सब अवयवों की परीक्षा करके कहा कि यह अंतर्गल की बीमारी, (आपरेशन) काटने से ही यह दूर होती है अथवा कमानका पट्टा बांधने से। परंतु अब शीर्षासनसे ऐसा आराम हुआ है कि अब इस समय कुछ करने की आवश्यकता नहीं है। इसके बाद भी मैं नियमपूर्वक शीर्षासन करता रहा, अब उस प्रकारकी कोई पीडा नहीं रही। "वैदिकधर्म" के आसन विषयक लेखोंसे मुझे यह

लाभ हुआ है। और मुझे आशा है कि अन्य पाठकों को भी इसी प्रकार अनेक लाभ होंगे। वैदिक धर्म में जो योग विषयक लेख आते हैं बडेही उपयोगी हैं। इस विषयमें कई अनुभव मैंने लिये हैं जिनका वर्णन फिर किसी समय करूंगा।

भवदीय,
शि. ना. पंडित.



आसनों से स्वास्थ्य।

(लेखक—श्री० पं. सूर्य देवशर्मा विशारद; दयानंद कॉलेज कानपुर)

"वैदिक धर्म" के कई विगत अंकोंमें उन महानुभावों के महा अनुभव दिये गये हैं; जो कि विविध प्रकार की अवस्थाओं में आसनोंसे स्वास्थ्य लाभ कर चुके हैं। मेरी भी एक विचित्र विद्यार्थी की अवस्था है, और इस अवस्था में अति अल्पकाल में आसनों द्वारा मुझे जो अनुपम लाभ प्रतीत हुये हैं, उनका प्रकाश करना भी—"स्वाध्याय मंडल" का एक सभासद होता हुआ—मैं अपने भारतीय विद्यार्थि गण तथा अन्य शिक्षित, किंतु निढल्ले बैठे हुये, भ्राताओं के लिये अनुचित तथा अहितकर नहीं समझता।

प्रारंभ से मेरी वृत्ति उन विद्यार्थियों की श्रेणी में रखी जाने योग्य है, जिनका यह सिद्धांत है:—

"हमें क्या काम दुनियां से मदरसा है वतन अपना।
मरेंगे हम किताबों में सफे होंगे कफ़न अपना।"

मैं ने शारीरिक अवस्था पर कभी ध्यान नहीं दिया. उन का फल यह हुआ, कि जहां मैं पढने में सर्व प्रथम रहा, वहां स्वास्थ्य में सबसे अधम रहा। भोजन भले प्रकार पचन न होता था, बुभुक्षा लगने पर भी बहुत थोडा भोजन कर सकता था। सदा आम और कब्जी की शिकायत ही रहा करती, शौच कभी खुलकर न होता, और शौच के पश्चात् भी पेट भारीसा ही प्रतीत होता, कुछ आलस्य की भी मात्रा बढने लगी। उस अपचन के ही कारण सप्ताह में प्रायः दो दिवस का उपवास करना पडता, तब कहीं निज छात्र जीवन-यात्रा में चलने के योग्य रहता। लेकिन ठीक मंजिल पर पहुंचकर-परीक्षा के दिनों में—मेरी शरीररूपी गाडीका कोई न कोई पुरजा बिगड ही जाता और परीक्षोत्तीर्ण होने का वह सुख जो सब श्रेष्ठ विद्यार्थी को होना चाहिये, कभी न मिलता।

इसी मध्य में अपचन और अस्वास्थ्य का साथी एक और जीवन नाशक रोग—धातुविकार—पीछे लगता हुआ प्रतीत हुआ। जिससे मुझे सारे सांसारिक जीवन से निराशा होने लगी, क्यों कि उसके परिणामों को मैं पहले से सुन चुका था; जिसके निवारण के लिये मैंने पूर्व कई "वैद्यशास्त्री"

"आयुर्वेदाचार्यों" की औषधियों का सेवन प्रारंभ कर दिया। लेकिन उनसे मुझे कोई स्थायी लाभ नहीं प्रतीत हुआ। मैं वहांसे निराश हो, शोक समुद्र में डूबने ही को था, कि "वैदिक धर्मका" नौकारूप एक अंक प्राप्त हुआ। उसमें ब्रह्म-चर्य रक्षण के " तीस नियम " पढकर कुछ सांत्वना हुई!! इसी बीच हमारे सुयोग्य प्रो. कृष्ण कुमार जी एम्. ए. ने मेरी रुची देखकर कुछ आसनों का अभ्यास मुझे कराया। वैदिक धर्म के दूसरे ही अंक में सचित्र " शीर्षासन " दिया गया। जैसे ही मैंने वह अंक पढा, उसी समय अपने मित्रोंकी सहायतासे शीर्षासन को करना प्रारंभ कर दिया, और तब से निरन्तर करता रहा हूं।

आज कल उस को लगभग आध घंटे तक किया करता हूं, और उसके पश्चात् अन्य आसन, लगभग ३० के, प्रतिदिन किया करता हूं। जिनका फल यह हुआ है, कि जितनी आपत्तियां स्वास्थ्य के मार्ग में विघ्न उपस्थित करने वाली होती थीं, वे प्रायः सभी पराभूत हो चुकी हैं!

१. मेरा शरीर पहलेसे लगभग १॥ गुना अधिक हृष्ट पुष्ट प्रतीत होता है और इसी में किसी रोग का प्रवेश सरलतासे नहीं हो सकता।

२. मैं कभी तैल आदि मर्दन नहीं करता, तब भी सारा शरीर नर्म, लचीलापन लिये हुये और तैलमर्दित चिकनां सा रहा करता है।

३. जहां पहले शौच में आध घंटा लग जाता था, वहां अब दो मिनिट भी नहीं व्यय होते, और देर तक बैठकर पेट को मरोडना और श्वास साधना नहीं पडता।

४. जहां पहले सप्ताह में दो दिन उपवास करना पडता था; वहां अब एक समय के लिये भी भोजन छोडने की आवश्यकता नहीं पडती।

५. अब मुझे बडी कडाके की भूख लगती है, और भोजन भी पहले से अधिक कर लेता हूं।

६. अन्य सारे धातु विकार दूर हो कर [जिने के निराकरणके लिये मैंने संपादक वैदिक धर्म को भी पत्र द्वारा उपाय पूछा था, और तब उन्होंने शीर्षासनादि बतलाये थे,] स्वप्न दोष की मात्रा भी नाम मात्र को रह गई है, और मुझे पूर्ण विश्वास है कि, थोडे दिन में उसका भी अत्यंताभाव हो जायगा।

७. अत्यंत हर्ष की बात यह है, कि इन दिनों में मुझे शिर पीडा आदि कुछ भी व्याधी नहीं हुई। यदि कभी आशंकाभी हुई, तो झट शीर्षासन कर डाला, यह आदर्श मेरे सामने हमारे पूज्य प्रो० कृष्ण कुमार जी एम्. ए. तर्काचार्य ने रखा। उन का कथन है, कि आसन करते हुए उनको लगभग ४ वर्ष हुये, तब से उनको कोई किसी प्रकार का रोग नहीं हुआ जब की सैकडों भाई कोई अश्विन मासमें मलेरियादि से पीडित रहते हैं।

८. जब मैं अधिक पढते पढते थक जाता हूँ तो शीर्षासन लगाता हूं, जिससे मस्तिष्क की शक्तिका रक्तके साथ पुनरावर्तन होकर पुनः दिमाग ताजा हो जाता है। इस रीतिसे मेरे साथी बहुतसे विद्यार्थी लाभ उठा रहे हैं।

९. प्राणायाम पूर्वक त्राटक करनेसे चक्षुओंकी शक्ति भी अधिक बढ गई है।

१०. गुरुकुल में रहकर मैंने कुच्छ ब्रह्मचारियों को भी शीर्षासन, जानुशिरासनादि सिखलाये, जिससे उनकी तिल्लीको अधिक लाभ प्रतीत होता था। आगे पुनः लिखा जायगा। इस हेतु विद्यार्थियों से मेरा विशेष आग्रह है, कि बैठे बैठे उदर दरी को न बढाकर—

समझो प्रभुका यह शासन है।
सुखस्वास्थ्य-प्रदायक आसन है।



विपरीत करणी तथा शीर्षासन।

(लेखक—श्री. पं. ठाकुरदत्तशर्मा वैद्य, लाहौर)

(१) कपाली आसन, शीर्षासन, या वृक्षासन—किसी किसीने एक टांगपर खडे होनेको वृक्षासन कहा है, इसमें एक कंबल पर दोनों हाथ मिलाकर रखं कर, शिर

उन पर रख कर, पांव आकाशकी ओर सीधे कर देने चाहिएं। इस तरह हुए हुए अब इसकी शकलें और भी करली जाती हैं। जैसे-एक टांग नीचे कर ली तो उसका नाम "एक पाद वृक्षासन" हुआ, दोनों टांगें नीचे कर लीं इसका नाम "अर्ध वृक्षासन" हुवा; दोनों पांव आमने सामने मिल लिये उसका नाम "ऊर्ध्व संयुक्त पादासन" हुवा; अब टांगोंसे पद्मासन लगाया तो "ऊर्ध्व पद्मासन" हुआ।

(२) इस आसनमें अधिक अभ्यास होनेसे ऐसा संभव हो जाता है कि, हाथ छोड दिये जावें और केवल सिरके बल जमीन पर खडे रहें, इसका नाम "मुक्त हस्त वृक्षासन" है। यह बहुत कठिन है, गर्दन पर सब बोझ पडता है। कई कहते हैं कि मुक्त हस्तासन इतनाही है, कि हाथ शिरके नीचे नहीं रहें यह सुगम है। इस प्रकार आसन लगा कर भी टांगोंकी वह संपूर्ण शक्लें बदली जा सकती हैं।

(३) इसका एक तीसरा सिलसिला भी है, इसमें हाथोंके सहारे खडा हो जाना है, गर्दन पर जोर नहीं पडता, बाहु पर पडता है। इसका नाम "हस्त वृक्षासन" है। इसके साथ ही वही सब शक्लें बदली जा सकती हैं। इसका अभ्यास भी देरीमें होता है। देर तक दीवारका सहारा लेना पडता है।

(४) विपरीत करणी मुद्रा—मुद्राको आसनोंके साथ मिलाया नहीं जासकता। प्रत्येक मुद्रामें कुंभक आवश्यक होता है। मुद्राका विशेष प्रयोजन भीतरी शक्तियोंको जगानेका होता है। कुंभक साथ न हो तो यह आसन हो जाता है, अगर कुंभक साथ हो तो यह विपरीत करणी मुद्रा होगी। प्रथम हाथका सहारा देना पडता है, परंतु वास्तवमें हाथका सहारा न देना चाहिये। गर्दन तथा कंधोंपर सब बोझ डाल-कर सीधा खडा होना चाहिये। किसी किसीका मत है कि टांगें सिरके ऊपरसे भूमिको आ लगें, तब "सर्वांगासन" होता है। "विपरीत करणी मुद्रा" यही है। इसके वास्ते प्रमाण पुस्तकोंसे नहीं दिया जा सकता है। जो मुद्राका प्रयो-जन है वह इससे ठीक सिद्ध होता है। इस वास्ते यही विप-रीत करणी मुद्रा है। मेरा विचार है कि इस प्रकारसे आसन किया जावे तो वृक्षासनके लगभग सब लाभ पहुंचते हैं। पचनशक्ति इससे तेज होती है। जठराग्नि बहुत ही बढ जाती है और कुंडलीका उत्थान शीघ्र करती है। उत्तम यह है कि दोनों वृक्षासन और सर्वांगासन किये जावें इससे बडा लाभ होगा।

इन आसनोंके गुणोंके संबंधमें मुझे कुछ नहीं कहना है, मेरा विश्वास है कि "वैदिक धर्म" में जो कुछ लिखा गया है वह सब उचित है।

शीर्षासन का एक विचित्र अनुभव।

लेखक—श्री. गणपतराव गोरे आर्य्य, जेकब आबाद, सिंध।

मैं गत तीन वर्षों से सक्कर बराज डिव्हीजनमें सर्वे कर रहा हूं, इस वर्ष कच्छके रणके समीपही सर्वे हो रही है, सर्वे क्षेत्र थरपारकर के उजडे बयाबानों में है, जहां कि दस दस कोसके अंतरेमें डाक्टर किंवा हकीम नहीं मिलता, पानी मिलना बहुत ही कठिन है !!

इन अवस्थाओं में कार्य करते हुवे हाजी साहब डिनों दारोगे को आक्टोबर १९२३ के मध्यमें अचानक पेटदर्द हुवा और तीसरे दिन तडप तडप कर ७९ मील मिठडाऊ वाह के पडावपर मर गया !!!

आक्टोबरके अंतमें मेरी सर्वेपार्टी नं० २ भी उसी मंजिल पर आ उतरी, मेरे खलासियोंने उपरोक्त दारोगा के शोक-मयी मौत का समाचार सुना ही था, पडाव पर पहुंचके जी तोड बैठे ! मौतकी तसबीर सामने खडी होने लगी !!

अचानक ३ नवम्बर १९२३ के सायंकालके ३ बजे के समय खलासी मेरे तंबूमें चिल्लाते आये कि "आदमी मरता है अगर कोई दवा कर सकते हों तो करो !" खलासी को जाकर देखा कि भूमि पर गडगडा कर लेट तथा चिल्ला रहा

है !! खब्बड बलोच के जीने की आस तो सभी खला-
सियों ने छोड रखी थी, मैं स्वयं भी बहुत घबराया, कोइ
वैद्य तो था नहीं कि बीमारी का पता लगता और औषधि
देता ! मैं कुछ दवाइयें मंगवा कर पास रखा करता हूं, परंतु
पेट सूलकी औषधि मेरे पास उस समय नहीं थी। आपके
" वैदिक धर्म " मासिक पत्रमें आसनोंके संबंधमें लेख पढा
था, अवाचित विचार आया कि, इसे शीर्षासन तो करा कर
देखूं ! खब्बड बलोच का चिल्लाना और लोटना बराबर जारी
था, फिर उसमें शीर्षासन करनेका बल तथा धैर्य्य कहां ?
इस लिये दो खलासियों को कहा के इसको दोनों टांगोंसे
पडकर शिरके बल खडा करो !

बस ! उलटा टांगनेकी देर ही थी कि बीमार चंगा होने
लगा ! चिल्लाना धीरे धीरे कम होता गया और एक मिनि-
टके अंदर अंदर उसने चिल्लाना बिलकुल ही बंद कर दिया !!!
खब्बडका मुख नीचेकी ओर था और खलासियों की भीड
छौलदारी में हो रही थी इसलिये चिल्लाना बंद होते ही मेरे
तथा कई अन्य लोगोंके मनमें एकसाथ ही विचार आया कि
खब्बड बलोचने प्राण त्याग दिये !! झट, नीचे झुक कर
पूछा कि " अब कैसा लगता है ? " शांतिसे उत्तर आया कि
" दर्द कम हो रहा है !!! " यह सुन कर सब प्रसन्न हुवे !

एकंदरं दो या तीन मिनिट तक यह जबरदस्ती का शीर्षा-
सन करने के पश्चात् खब्बडने कहा—" अब मुझे लिटा दो,

दर्द बिलकुल बंद हो गया है ! ! ! " उसे लिटाया गया, दूसरी कोई दवा नहीं की गई, आज ३ मास हुवे, अबतक भलाचंगा है।

दर्द गुर्देका था या पेटका अथवा इन दोनोंसे पृथक कोई अन्य विकार, यह मैं नहीं हो कह सकता !

परंतु तीन मिनिट के भीतरही मौतके मुंहसे निकल कर पूर्ण आरोग्यता पाना एक करामात ही तो थी ! ! !

खलासी कहने लगे कि यदि बाबू गणपतराव हाजर होते तो दारोगा भी कभी न मरता।

परंतु मेरे मनसे उस समय स्वाध्याय मंडल तथा मासिक पत्र " वैदिक धर्म " के लिये आशीर्वाद निकल रहे थे, कि जिनके पुण्य प्रतापसे मुझे इस तरह एक मुसलमान भाई की जान बचाने का अवसर प्राप्त हुवा ! ! !

यह शुभ समाचार मुझे उसी समय आपको देना उचित था, परंतु अपने आलस्य के लिये क्षमा प्रार्थी हूं।

भवदीय,

गणपतराव गोरे

सिव्हिल हास्पिटल के समीप

जेकबआबाद, सिंध.

शीर्षासनसे कर्णरोग का दूर होना।

(लेखकः—श्री. म. गो० पूरनदासजी)

मेरा कान इतना बहता था कि कोई भी प्रख्यात दवासे फायदा न हुआ और शरीर भी जीर्ण होता चला था, मगर शीर्षासन करनेसे छः महिनों में कर्णरोग समूल नष्ट होगया। आराम तो प्रथम सप्ताहमें ही मालूम पडने लगा था।

शीर्षासनसे दृष्टिको भी लाभ हुआ। पहिले मैं विना आयनकके पढ नहीं सकता था। परंतु शीर्षासन करनेसे अब मुझे आयनक की आवश्यकता रही नहीं है।

मैं १५ महिने शीर्षासन कर रहा हूं और प्रति दिन ४० मिनिट कर सकता हूं। इससे उक्त लाभ हुआ है।

सर्व शरीर चिकनासा मालूम देता है, धातु पतनादि दोष दूर होगये हैं। इस लिये मैं शीर्षासन को "योगामृत" नाम देता हूं।

शीर्षासन के लाभ.

(लेखक—श्री. पं. रामचन्द्र विद्यारत्न, मुख्याधिष्ठाता, गुरुकुल होशङ्गाबाद)

वैदिक धर्मके पाठको! मैं आज आपकी सेवामें अपने अनुभव किये केवल शीर्षासन के लाभ निवेदन करूंगा!

मैंने स्वयं शीर्षासन एक वर्षसे करना प्रारम्भ किया है, और अभीतक विशेष कार्यवश उसको अधिक न बढाकर केवल १५ मिनट तक का अभ्यास किया है; परन्तु इतने से ही एक वर्ष में मेरे शरीर का परिवर्तन अपूर्व होगया है, मैं जब उन स्थानों पर गया हूं, जहां १ या १॥ वर्ष पूर्व गया था; तो लोगों ने चकित होकर आश्चर्य से कहा कि क्या सचमुच आप वही हैं जो पहिले थे, और मुझे स्वयं भी ज्ञात होता है, कि मैं पहिले आधा घण्टाभी व्याख्यान देनेमें थक जाता था, थोडा परिश्रम करनेसे थकावट मालूम होती थी, वह अब सब दूर होगये, मैं अब दो घण्टे तक आनंदपूर्वक व्याख्यान दे सकता हूं, और प्रत्येक कार्य में उत्साह, स्फूर्ति और प्रेमका संचार होता है, मुझे–पहिले कब्ज, नेत्ररोग, कर्णरोग अधिक होते थे, वे सब दूर हो गये। मेरे एक मित्र जिन्होंने मेरे साथ ही शीर्षासन प्रारम्भ किया था और उन पं० पूर्णानन्द जी की अवस्था ४२ वर्षकी है, बाल सब सफेद हो गये थे, किन्तु अब धीरे धीरे आगे के बाल सफेदसे काले होने लगे हैं। मैंने हरदा, खण्डवा, भुसावल, इन्दौर, खरगोल, वडवानी, नागपुर, वर्धा आदि अनेक स्थानोंपर आसन पद्धति पर सैकडों व्याख्यान दिये हैं और लोगों को करके दिखाये हैं, मेरे उद्योग से जिन लोगों ने भी आसन करने प्रारम्भ किये थे, उन्होंने मुझे अपने विचार १, २ मास पश्चात् ही बडे, उत्साह व आशाजनक शब्दों द्वारा सुनाये हैं, खण्डवाके

एक मास्टर साहबने मुझे बताया कि, दो मास के ही शीर्षासनसे उन्हे यह लाभ हुवा, कि पहिले वे रात्रि को बारीक अक्षर नहीं पढ सकते थे, किन्तु अब आनन्द पूर्वक पढ सकते हैं, उन्हें कुछभी कष्ट अब ऐनक न लगानेसे नहीं होता है, मेरे साथमें एक भजनीक है, जिन्हें पहिले स्वप्न दोष होता था, किन्तु अब १, १॥ मासके अभ्याससे उनका यह दोष सर्वथा दूर हो गया, और उन्हें अपूर्व सफलता प्राप्त हुई। मैंने अपने गुरुकुलके सभी ब्रह्मचारियों को लगभग एक वर्षसे ही आसनों का अभ्यास प्रारम्भ कराया है, उनके शरीर पर उनका अपूर्व अनुभव प्राप्त हुआ है। प्रायः किसी ब्रह्मचारी को भी जिसने नियमसे आसन किये हैं, इस वर्ष में कभी जुकामतक भी नहीं हुवा, उनके चेहरे पर पूर्ण चमक, और शरीर अवयव, हाथ, पैर, कन्धे आदि सब सुडोल, और सुशोभित मालुम होने लगे हैं। गुरुकुलके ब्रह्मचारियों को स्मरण शक्ति के विषयमें भी विशेष सफलता प्राप्त हुई है, अतः कोई अत्युक्ति न करते केवल अपने व अपने भाईयों के, अनुभव केवल शीर्षासन पर लिखते हुए दिखलाया है, कि यदि आप स्वप्नदोष, प्रमेह, कर्णरोग, नेत्ररोग, शीर्षरोग, अपचन, दूर करके समस्तशरीर को सुडौल वनाना हो, बुढापेको भी दूर करके काले बाल करना हो, और पूर्ण युवा अवस्था का आनन्द भोगना चाहते हैं, जीवन को सफलता पूर्वक, आनन्द उत्साह के साथ विताना चाहते हैं, तो कमसे कम शीर्षासन

का अवश्य प्रारम्भ कर दीजिये, और यदि सभी आसन थोडे थोडे प्रारम्भ करदें, तो फिर देखिये कि आपको क्या सफलता प्राप्त होती है, और जीवन का सुख कितना प्राप्त होता है।

शीर्षासन और तिल्लीका दर्द।

(लेखक—श्री. पं. वंशीधर विद्यालङ्कार,)

५६ आलिपुर रोड
कलकत्ता
८।३।२४

मान्यवर पण्डित जी !

सादर नमस्ते.

आज हमारे घर में एक विचित्र घटना घडी है, जिसने लोगोंका योग के आसनोंमें जबरन विश्वास कराया है। मैं उस घटना का उल्लेख "वैदिक धर्म" के पाठकोंके आगे रखना चाहता हूं, आशा है कि आप इसे अपने योग्य पत्रमें कृपया स्थान देकर कृतार्थ करेंगे। इस पत्रके लिखनेका एक मात्र यही तात्पर्य है कि, जिससे वीती घटनाओंको जानकर सर्व साधारण का यौगिक आसनों के प्रति अधिकाधिक विश्वास हो। आपने ही सब से पूर्व इन साधनोंको सर्व साधारण के सन्मुख उपस्थित किया है, इसलिये ऐसे अवसर पर मैं आपको

हृदय से धन्यवाद दिये विना नहीं रह सकता। उक्त घटना इस प्रकार हुई—

बाबू तुलसीदास जी दत्त के घरमें उनका एक नौकर जिसका नाम "मदन" है और उडीसा का रहनेवाला है, उनकी गौओं का कार्य करता है। आज ८-३-२४ शनिवार को प्रातःकाल जब दूध दुहकर अन्दर दूध की वाल्टी देने जाता था, अचानक उसके पेटमें बडी ही जोरसे तिल्लीका दर्द उठा। उसने दूध की बाल्टी एकदम रख दी और बडी जोरसे कराहने लगा। फिर धीरे धीरे से चलकर एक कोने में वह ६॥ फूट का लम्बा जवान सिमट कर पड गया, और उसने आहें भरनी आरंभ कीं।

उसकी आहें सुनकर मेरे दो छात्र रमेश और भूमीश मेरे पास भागकर आये और कहने लगे कि, पण्डितजी! मदन के पेटमें बडी जोर से दर्द हो रही है वह चीखें मार रहा है। आस पास के घरोंके व्यक्ति भी मौजूद हो गये, उस दर्द के अवसर पर कोई कुछ कहने लगा और कोई कुछ। देखनेवाले उसके कराहने को सुनकर घबरा जाते थे। इसपर मैंने कहा कि, इसे 'शीर्षासन' कराना चाहिये।

पहिले तो लोगों को बडी हँसी आई, कि इस उल्टे खडे होनेसे क्या होगा? यहां तक कि वह नौकर "मदन" भी इसके लिये तय्यार नहीं हुवा!!

अन्तमें मेरे बहुत कहनेपर "मदन" ने मान लिया और मैंने और एक दो आदमियोंने मिल कर उसे "शीर्षासन" कराया। तीन मिनिट तक उसे लगातार हमने खडा रक्खा, किन्तु दर्द शान्त नहीं हुआ। उसे नीचे उतारा। लोगोंने इस आसन को बडी अश्रद्धा और अविश्वास से देखा!!

फिर मैंने एक गद्दा रखकर एक वार शीर्षासन करनेके लिये फिर अनुरोध किया। इस बार ठीक विधिपूर्वक हाथोंके ऊपर उसके सिरको रखवाकर ठीक तरह सीधा खडा किया। उसके पेटको मैं बडे ध्यानपूर्वक देखता रहा। उसका पेट बडा सख्त था। मैं ने "मदन" से पूछा कि, क्यों दर्द कैसी है? उसने उत्तर दिया "बढ रही है"।

मैंने कहा तो फिर अभी अच्छी हो जायगी उसने मुख बन्द कर के नाकसे श्वास लेना प्रारंभ किया। मैं ने उसके पेटको हाथ लगाया हुआथा। तीन मिनट के बाद देखा कि उसके पेटमें अब सख्ती नहीं है, वह बिल्कुल नर्म हो गया है। मैंने पूछा मदन! दर्द है? उत्तर मिला—"अच्छी हो गई" धीरे धीरे हमने नीचे उतार दिया। वह धीरे से खडा होगया और फिर पूर्ववत् हंसने लगा! उसके बदन में किसी प्रकार की कमजोरी नहीं हुई।

इन ६ मिन्टों के बीच में उसका स्वास्थ्य बिल्कुल अच्छा होगया! वह पहिली तरह से ही काम काज करने लग

गया ! ! सबको यह देखकर बडा अचम्बा हुआ ! ! ! सब कहने लगे कि "यह सब योग के आसनों की करामात है ! !"

उस समय मुझे, अपने विद्यार्थियों, तथा लोगों के मुखसे यह सुनकर बडी प्रसन्नता हुई कि, "आज से हमारा योग के आसनों में बडा विश्वास हो गया है ॥'

ब्रह्मचारीजीके दो पत्र ।

(१) आसनों का अनुभव ।

(लेखक—श्री. ब्र. रामचंद्रजी)

गत दो मासों की छुटियोंमें मुझे बाहर जानेका अवसर प्राप्त हुआ था । बाहर जाकर मैंने जहां मुझे अवसर मिला है, मैंने जनता में आसन करके दिखाएं हैं । लोगों ने बहुत पसन्द किए और इस ओर प्रायः सब की ही रुचि हुई, प्रतीत होती थी । आसन दिखाने के साथ प्रत्येक आसन का लाभ भी बताता रहा हूं । आसन कर चुकने के बाद बहुत से लोग मुझसे मिलते और व्यायाम के बारे में पूछते, जिन की चर्बी बहुत बडी हुई थी, उन के लिए समुचित आसन करने के लिये कहता था । वर्तुलासन, हस्तपादासन, पार्श्वि-

मोत्तानासन, मयूरासन आदि बहुत सुगमतासे होने वाले जो एक बार देखकर किए जा सकते हैं। इसके साथ साथ नकसीर और जुकाम के लिए अपने आप स्वयं अनुभूत नासामूल शोधन, नाकमें पानी चढाना, इसी प्रकार मुख से पानी लेकर नाकके रास्ते निकालना, फिर नासामूल को शुष्क करना, इत्यादि भी बताता रहा हूं; और स्वयं करके दिखाता रहा हूं। ये बात मैंने कई बार अनुभव की है, कि मुझे जब बुखार की हरारत हुई है, मैंने आसन किए और बुखार जो आता मालूम होता था, आसन करने के बाद उसका पता भी नहीं कि, कहां चला गया ? अभी थोडे दिनों की बात है, मैं यात्रासे वापिस आता हुआ कैम्बलपुर गया। वहां कि समाजमें मुझे आसन दिखानेका अवसर मिला। रविवार का दिन था। शनिवार की सायं काल मुझे ऐसा भोजन मिला जिसमें नमक और मीठा दोनों मिले हुए थे। ऐसा भोजन पहिले कभी नहीं खाया था, कि एक ही चीज में मीठा भी हो और नमक भी हो। सवेरे उठते ही तबीयत ठीक नहीं मालूम पडी। आकाश में बादल छाए हुए थे, ठंडी हवा चल रही थी, मुझे ठण्ड लगने लगी, अपनी नित्य क्रियाओं से निवृत्त हुआ। शरीर अस्वस्थ मालूम पढता था। मैं समाज में गया, मुझे ठंड लग रही थी, मैं कम्बल ओढ कर बैठ गया। यज्ञ हवन के बाद मंत्रीजीने मुझे आज्ञा दी कि आइये, आसन दिखाइये। मैं ने अपने सब कपडे उतार दिए। केवल कच्छा

पहिने रखा। पहिले पंच प्राण जय, तदनन्तर आसन फिर कुछ दण्ड, वगैरा दिखाए। ध्यान के दूसरी ओर लग जाने से ठंड का अनुभव नहीं हुवा था। जब सब खतम कर चुका, तब मैंने अपने आपको बिलकुल स्वस्थ पाया। कहां पहिले कम्बल की ठंड थी, आलस्य और अंगडाई आ रही थी। अब सब की सब दूर भाग गयी!!! किसी का कुछ पता न चला! मेरे साथ ही एक और ने भी पिछली रात मीठे नमकीन चावल खाए थे, उसकी भी बहुत बुरी हालत हुई। उस ने डॉक्टर की शरण ली। दवाई कराने के बाद भी वो अपने आप को स्वस्थ नहीं पाता! पर मैंने आप को बिलकुल स्वस्थ पाया; पहिले मैंने समझा हुआ था, ये अचानक होता रहा है, पर अब निश्चित तौरसे अनुभव कर लिया है कि, आसनों से ऐसे शक्ति उत्पन्न होती है, जो बुखार को आनेसे रोकती है। वो कौनसा आसन है, जिसमें सबसे अधिक बुखार रोकने की शक्ति है, यह बात अभी तक पता नहीं लगी।

(२) अपानजय।

सेवामें पाठकोंके लाभार्थ मैं एक लेख प्रस्तुत करता हूं। लेख यद्यपि विशेष अन्वेषण पूर्वक नहीं लिखा गया तथापि अनुभव पूर्वक अवश्य है। अन्य किसी महानुभावने यदि इस विषय में कोई विशेष अनुभव प्राप्त किया हो, मेरे अनुभव में की कमी को पूर्ण करे और पाठकों को लाभ पहुंचाकर पुण्यके भागी होवे।

मेरा विषय जो पाठकों के सन्मुख प्रस्तुत करने लगा हूं 'अपानजय वा अपानायाम' है। अनेक वेदमन्त्रों में प्राण और अपान शब्द आते हैं। वहां प्राण शब्द का अभिप्राय जीवनोपयोगी उत्तम पदार्थ, उत्तम गुणों से है, जो लेने योग्य हैं। और अपान शब्दसे त्याज्य वस्तु, देहेंद्रिय बुद्धि मनको हीन करनेवाले भाव हैं। प्राणके साथ उत्तम भाव, सद्विचार, उत्तम गुणोंका अपने अन्दर धारण करनेका और अपानके साथ नीच भाव, असद्विचार, दुर्गुणोंको बाहर करनेका भाव आता है। प्रत्येक देही जब तक जीवन धारण करता है, अपने अन्दर (प्राण) ग्रहण करनेकी शक्ति रखता है। प्राणों की तरह उत्तम नीच भाव, अच्छे बुरे विचार, उत्तम सात्विक व नीच तामसिक गुण लेता ही लेता है। अर्थात् लेने की शक्ति प्रबल होती है, अपेक्षा छोडने के। क्यों कि हम देखते हैं कि दूसरेके धन ऐश्वर्य को देखकर अपनाने की इच्छा होती है पर द्रव्यापहरण दूसरे के अधिकारों को छिनना, इत्यादि बातों से स्पष्ट है, कि जगत् में ग्रहण करने की शक्ति बहुत प्रबल है इसीलिये कहते हैं, कि—

"प्रकृतिर्हि दुस्त्याज्या"

जिसका का जैसा स्वभाव बन गया है, वह उस से छूटता नहीं, तथा—

"स्वभावो दुरतिक्रमः"

स्वभाव का बदलना असंभव नहीं, पर कठिन अवश्य है।

कोई आदमी किसी का नकल करता है, या किसी को कोई बुरी आदत पड जाए, तो बुरी आदत का हटाना उस के लिये अत्यंत कठिन हो जाता है। अपनी बुरी आदत-से लाचार हो जाता है, कष्ट उठाता है, पर छूटती नहीं। त्याग करना सचमुच अत्यन्त कठिन है तपस्वी ही त्यागी हो सकता है। त्यागना एक तपस्या का काम है, चाहे धन ऐश्वर्य का त्याग हो। चाहे किसी बुराई का त्याग हो। त्यागना दोनों का कठिन है। धनादि को तो भला सभी चाहते हैं। उस के विना संसार में जीवनयात्रा दुष्कर हो जाती है। लेकिन जिस चीज को कोई चाहता नहीं, जिससे किसी को कुछ भी लाभ नहीं, ऐसी बुरी आदत को छोडना भी बडा मुशकिल कार्य है। छोडना चाहने पर नहीं छूटता। त्याग भाव तपस्या के विना नहीं हो सकता। एक ओर जहां ग्रहण करने की शक्ति अपने अन्दर लेने की शक्ति इतनी प्रबल है, दुसरी ओर वहां त्याग भाव का अत्यन्त अभाव है। इस का अधिक विचार न करते हुए, अपने विषय पर आता हूं। मनुष्य देह में पांच "महाप्राण" हैं। और पांच "अल्पप्राण" हैं। प्राण एक होता हुआ भी स्थान और कार्य भेद से पांच प्रकार का है। पांचों प्राणों में से अपान पर ही विचार करना है।

जिस प्रकार प्राणों की गति ठीक रहने पर आदमी स्वस्थ तथा आनन्दित रहता है, और प्राणगति के ठीक न रहने पर

दुःखी होता है, ठीक इसी प्रकार अपान के ठीक रहने से आदमी स्वास्थ्य सुख लाभ कर सकता है। अपान गति के ठीक न रहने पर उस से अधिक कष्ट पाता है, जो कि बुरी आदत को छोडना चाहता है, पर छूटती नहीं। यहां भी आदमी दिन भर भोजन अपने अन्दर लेता रहता है। लेनेकी शक्ति प्रबल है। पर अन्दर लेकर उस का त्याग नहीं कर सकता। त्यागने की शक्ति नहीं है। प्राण का स्थान कण्ठ से लेकर हृदय पर्यन्त है। और अपान का स्थान नाभि से नीचे गुदा तक है। हम जितना भोजन करते हैं, वह सब का सब ही रस नहीं बन जाता, परन्तु आंत्रादि उस में से जितना रस निकाल सकते हैं, उससे बचा हुआ मल रूप निस्सार रह जाता है। कई बार अनेक बीमारियों में जब कि आन्त-डियें सारा रस निकालने में असमर्थ होती हैं, तो बहुतसा सार भाग भी रह जाता है। इस बचे हुए शरीर के लिए निरुपयोगी निस्सार भाग को अपान ही शरीर से बाहर करता है। और भी जितने मल हैं, मूत्रादि वे भी सब अपान द्वाराही बाहर किये जाते हैं। परंतु क्यों कि अपान हमारे वश में नहीं होता, इस लिये जब अपान अपनी ठीक गति में नहीं रहता, मल को बाहर करने में असमर्थ हो जाता है। इस लिये कब्जी की शिकायत प्रायः रहती है। कभी कभी अपान अधो मार्ग से न जाकर ऊपर चढ जाता है, जिससे तीव्र शिरोवेदनाएं होती हैं। निद्रा, आलस्य भ्रम मूर्छादि हो जाते हैं।

तथा विशेष यह है कि कभी कभी अपान के ठीक न रहने से पेट में गड गडासा होता है, पेट में अफारा हो जाता है, पेट में बडी सख्त दर्द शुरू हो जाती है। ये सब विकृत अपान के कार्य हैं। एक आदमी नित्य प्रातःकाल शौच के लिये जाता है, पर उसे शौच खुल कर नहीं आता। जोर का काम न होते हुए भी जोर से काम लेता है, और फिर भी हार जाता है, अन्तमें पानी का लोटा उलटा कर लौट आता है। शौच निवृत्ति से वह उस आनन्द को अनुभव नहीं करता, जो खुलकर शौच होने से मिलता है। वह अपने शरीर में भारीपन, आलस्य, किसी कार्य की ओर रुचि न होना, खाने पिने में अनिच्छा अनुभव करता है। मैं पहिले लिख चुका हूं कि, हम में त्यागने की शक्ति बिलकुल कम है। मल त्यागने की इच्छा रखते हुए और साथ ही क्रिया द्वारा यत्न करते हुए भी त्याग नहीं सकते। देखिए, यह त्याग की शक्ति, त्याग, वैराग्य, किस प्रकार से लाभ किया जाता है, इस ओर न जाकर मैं सिर्फ अपने विषय से सम्बन्ध रखने वाले त्यागका ही वर्णन करूंगा। उत्तम स्वास्थ्य वह है, जिस में चित्त प्रसन्न रहता है, भूख लगती है, किसी प्रकारके कार्य करने में उत्साह होता है। ये सब बातें तभी हो सकती हैं, जब कि "पेट देव" को भी एक बार या दो बार बीचमें आराम मिले। जिस के पेट को हर समय अपने माल के संभालने की चिन्ता लगी रहती है, उसे कभी सुख

नहीं मिलता । इस लिये कई हमेशा के लिये डाक्टरों के स्थिर ग्राहक बने रहते हैं । नाना प्रकार की औषधि सेवन करते हैं, पर सब व्यर्थ । उन दवाइयों से कोई और रोग होगया, तो उसका फिर इलाज होता है । उस के ठीक होने पर या उस के साथ एक और ही बिमारी आलगती है। बस, दवाइयों का सिलसिला जारी रहता है । इस रीतिसे इन सब आपत्तियाका सिलसिला जारी रहता है । इस कारण इन सब आपत्तियों से बचने के लिये पेट जो सब सुखों और दुःखों का मूल है, अपने वश में करना चाहिए । इसके कई तरीके हैं ।

सब से प्रथम "उदर चालन ।" अर्थात् पेटको हिलाना जुलाना, पेटमें गति पैदा करना है । इस के अभ्यास के लिए प्रथम प्रथम पेटको सामने की ओर जितना फूल सके फुलाएं, फिर सिकोडें, नाभिको रीड की हड्डीके साथ लगाने का यत्न करें । इससे जहां अपनका अनुलोमन होता है, उसके साथ वीर्यरक्षा भी होती है । अब दोनों हाथों को पेट पर रखें । अंगूठा पीछे रहे और अंगुलियां सामने की ओर हों । अब पेट को पूर्ववत् फुलाएं और बाएं हाथ से दबाव डालें दाइ ओर; और बाएं हाथ से दबाव डालें पीछे की ओर; अब पेट को पीछेसे दाएं पासे फुलाएं इसी प्रकार कई रोज तक अभ्यास करनेसे पेट स्वयं बाएंसे दाईं ओर होकर पीछे होकर बाईं ओर आयगा । इसी प्रकार दाईं ओर से चक्कर लगाने का अभ्यास करें ।

इसी प्रकारसे पेट को ऊपरसे नीचे गतियां देनी चाहिएं और फिर नीचे से ऊपर की ओर, इस प्रकार जब पेट चारों ओर खूब अच्छी तरह हिल जुल सकेगा, तो पेटके अन्दर का पदार्थ बलात् बाहर होने लगेगा। मल जो कि आन्तों में चिप का होता है, दबावसे बाहर धकेला जाता है, इस प्रकार पेट की सफाई हो जाती है। पेट की और बहुतसी व्यायामें हैं, उनसे केवल पेट की नाडी नस बलवान् होती हैं। उदर शुद्धि नहीं। अपान को वश में करनेकी एक विधि बता दी है। अब दूसरी देखिए।

सावधान खडे होकर श्वांस को बिलकुल बाहर फैंक कर कोखके दोनों पासों को भीतर खींचने का यत्न करें, मध्य प्रदेश नाभिस्थल ऊपर उभरा रहे। उस का अभ्यास करने के लिये सामने कोई टेबल हो, या अन्य वस्तु जिसे खूब अच्छी तरह पकड ऊपर उठा जा सके। अब हाथों के बल सीधा ऊपर उठा जाय और वहीं क्रिया की जाय, नल स्वयं बाहर आगे निकलेगा। अब विना टेबल के दोनों हाथों को घुटनों पर रखकर श्वांस बाहर फैंक कर कुक्षि प्रदेश अन्दर खींचे। अब जब नल निकलने लग जाय तब श्वांस चाहे अन्दर हो चाहे बाहर। श्वांस को रोक कर नल निकाला जा सकता है। और उसे आग पीछे खुब अच्छी तरह हिलाया जा सकता है। इस क्रिया को बहुतसे लोग जानते हैं, पर उन्होंने इससे कोई विशेष लाभ नहीं उठाया। यह नौली

क्रिया बस्तिके लिये अत्युपयोगी है । अपानके वश में होने पर बस्ति बडे आरामसे हो जाती है। यदि पेट में किसी प्रकार की गडबड हो। शौच ठीक तौरसे न हो, बुखार की हालत होने लगे, या अतिसार दस्त वगैरा आने लगे, तो बस्ति एक परम औषध है। बस्ति करने के दिनों में लिखा है कि, मूंग की दाल की खिचडी में घी डालकर खावे। इस बस्ति क्रिया को सुगम करने के लिये यह अपानायाम सीखना चाहिये। जिस प्रकार प्राणायाम में पूरक, कुम्भक, रेचक हैं, उसी प्रकार अपानायाम में भी ये क्रियाएं हैं । फर्क इतना है कि, इस में कुम्भक नहीं होता। कुम्भक कर तो सकते हैं, पर उस अवस्था में अनेक उपद्रव आ खडे होंगे। पेटमें अफारा सा हो जायगा, तीव्र दर्द होगी, इत्यादि। इस लिये इस में कुम्भक क्रिया न करनी चाहिये । यदि ऐसी अवस्था हो जाय तो उस समय पेट को बिलकुल ढीला छोड देनेसे वायु बाहर हो जाता है, अपानायामके कई आसन हैं, जिन में अपान स्वयं ही वश में होने लगता है। आपने बहुत वार कुत्ते या बिल्ली को अंगडाई लेते देखा होगा । ठीक उसी प्रकार की स्थिति में हो जाइए । हाथोंको सीधा आगे पसारिये। जमीन पर ठोडी या गाल लगे और घुटने अलग अलग कर के रखें, कमर को जितना हो सके झुकाएं । अब अपान को बाहर करनेका यत्न करें। उसके बाद स्वयं ही अपान अन्दर आनेका यत्न करेगा। नौलि क्रिया की तरह नल निकालने

पर अच्छी तरह होगा। इसमें अभ्याससे पेटकी सख्त दर्द, पेट में गुड गुड होना, अफारा और सिर दर्द, इत्यादि निश्चय-से दूर हो जाते हैं; यह मैंने कईयों पर परीक्षा किया है। इस को चारों ओरसे देखें, सब अवस्थाओंमें अपानायाम हो सकता है।

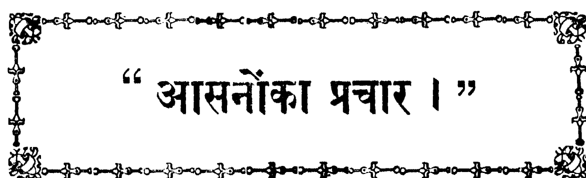
२ शीर्षासन करते समय टांगों को बिलकुल ढीला छोड दें, अपान स्वयं बाहिर होने की कोशिश करेगा, आप पेटको फुलाए और सिकोडे, तो अपान का अनुलोमन होगा। शौच साफ होकर आयगा।

३ सर्वांगासन की उस स्थितिमें जब की वे दोनों घुटने कानोंके पास हों, या दोनों टांगे ढीली कर के पेट पर छोडी हों तब अपान स्वयं गति करता है। उस समय पेटके फुलाने और सिकोडनेसे अपानायाम किया जा सकता।

४ उत्कटासन या जिस आसन में शौच निवृत्तिके लिये बैठते हैं, उस अवस्था में अपान यदि बलवान् हो तो बाहर निकल तो जाता है, पर अन्दर नहीं होता। पूरक करनेसे अन्दर आ सकता है। अन्य स्थितियोंमें अन्दर रुका हुआ वायु स्वयमेव बाहर हो जाता है, पर इस स्थिति में जरा मुश-किल हो जाती है। इसलिये देरतक भीतर न रोक कर बाहर कर देना चाहिये। इस अपानायामसे विकृत वायु का अनु-लोमन होनेसे शौच भली प्रकार हो जाता है, आन्त्रस्थ वायु बाहर हो जाती है। पेट दर्द या सिर दर्द, पेटंका अफारा,

गुड मुड, सबके सब विना किसी दवाई दूर हो सकता है। अपान का भीतर आकर्षण तभी होता है, जब की प्राण बाहर हों। इसलिये प्राणकी रेचनावस्थामें अपानायाम ठीक हो सकता है।

इस प्रकार टूटे फूटे शब्दोंमें यह विषय पाठकोंके सन्मुख उपस्थित किया है। मुझे पूरा निश्चय है, यदि पाठक इस ओर ध्यान देंगे तो पूरा लाभ उठा सकेंगे।



"आसनोंका प्रचार।"

(लेखक—श्री. ला. लालचंदजी)

योगके आसनोंका आपके कारण बहुत उत्साह पूर्वक प्रचार हो रहा है, और देखा जाता है, कि जो लोग विधि पूर्वक योगके आसनों को करते हैं, वे कामके वेगको रोकने में समर्थ हो जाते हैं, और बुद्धि भी निर्मल हो जाती है। मैंने अपने पर और अन्य मित्रोंपर अनुभव लिया है, योग्य रीतीसे साधन करनेसे बहुत लाभ हुए हैं, जिन लडकोंको स्वप्नदोष हो जाया करते थे, उन्हें आपके लिखे व्यायामोंसे अद्भुत लाभ पहुंचा है। मैंने और पिताजीने हरिद्वार में श्री. भाई झब्बालालजी से शीर्षासन सीखनेका यत्न किया है।

मुझे सूर्य भेदी व्यायामसे गत वर्ष शिमले में उदर रोगसे निवृत्ति हुई थी और हरिद्वारमें भी मैं खूब स्वस्थ रहा। मैं वहां हरिद्वारसे दूर अढाई मील जाकर व्यायाम, आसन, प्राणायाम और संध्या किया करता था।

मुझे सूर्य भेदी व्यायामसे बहुतही लाभ हुआ है और मैं इस विषय में अधिक जानना चाहता हूं।

मुझे पूर्ण आशा है कि जो मनुष्य सूर्यभेदी व्यायाम करेंगे उनको अवश्य लाभ होगा।

अनुभूत योग।

[लेखक—" प्राण-पुरी "]

वैदिक धर्ममें कुछ समय से योग विषय में, जिन महानुभावोंने कुछ अभ्यास किया है, अपने अनुभवके आधार पर लेख निकल रहे हैं, मुझे भी कई सज्जनोंने इस ओर प्रेरा और वैदिक धर्मके कई अंकोंको मैंने स्वयं भी पढा। मैं कोई योगी नहीं हूं, तौभी योगाभ्यासीयों का श्रद्धालू अवश्य हूं, और उन महानुभावोंके सत् संगसे इस में कुछ वर्ष पूर्व अभ्यास भी किया था, उस समयका जो अनुभव है, और जिस रीतिसे मैंने अभ्यास किया था, और शरीरकी प्रथम तथा पश्चात् अवस्था का वर्णन ही इस लेखमें होगा।

मुझे कई वर्षोंसे यह इच्छा थी कि, कोई योगाभ्यासी मिले, तो उनकी शरणमें रह कर उनकी आज्ञानुसार इसमें अभ्यास करूं । इसी इच्छाके वशवर्ती होकर अनेक स्थानोंमें गया, जहां किसीका नाम सुना उसीके दर्शनार्थ यात्रारंभ की, कई स्थानोंमें तो मुझे निराशता ही हुई, और कई स्थानोंमें आशा पूर्ण होने पर भी अन्य साधन उपलब्ध न होनेसे लौटना पडा । अन्तमें इसी भांति भ्रमण करते करते एक ग्राममें सर्व प्रबन्ध ठीक होगया, और उसी स्थानपर मैंने एक वर्ष ठहरकर अभ्यास किया । इस लेखमें उसी एक सालका अनुभव वर्णन करूंगा ।

---

[१] शारीरिक अवस्था ।

जिस समय मैंने अभ्यास आरंभ किया था, उसी समय गुरुजीने आज्ञा की, प्रथम शरीरको तोल लो, ताकि आगे को शरीरके लघु होनेका ठीक ठीक निश्चय हो सके । उसकी आज्ञानुसार मैंने वजन किया, उस समय मेरे शरीरका बोझ लगभग दो मण २८ सेर था । सबसे प्रथम मुझे धौती करनेको कहा गया । इसमें यह स्मरण रहे, पुस्तकमें धौतीका आकार ४ अंगुल चौडाई और १५ हाथ लंबाईमें लिखा है, परंतु जो धौती मुझे दी गई वह अर्ध हाथ चौडी और ९ हाथ लंबी थी । इसके न्यूनाधीक के विषयमें गुरुजीकी सम्मति

इस प्रकार है। जो धौती ४ अंगुल चौडी होती है, उसमें गांठ पड जाने का संदेह बना रहता है, और जो चौडी अधिक होती है, उसमें गांठका कोई संदेह नहीं होता। इस लिये धौती चौडी अधिक रखके लंबाईमें न्यून करलेना चाहिये। दो चार दिन तक तो धौती हलक से आगे उतरने का नाम न लेती थी; किंतु उसके पश्चात् उसने यह दुराग्रह तो छोड दिया, परंतु हलकके आगे जाकर लौट आने में ही प्रयत्न करती रही। शनैः शनैः हलकसे नीचे जानेकी मात्रा अधिक होने लगी, और लगभग दो सप्ताहमें धौती ठीक होने लग गई।

इसी अन्तरमें गुरुजीने आज्ञा दी थी कि, इसके साथ साथ नेती भी करनी चाहिये। अतः नेती भी आरंभ की गई और इसमें कोई विशेष कठिनाई नहीं पडी। यह जलदी ही ठीक हो गई। इसमें यह स्मरण रहे प्रथम तो केवल डोर ही थी और पीछे उसके अंतिम भाग में कच्चे सूत्र के धागे यथा संभव मात्रा से डाल लीये गए थे, ताकि नाक का छिद्र अछी तरह में साफ हो जाय।

जिसके साथ साथ नौली कर्म का भी अभ्यास करता था। जिस समय धौती, नेती, ठीक ठीक हो गई, उस समय बस्ती कर्म भी किया था परंतु बस्ती कर्म प्राचीन रीतिको छोड कर अर्वाचीन रीति अर्थात् यंत्र द्वारा ही किया था। इनके साथ साथ कपालभाती भी करता था। इसमें इतना स्मरण रखना चाहिये, हिम ऋतु में अर्थात् जब शीत अधिक हो उस समय

धौती के स्थान पर ब्रह्म दातन की जाती है । जिसका लाभ धौती के सम है, और करनेका ढंग सहल है और उसमें शीत का भी कोई भय नहीं है ! क्योंकि अभ्यास के समय अधिक शीत से शरीर को बचाना आवश्यक है ।

[२] आसन ।



इन कर्मों के अतिरिक्त आसन भी किया करता था । क्योंकि आसन योग का एक विशेष अंग है ! जो जो आसन किया करता था उनके नाम यह हैं ।

(१) सिद्धासन—इसका बर्णन वैदिक धर्म में हो चुका है, इसका अभ्यास घण्टोंका होना चाहिये, क्योंकि प्रायः प्राणायाम इस आसनसे किया जाता है ।

(२) पद्मासन—इसका अभ्यास भी पर्याप्त होना चाहिये, जिसने भस्त्रिका प्राणायाम करना हो, उसे तो यह आसन अत्यावश्यक है।

(३) कपाली आसन–जिसे वैदिक धर्म में शीर्षकासन लिखा है ।

(४) विपरीत करणी—यह आसन भूमिपर पीठके बल लेटकर पैर उपर उठाकर कमर के नीचे हाथों का सहारा देकर किया जाता है, इसका फल कपाली से मिलता जुलता है ।

(५) मयूरासन—पेट के रोगों के किये और आमाशय की अग्नि को ज्वलन करने के लिये है।

(६) पश्चिमतानासन–जिसे वैदिक धर्म में जानु शीर्षकासन नाम दिया है, इसको मैं कोई आध घंटा तक कर सकता था।

इनके अतिरिक्त कुछ आसन और भी थे, परंतु उनकी यहां कोई आवश्यकता प्रतीत नहीं होती है। इन आसनों के करने से अनेक रोग दूर होते हैं, और जो अभ्यास करता हो, उसके लिये तो आसन अत्यन्त आवश्यक हैं। यदि न करें, तो प्राणायामादि भी भली भांति नहीं कर सकता है, और प्राणायामादि से जो शरीर में थकावट आजाती है, उसे भी इन्हीं आसनों से दूर करना पडता है, और अधिक थकावट होने पर "शवासन" करना चाहिये। यह आसन केवल थकावट को दूर करने और शरीर को आराम देनेके लिये ही किया जाता है।

आसन करते समय और उपरोक्त कर्मों के समय इस बात का ध्यान रखना चाहिये कि, यह यदि पहले न हो सकें तो उस दिन छोड कर दूसरे दिन फिर करें। इसी भांति धीरे धीरे करना चाहिये, इसमें शीघ्रता सर्वथा न की जाय, यदि कोई शीघ्रता के लोभ से बल से करेगा, तो सुख के स्थान में दुःख पावेगा और पश्चात्ताप करना पडेगा।

---

[३] भोजन ।

धौतीके समय से ही भोजन मध्यान्ह को ही किया करता था और रात के समय आध सेर दुग्ध पीया करता था। धोती के साथ वह नियम रखना चाहिये कि, रातके समय कोई नमक-वाली वस्तु न खाई जाय। क्योंकि प्रातःकाल धोतीके साथ उसका कुछ अंश लगने से गले को कष्ट होता है। और धौती में अधिक श्वेत कफ आता है, और अग्र भाग में पित्त प्रधान व्यक्ति के तो पित्त निकलता है, और वात प्रधान के वात ही निकलता है। और पंद्रह वीस दिन के पीछे रोटी छोड कर प्रातः काल मूंग चावल की खिचडी ही खाया करता था। जब अभ्यास करते लगभग दो मास व्यतीत हो गए, तो खिचडी भी छोड दी थी। उस समय भोजनार्थ प्रातःकाल एक छटांक घृत और आधशेर दूध पिया करता था, और सायंकाल को तीन पाव दूध ही पिया करता था। यही ८ प्रहर का आहार था और कुछ नहीं खाया करता था।

[४] प्राणायाम ।

जिस दिन धौती कर्म का कार्य आरंभ किया था, उसी दिनसे प्राणायाम भी करने लग गया था। प्रथम दिन २,

दुसरे दिन १०, तीसरे दिन १५, इसी क्रमसे प्राणायाम बढता जाता है, और प्रातः, मध्यान्ह तथा सायंकालको किया करता था। उपरोक्त संख्यासे बढाते बढाते ८० प्रातःकाल, ८० मध्यान्ह, और उतने ही सायंकालको किया करता था और आहार प्रथम मध्यान्हके प्राणायामके पश्चात् और रातको भी प्राणायामके पीछे किया करता था।

---

[५] बंध।

प्राणायाम करते समय बंध भी साथ ही किया करता था। अर्थात् जिस समय पूरक किया करता था तो मूल बंध करता था, और कुंभक के समय जालंदर और रेचक के साथ उड्डीयान बंध करता था। यह बंध और इतनी रीति वैदिक धर्म में पहले लिखी जा चुकी है; इस लिये इस समय लिखने की कोई आवश्यकता प्रतीत नहीं होती। जिस समय यह प्राणायाम करता था; उस समय सिद्धासनसे ही बैठता था। और शरीर को सीधा रखने के लिये जो पग ऊपर हो उसी के पासवाला हाथ पग पर रख कर स्थूणा लगाया करता था, ताकि शरीर किसी ओर को झुक न जाय।

चार मास संशोधक प्राणायाम करके, पीछे इस.के साथ साथ भस्त्रिका प्राणायाम भी किया करता था, और इस प्राणायाम

में सिद्धासन के स्थान पर पद्मासन लगाना चाहिये। क्योंकि इसके लिये ऐसी ही विधी है, और यदि किसी दिन गरमी अधिक प्रतीत होती थी, तो उस समय उसे शीतली अथवा सीत्कारी प्राणायाम से शांत कर लिया करता था। और संशोधक प्राणायाम को छोड कर शेष तीन प्राणायाम ही किये थे, और कोई नहीं किया, इस लिये मैं इन्हीसे ही परिचित हूं अन्यसे नहीं।

[६] फल।

उस समय जो फल हुआ, उसका वर्णन करता हूं। क्योंकि पूर्व केवल साधन ही साथ लिखे हैं, उनसे क्या लाभ हुआ यह प्रत्येक पाठक की अभिलाषा होगी। अतः फलका वर्णन करना आवश्यक है।

मैं पूर्व भी लिख चुका हूं, जिस समय मैंने अभ्यास आरंभ किया था, उस समय मेरा शरीर लगभग २ मण २८ सेर भारी था। धीरे धीरे शरीर घट कर अंतमें मेरा शरीर लगभग १ मण २३ सेर रह गया था। अर्थात् १ मण ५ सेर बोझ न्यून हो गया; इतना बोझ कम होने पर भी आश्चर्य यह था, मुझे चलने, फिरने, पढने, लिखने, बैठने, उठने, में कोई कठिनाई प्रतीत न होती थी। बल्कि यह सारे काम पूर्व से भी अच्छे होते थे। हा, एक अंतर था, जिस का वर्णन करना आवश्यक है, मैं

वह काम जो बल से किया जाता है अच्छी रीति से नहीं कर सकता था और शीघ्र ही थकावट हो जाती थी, इस लिये जिन सज्जनों के शरीर अति भारी हैं, जिनें चलने फिरने में भी कष्ट हो जाता है, उन्हें यह क्रियाएं नियंमं पूर्वक:करने से महान लाभ होगा।

जिस समय अभ्यास करते करते पांच मास व्यतीत हो गये, उस समय नाद स्फुट हुआ, कई पुस्तकों में नाद स्फुर का समय तीन मास लिखा है किंतु मुझे सफलता ३ मास में न हो कर पांच मास में हुई थी। संभव है, किसी का शरीर लघु होनेसे इतना समय न लगे, क्योंकि शरीर की अति स्थूलता भी एक प्रतिबंधक है।

यह एक भांति का शब्द है, जो श्रोत्रमें उत्पन्न होता है और इसका अक्षरों में लिखना मेरे लिये असंभव है। और इसके प्रकट होने पर सावधान होकर मन को इसी में लगाना पडता है, और उस समय मन इस शब्द की ओर इतना लगता है, जो आश्चर्य प्रतीत होता है। किसी किसी समय तो अधिक समय व्यतीत होने पर भी यही पता लगता है कि, अभी ध्यानार्थ बैठा हूं परंतु घडी देखने से पता लगता है कि, अभी कई घंटे वीत गए हैं। यह सर्व ही स्वसंवेद्य है, अतः अधिक लिखना उचित नहीं है। इस समय एक अति विचित्र बात हुई थीं, जिसका कई दिन तो मुझे भी पता.न लगा कि, क्या बात है। अंत में बार बार के साक्षात्कार और गुरुजी के

कहने से निश्चय हुआ। वह घटना इस प्रकार है। जब कि मैं प्राणायाण और ऊपर वर्णित क्रियाएं किया करता था, कई मास के पश्चात् यह अवस्था हो गई। मैं जिस समय ध्यानार्थ बैठता था, अथवा वैसे आराम के लिये लेटता था, तो एक प्रकार की मीठी मीठी गंध आया करती थी, और किसी समय वह नहीं आती थी! मुझे आश्चर्य था कि, जिस कमरे में मैं रहता हूं, उसमें कोई सुगंधित वस्तु नहीं, और पास एक वाटिका थी, परंतु उसमें भी कोई सुगंधित पुष्प उस समय नहीं दीखते थे और जब बन्द होती थी; तो भी वह सर्व पूर्ववत होते थे, अतः कोई पता न लगता था कि, गंध क्यों बन्द होगई। अंत में एक दिन अचानक एक संदेह हो गया, और कुछ दिन पीछे वही निश्चय में परिणत हो गया। वह इस प्रकार हुआ, एक दिन मध्यान्होत्तर समय में ध्यान से उठा तो गंध प्रतीत होती थी, अनेक यत्न करने पर भी कारण का बोध न होता था, कुछ समय उसी गंध का आनन्द लेकर स्नान के लिये उठा, स्मरण रहे मैं उस समय स्नान कई दिवस पीछे किया करता था, प्रति दिवस नहीं करता था। कूप पर गया जल निकाला और स्नान करके अपनी कोठडी में आकर फिर बैठ गया, और उसी समय पता लगा कि, इस समय गंध नहीं। इसका कारण क्या है, किंतु कुछ पता न लगा, कोई आध घंटा पश्चात् प्राणायाम का समय था, वह आया, तो मैं अपने कृत्य में लगगया।

गरमी की ऋतु थी, उस कृत्य से पसीना आ गया, और, उस स्वेद को यथाविधि हाथों से मल शरीरपर सुखा दिया, और ध्यान मैं बैठ गया, और जब ध्यान से चित्त हटाया तो पता लगा कि इस समय गंध आरही है। फिर संकल्प विकल्प की धारा चलने लगी। उन्हीं में एक संकल्प यह भी हुआ कि, कहीं पसीना ही तो कारण नहीं है! परंतु निश्चय होना कठीन था। वह गंध लगातार आती रही, और जिस समय स्नान किया, उसी समय फिर दूर हुई। तब मे निश्चय होगया कि, यह गंध स्वेद का ही है, अन्य कोई कारण नहीं है। साधारण रीतिपर पसीने में दुर्गंध होती है, न कि सुगंध, इसी लिये मैंने गुरुजी से भी पूछा उन्होंने भी यही उत्तर दिया, जो आपने सोचा है वही ठीक है। उसके पश्चात कई वार देखा जिससे सर्वथा निश्चय होगया कि, अभ्यास में एक समय स्वेद में भी अतिमधुर सुगंधि होती है। संभव है कई सज्जन इस पर विश्वास न करें, परंतु मुझे इसमें कोई संदेह नहीं है। और मेरे लिये वह इतना ही सत्य है, जितना वन्हि में उष्णता का होना सत्य है।

इसके अतिरिक्त किसी किसी दिन मन इतना चंचल हो जाता था, अथवा ऐसे संकल्प होते थे, जिन्हें मैं सर्वथा न चाहता था। उनका पता भी उन्ही दिनों में लग गया, और लोगों के स्वयंपाकी होनेका भी मैं उस समय से पक्षपाती हो गया। मैं उस समय भोजन तो खाता न था, केवल घृत

और दुग्ध पर रहता था, दुग्ध आश्रम में गौएं थीं, उनसे मिलता था, और घृत ग्राम से मोल लेया होता था। जिस गृह में घृत बनाने वाले जिस स्वभाव के होते थे, उनके घृत खाने से मेरे मनमें भी संकल्प उन मनुष्यों के प्रभाव से शून्य न थे। साधारण अवस्था में इस बात का कोई पता नहीं चलता, किंतु, अभ्यास के समय में यह बातें अति प्रगट होती हैं। इस लिये जिसने अभ्यास अधिक करना हो, उसके लिये आवश्यक हो जाता है, वह स्वयंपाकी हो अथवा उसके सेवक साथी भी वैसे ही उच्च विचार वाले हों!

अंत में एक बात और लिख कर मैं अपने विषय को समाप्त कर दूंगा, एकांत में बैठे हुए कई वार अचानक कोई संकल्प उठता था, उस संकल्प के लिये कई वार तो भ्रम हो जाता था, कि स्वप्न में यह संकल्प हुआ है अथवा जाग्रतावस्था में; परंतु वह कुछ ही दिनों पीछे सच्चे हो जाते थे। यह बात अनेकवार हुई, और मुझे जहांतक स्मरण है, मैं कह सकता हूं, यदि अधिक नहीं, तो प्रति शतक ८० उस अवस्थाके उस भांति के संकल्प ठीक हो जाते थे। जिनका कि प्रथम कोई ख्याल भी न होता था।

अब एक बात और लिखनी शेष रही, मेरे साथी एक और साधु थे, जो अभ्यास किया करते थे, अभ्यास से पूर्व भी उनका शरीर बडा दुर्बल था, और वह नित्य प्रति वैद्यों और डाक्टरों को देखा करते थे। उनकी चिकित्सा हकीमोंने

की और उन्होंने वैद्योंकी औषधियों का सेवन किया, तथा डाक्टरों की सम्मातिसे लाभ उठाया, तो भी उस शूर वीर रोगी को कुछ लाभ न हुआ। कोई सिल (राजयक्ष्मा) कहता था, और कोई कोई इसी भांति का और भयानक नाम बता देता था। यदि वह किसी दिन लोभवश १ पावभर दूध पीलें तो उनकी वह गति होती कि वह फिर दूध के दर्शन से ही घबरा उठते। उन्हें भी सलाह दी गई, जब रोगसे मरना है, तो अभ्यास करने में क्या हानि है ? उन्होंने इसे मान लिया, और पूर्व वर्णित विधि से ही अभ्यास आरंभ किया। और जिस समय अभ्यास करते छः मास व्यतीत हो गये, उस समय उनका शरीर तो पूर्ववत् कृश था, परंतु उनके चलने फिरने की शक्ति इतनी बढ गई, जो किसी किसी दिन वह २५ मील चक्कर काट कर थकनेका शब्द जिह्वापर न लाते थे ! ! और पूर्व जो दूध को विष समजते थे, इस समय दो सेर दूध पी जाते थे, और कोई विकार न होता था। अर्थात् पूर्व जिन्हे जुकाम, खांसी, निर्बलता, अक्षुधा, दुर्बलता आदि ने आकर चारों ओर से घेर रखा था, अब उनके पास इनमें से कोई भी न फरकती थी। उनका रोग जिसे वैद्य और डाक्टर असाध्य कहते थे, इसी योगाभ्यास से दूर हो गया था।

एक बात मैं अपन विषय में भूल गया था, वह यह है, अभ्यास से पूर्व मैं पढते समय ऐनक लगाता था, जब ७

मास अभ्यास करते होगये, तो ये ४ से हट कर मेरा शीशा नं. २ पर आगया, और वर्ष के अंत में १ के शीशे से पढता था और कई बार विना ऐनक भी समाचार पत्र पढ लेता था। जहां प्रथम अक्षरों का पता ही न चलता था, अब अभ्यास छोड दिया है, तो भी मेरी दृष्टी पहले से कहीं अच्छी है।

लेख अधिक लंबा होने से घबराकर मैं उपसंहार में इतना ही लिखना पर्याप्त समझता हूं, मेरा यह अनुभूत विषय है, और इस से अनेक लाभ होते हैं, यदि आगे आवश्यकता हुई, तो मैं इन्हीं बातों को विस्तार से लिख दूंगा।

मनुष्य पुरुषार्थ प्रयत्नसे निःसंदेह अपनी उन्नति कर सकता है।



व्यायाम और प्राणायाम।

(१)

(लेखक—" श्रीकृष्ण-योग-मंडल-निवासी ")

मनुष्य मात्रके संपूर्ण व्यवहार के लिये " बल " की आवश्यकता है ! बल के विना मनुष्य कुछभी कर नहीं सकता, इसलिये मनुष्यने जिस प्रकार अन्य सुखसाधनोंकी खोज की है, उसी प्रकार उसने अपनी शक्तिका संवर्धन करनेकी विविध युक्तियां भी ढूंढकर निकाली हैं। बल की आवश्यकता

कितनी है, बल कैसा बढाया जा सकता है, बढाया हुआ बल किस प्रकार स्थिर किया जा सकता है, इत्यादि विषयों में उन्होंने बहुत ही प्राचीन कालसे विचार करके बलवर्धक नियमोंका उन्होंने निश्चय किया है। इसीका नाम " व्यायाम शास्त्र " है।

वास्तविक रीतिसे देखा जाय तो कहना पडता है कि, " आयुर्वेद और योगशास्त्र " ये दो शास्त्र भी शरीरका बल बढानेके साधक ही हैं। परंतु इन दोनों शास्त्रोंमें स्थूल शरीरकी शक्ति बढानेकी प्रक्रियाओंकी अपेक्षा " आयुर्वेद " में रोगोंसे बचनेकी रीति और रोगचिकित्सा वर्णन की है, तथा दूसरे " योगशास्त्र " में प्रधानतया " आध्यात्मिक उन्नति "का उपायही कहा है। इन दोनों शास्त्रोंका ज्ञान केवल शाब्दिक नहीं है, परंतु क्रियात्मक ही है तथा इनका ग्रंथभंडार भी बहुत ही बडा है। तथापि प्राचीन कालकी ऋषिलोगोंकी व्यायाम पद्धति जैसी की वैसी इस समय किसीभी ग्रंथमें उपलब्ध नहीं है, जो इस समय इधर उधर थोडासा व्यायामविषयक ज्ञान मिलता है और प्रक्रियां भी चली हुई हैं वह प्राचीन पद्धतिका विकृत रूप है। इस लिये प्राचीन कालमें भीम जैसे शक्तिशाली पुरुष जिस विधिसे बनाये जाते थे उस विधिका पता इस समय लगाना आवश्यक है।

प्राचीनतम ग्रंथ देखनेसे पता लगता है कि उस समय "बालसंगोपन"का विशेष प्रबंध था। और प्राचीन पाठ्य-क्रममें इस विद्याकाभी शिक्षण दिया जाता था। बहुधा इस शिक्षाविधिमें ही (१) बालकका शक्तिसंवर्धन करनेकी रीति, (२) शारीरिक बलके विकास की विधि, (३) छोटे शरीर में प्रचंड शक्ति रखनेकी पद्धति, (४) बडे शत्रुके साथ छोटे शरीर वालेका भी मुकाबला करनेका द्वंद्वकौशल्य, आदि बातोंका प्राचीन व्यायाम पद्धतिमें समावेश था, ऐसा प्राचीन ग्रंथ देखनेसे स्पष्ट पता लग जाता है, यद्यपि प्राचीन व्यायाम शास्त्रके ग्रंथ इस समय उपलब्ध नहीं है।

पौराणिक और इतिहासिक ग्रंथोंमें प्रचंड शारीरिक शक्तिसे युक्त बलवान मनुष्योंका वर्णन है, और मल्लयुद्धका वर्णन भी अनेक स्थानपर है इससे स्पष्ट होता है कि, प्राचीन कालमें व्यायाम शास्त्र और मल्लविद्या प्रगल्भ अवस्थामें थी। राजे महाराजे और सरदार आदिभी उक्त विद्याओंमें स्वयंही प्रवीण थे। तथापि प्राचीन विद्याओंके संशोधकोंके प्रयत्न अभीतक इस विद्याकी खोजके लिये नहीं हुए, यह एक विलक्षण बात है। क्योंकि अन्य विद्याओंकी अपेक्षा यह विद्या सब जनताके उप-योगी है, इसमें क्या संदेह है ? "गुरुकुल" में ब्रह्मचारी जाकर रहता था, इस "ब्रह्मचर्याश्रम"में न केवल वह विद्याका अध्ययन करता था, परंतु वह शरीरकें विकासके व्यायाम भी सीखता था और आरोग्य प्राप्त करनेके नियम

अपनाता था। यही कारण है कि उस प्राचीन समयके लोग अतिदीर्घ आयुष्यका अनुभव करते थे, और इस समय इतनी प्रगति होनेपर भी आयुका प्रतिदिन क्षय ही हो रहा है।

मध्यकालीन भारतवर्षका विश्वसनीय इतिहास उपलब्ध नहीं है, तथापि जो मिलता है उससे स्पष्ट विदित होता है, इस मध्ययुगमें भी प्रचंड शारीरिक शक्तिसे संपन्न लोग इस देशमें थे। गत १७ वी शताब्दीके समयतक भी हम देखते हैं कि इस देशके लोगोंमें विलक्षण शारीरिक शक्ति थी। परंतु इस मध्य कालमें जो व्यायाम पद्धति थी उसका भी ज्ञान इस समय किसीको नहीं है। इस लिये इतिहास संशोधकोंको उचित है कि, वे इतिहासके कागजोंमें इस विद्याकी भी खोज करें।

स्वराज्यसंस्थापक श्री शिवछत्रपतिके समयसे मराठोंका राज्य नामशेष होनेके समयतक भी व्यायामकी ओर जनताका बहुत ध्यान था। यद्यपि उस समयके कई खेल और कई व्यायाम आजभी किसीको विदित नहीं हैं, तथापि २०० वर्षोंके आखाडे इस समय भी विद्यमान हैं और वे अपने व्यायाम और कुश्तीके पेंच गुप्त रखते हैं; इसलिये इस व्यायामपद्धतिका ज्ञान इनसे प्राप्त होना संभव है। तात्पर्य यह है कि इस दृष्टिसे संशोधकोंको प्रयत्न करके ज्ञान प्राप्त करना अत्यंत आवश्यक है।

आजकलकी व्यायामपद्धतिमें जोर, दंड, बैठक, मुद्गल, जोडी, मलखांब, कुश्ती, आदि मुख्य प्रकारके व्यायामके हैं। इस रीतिसे व्यायाम करनेवाले इस समयमें भी बहुत हैं, परंतु न्यूनता इस बातकी है कि तत्वज्ञानकी दृष्टिसे इनका विचार करनेवाला उनमेंसे एकभी नहीं है। व्यायामका तत्व, व्यायाम का शरीरके अंग प्रत्यंगोंपर परिणाम, प्रत्येक अंगका विकास करनेकी योजना, सहस्रों मनुष्योंपर व्यायामका अनुभव देखने और अपना बल बढाकर उसको अतिदीर्घ कालतक अपने अंदर रखनेवाला प्रचंड शक्तिसे युक्त पुरुष प्रायः देखनेमें नहीं आता। क्यों कि इस दृष्टिसे विचार करनेका अभ्यासही हमारे लोगोंको नहीं है। इसलिये हमारे पहिलवानोंमें तथा बलवानोंमें इस शोधक तत्व दृष्टिका उदय होनेकी अत्यंत आवश्यकता है।

" ब्रह्मचारीकी दिनचर्या " का विचार करनेसे ही पता लग सकता है कि ऋषिकालमें विद्यार्थियोंके स्वास्थ्य और बल संवर्धन करनेके विषयमें गुरुकुल में कितना विशेष प्रबंध था, और कैसा सूक्ष्म दृष्टिसे विचार किया जाता था। विद्यार्थीको घरमें रखकर ही पढाया नहीं जाता था, उसको गुरुकुलमें भेजना आवश्यक था, इस एक नियममें भी " आरोग्यका बडा भारी तत्त्व " है। नगरोंकी तंग गलियोंकी आबहवा की अपेक्षा अरण्यमें जो गुरुकुल होते हैं; उनका जलवायु कितना अच्छा होता है, इसका अनुभव शहरनिवासी लोग कर सकते हैं। इसके अतिरिक्त गुरु-

कुलका अभ्यास, रहना सहना, भोजन आदिकी सादगी, नियमित अभ्यास और नियमबद्ध व्यवस्था, पवित्र विचार सुनना और शुद्धवृत्तिके साथ रहना आदि श्रेष्ठ व्यवस्थामें कमसे कम १२ वर्ष अथवा अधिकसे अधिक ४८ वर्ष रहा जाता था। इसका परिणाम मनकी शुद्धिके साथ शरीरके स्वास्थ्य आरोग्य और बलसंवर्धनपर कितना उत्तम हो जाता था, इसका पाठक ही अनुमान कर सकते हैं। इस समयमें शीतोष्ण की सहन शक्ति बढानेका ख्याल विशेष होता था, इसलिये इसप्रकारके तपके जीवनमें जो पाले जाते थे, उनको वैयक्तिक आरोग्य और बल प्राप्त होनेके साथ साथ सामाजिक कार्य करनेकी शक्तिभी प्राप्त होती थी। इससे स्पष्ट होजाता है कि, आजकल की पाठलाशाओंमें जिन बातोंका विचार भी नहीं किया जाता है, उन बातोंका क्रियात्मक अनुभव प्राचीन लोग लेते रहे हैं। शरीरका परिपूर्ण विकास होनेके पूर्व स्त्रीका विचार तक मनमें न उत्पन्न करनेके तत्वमें जो लाभ हैं, उनका जिनको अनुभव होगा, वेही गुरुकुलों के उक्त नियमबद्ध व्यवहारका महत्व जान सकते हैं। गृहस्थी होनेपरभी ब्रह्मचर्य पाला जा सकता है, परंतु ब्रह्मचर्य अवस्थामें जो वीर्यरक्षण होता है वह आयु आरोग्य और बलकी बुनियाद है। तात्पर्य यह कि ब्रह्मचर्य आश्रमकी व्यवस्थाही स्पष्ट बता रही है कि ऋषिकालमें इसविषयका महत्व कितना समझा जाता था।

यद्यपि मध्यकालीन भारतमें इन ऋषिकालीन वैदिक कल्पनाओंका प्रायः लोप ही हो गयाथा, तथापि मध्यकालीन राज-

कीय अस्वस्थताके कारण हरएकको अपना अस्तित्व रखनेके लियेही बलको बढाना अत्यावश्यक हुआ था, इसलिये उस समयके इतिहासमें भी बहुतसे पुरुष बलवान दिखाई देते हैं।

परंतु इस समयकी अवस्था कैसी है देखिये, प्राचीन ऋषिपरंपरा टूट गई है, उसके स्थानमें कुछभी अच्छी बात नहीं आई, मध्यकालीन राष्ट्रीय अंतर्युद्धोंकी गडबड रही नहीं, पारतंत्र्यके कारण लोगोंमें महत्वाकांक्षा रही नहीं, ऐसी विपरीत परिस्थितिका यह काल है। इसलिये इस समय नेताओंको बडे विचारके साथ बलसंवर्धनके प्रयत्न करना आवश्यक हैं।

कोई विद्या कितनी भी अच्छी क्यों न हो, यदि वह मूर्खोंके आधीन हो जायगी तो उसकी गिरावट ही होगी, इसमें कोई संदेह नहीं है। यही अवस्था हमारे व्यायाम शास्त्रकी हो गई है। हमारे शिक्षित मनुष्योंमें व्यायाम की रुची रही नहीं है, इतनाही नहीं, परंतु समझा ज़ाता है कि "व्यायाम" नीच लोगोंका व्यवसाय है। परंतु आजकल यह भाव थोडासा बदलने लगा है यह हमारे राष्ट्रका सुदैव निःसंदेह है। पश्चिमके देशोंमें बचपनसे व्यायामका महत्व समझाया जाता है। और लडकेसे व्यायाम करायाभी जाता है, इसलिये बडे हो जानेपर भी वे व्यायाम छोडते नहीं। हमारे देशमें बडे लोग स्वयं व्यायाम करते नहीं और लडकोंसे कराते भी नहीं। बालपनमें नियमित व्यायाम करनेका

अभ्यास न होनेके कारण वे तारुण्यमें भी व्यायाम नहीं करते; फिर बुढापेमें तो पूछनाही क्या है?

हमारी पुराणी व्यायाम पद्धतिमें सुधार नहीं होता है, इसका मूल कारण यही है कि उसका अभ्यास सुशिक्षित लोग करते नहीं। यदि सुशिक्षित लोग उसमें संमिलित हो जांयगे, तो उसमें भी नवीनता आजायगी, उसका सुधार होगा, उसकी उपयुक्तता बढेगी, उसका सर्वत्र फैलाव हो जायगा, तत्त्वदृष्टिसे उसका विचार होगा, और वह निर्दोष भी बन जायगी। शिक्षित लोग इस ओर नहीं आते, इसके कारण ही हमारे आखाडे खराब अवस्थामें हैं, बुरे स्थानमें रहे हैं और नीच लोगोंकी आधीनतामें हैं। व्यायामके उस्ताद ऐसे निर्बुद्ध होते हैं कि, वे नहीं जानते कि साधारण जनोंके लिये कितना व्यायाम लेना योग्य है, किस आयुमें कौनसा व्यायाम हित कारक है, शरीरप्रकृतिके भेदसे व्यायामका भेद होना चाहिये वा नहीं, शरीरके विविध दोषोंको दूर करनेके लिये कौनसा व्यायाम चाहिये, स्त्रियों और पुरुषोंके लिये किस किस प्रकारका व्यायाम लेना उचित है। वे बिचारे इतनाही जानते हैं कि जो आजाय उससे दंड बैठकें करवा लेना, बस्स!! होयगा! इस कारणही अपनी व्यायाम पद्धति विविध दोषोंसे परिपूर्ण है।

पश्चिमीय लोग इस समय व्यायामकी ओर अधिकाधिक ध्यान दे रहे हैं, सरकार, शिक्षित और धनिक ये सब अपना

बल, ज्ञान और धन इस और अधिकाधिक खर्च कर रहे हैं, नवीन तत्त्वोंका आविष्कार कर रहे हैं और उनसे अपनी जनताको लाभ पहुंचा रहे हैं। परंतु इस ऋषियोंके देशमें ऋषिकालकी व्यायाम पद्धतिका कोई विचार भी नहीं करता है और न इस समयकी रीतिका कोई सुधार करता है। क्या यह आश्चर्य नहीं है? यदि इस देशकी सरकार इसमें ध्यान देनेको इस समय सिद्ध नहीं है, तथापि उस दिशासे हम लोगोंको विशेष अधिक प्रयत्न करने चाहिये। इसलिये प्राचीन ऋषि पद्धति और अर्वाचीन कालका अपना अनुभव इनका संयोग करके जो हमने विचार किया है, इस लेख माला द्वारा प्रसिद्ध करनेका विचार है। हमारे विचारसे "व्यायामके साथ प्राणायामका संबंध है।" ऋषिपद्धति और आजकलकी रीतिमें यही भेद विशेष महत्वका है। इसका विचार इस लेखमालामें क्रमशः होगा।

शरीरमें शक्ति उत्पन्न करके उसका परिपोष करना और शक्ति के सहचारी गुण भी शरीरमें स्थापित करना यह व्यायामका साध्य है। यह साध्य शीघ्र, योग्य दिशासे और विना अधिक परिश्रम करके प्राप्त करनेवाले जो अन्य साधन हैं उन सबका इस व्यायाम पद्धतिके साथ संबंध है। व्यायामसे जैसा बल बढता है उसी प्रकार प्राणायामसे भी बढता है, इतनाही नहीं पत्युत व्यायामकी अपेक्षा सेंकडों गुणा अधिक शक्ति प्राणायामसे प्राप्त की जा सकती है। देखिये—

(१) बलेषु हस्तिबलादीनि ॥ २४ ॥
(२) रूपलावण्यबलवज्रसंहननत्वादीनि
कायसंपत् ॥ ४६ ॥
(३) उदानजयाज्जलपंककंटकादिष्वसंग
उत्क्रांतिश्च ॥ ३९ ॥
(४) समानजयाज्ज्वलनम् ॥४०॥ यो.द.वि.पा २४-४०

ये योगके सूत्र हैं जो बता रहे हैं कि प्राणायामसे कैसी विलक्षणशक्ति प्राप्त हो सकती है। (१) हाथीके समान बल प्राप्त करना, (२) सुंदररूप, उत्तम बल, वज्रदेह आदि प्राप्त करना, (३) उदानका जय करके उत्क्रांति प्राप्त करनी, (४) समान जयसे तेज प्राप्त करना, इत्यादि अनेक प्रकार प्राणशक्तिके हैं। आजकल भी अखबारोंमें वर्णन आता है कि फलाने आदमीने फलाने नाटकगृहमें प्राणायामकी शक्ति-द्वारा ऐसा अद्भुत सामर्थ्य बताया !! परंतु विचार करके देखना चाहिये कि उसमें सचमुच प्राणायामकी शक्ति है वा नहीं, या यह अखबारी गप्पें ही हैं। ये लोग योगका प्राणायाम जानते हैं वा नहीं और यदि जानते हैं तो कितना जानते हैं, इसकी शास्त्रीय परीक्षा करना अत्यंत आवश्यक है। लोगभी समझते हैं कि ये प्रयोग प्राणायामकी शक्तिकेही हैं। इसलिये तत्वदृष्टिसे विचार होना चाहिये कि शरीरमें बलकी वृद्धि कैसे होती है, और उसमें प्राणका कार्य कितना है। केवल व्यायाम करनेवाला मनुष्य शरीरके स्नायुओंको संचा-

लित करता है और यही अभ्यास वह असाधारण पराकाष्ठातक बढाता है। इससे उसके श्वासप्रश्वासोंकी संख्या बढ जाती है; रुधिराभिसरण जलदी होता है इससे पचन बढ जाता है, भूख बहुत लगती है, भोजन अधिक खाया जाता है और इससे स्नायु हृष्टपुष्ट हो जाते हैं। इस प्रकार शक्ति बढ जानेसे लोग कहते हैं कि यह बडा बलिष्ठ है। इसमें जो मुख्य क्रिया होती है जिससे कि सच्ची शक्ती बढती है उसकी ओर किसीका ध्यानही नहीं होता, यही आश्चर्यकी बात है। व्यायामसे श्वासोच्छ्वासोंकी संख्या बढती है, और जोरसे श्वास चलने लगते हैं, इससे फेंफडोंको अच्छा व्यायाम पहुंचता है। यदि पाठक यहां देखेंगे तो उनको पता लग जायगा कि इसमें " योग साधनकी नाडीशुद्धिकारक भस्त्रिका " ही मुख्य है और अन्य बातें गौण हैं। भस्त्रा अथवा भस्त्रिका उसको कहते हैं कि जो (भस्त्रा) धौंकनीके समान (पूरक रेचक) श्वास उच्छ्वास किये जाते हैं। योगके प्रारंभमें नाडीशुद्धिके लिये यही भस्त्रा की जाती है, परंतु प्रत्येक प्रकृतिभेदके अनुकूल की जाती है, इसीसे नसनाडीके सब मल दूर होते हैं और आरोग्य बढता है। इस प्रकार नाडीशुद्धि करनेके पश्चात् प्राणायामका अभ्यास प्रारंभ होता है, इसमें " कुंभक " की प्रधानता होती है। इस कुंभक का अभ्यास जैसा जैसा बढता जाता है वैसी वैसी उसकी शक्ति बढती है। कुंभकके साथ शक्तिका संबंध है। यह कुंभक मनमाना नहीं करना चाहिये,

परंतु गुरुके पास सीखकर योग्य विधिके साथ करना उचित है। आप देखते ही हैं कि कोई शक्तिका कार्य करनेके समय न समझते हुए कुंभक होता ही है। अथवा यों समझिये कि कुंभक के विना कोई काम होता ही नहीं—विशेषतः जिसमें अधिक बल लगता है–उस कार्यके करनेमें स्वभावतः कुंभक होता ही है। आप कोई बोझदार चीज उठानेका यत्न कीजिये, आपही आप कुंभक करना पडेगा। इतना प्राणायामका बलके साथ संबंध है।

यद्यपि आजकलके आखाडेवाले पहिलवान जानते नहीं हैं, तथापि न जानते हुए वे "भस्रा और कुंभक" करतेही हैं। (१) ये पहिलवानी व्यायाम करनेवाले लोग स्नायु संचालन को प्रधान मानते और प्राणगतिको गौण मानते हैं, परंतु (२) योग विधिमें प्राणायामको मुख्य और अन्य अंगविक्षेपोंको गौण माना जाता है यद्यपि शरीरके अवयव और प्राण ये एकके ही दो विभाग हैं, तथापि हमें देखना और विचार करना है कि उक्त दोनों पद्धतियोंमें कौनसी पद्धति अच्छी है।

इस विवरणसे इस बातकी सिद्धि हुई है कि संपूर्ण व्यायामोंका प्राणायामसे संबंध है। अब हमें विचार करके निश्चय करना है कि व्यायाम शास्त्रमें प्राणायामका कौनसा स्थान है तथा योग्य प्राणायामका उपयोग करनेसे अन्य व्यायाम भी किस प्रकार अधिक उपयोगी हो सकते हैं।

योग शास्त्रका कोई ग्रंथ आप पढिये, उसमें आप देखेंगे कि "प्राणायाम के लिये आसन की सिद्धि" होनी चाहिये अर्थात् किसी एक आसन पर स्थिर रहना चाहिये। तात्पर्य प्राणायाम के पूर्व आसनोंका अभ्यास अत्यंत आवश्यक है, अपनी प्रकृतिके अनुसार किसी भी आसन पर बहुत देर तक स्थिर बैठनेका अभ्यास होनेके पश्चात् प्राणायामका प्रारंभ हो सकता है। योगका ध्येय आध्यात्मिक उन्नति है, इस लिये यद्यपि अन्य व्यायामोंका उल्लेख योग शास्त्रमें नहीं किया गया है, तथापि आसनोंके अभ्याससे बलवर्धन सुगमता पूर्वक हो जाता है। इसके अतिरिक्त "आसनोंका उपयोग विविध रोग दूर करनेके कार्यमें बहुत होता है," यह बात अब अनुभवसेही सिद्ध है। इसका भी विचार इस लेखमालामें क्रमशः होगा।

आसनोंसे किस प्रकारका व्यायाम होता है, ऐसा प्रश्न कई पूछते हैं। पहिलवानोंके व्यायामोंमें स्नायु नसनाडी आदिको चालन दिया जाता है और आसनोंमें स्नायु नसनाडी आदिको खींचना होता है। यह दो प्रकारके व्यायामोंमें भेद है। जोर दंड बैठक आदि व्यायामोंमें थोडेसे स्नायुओंमेंही बहुत घर्षण होता है, इस घर्षण और संचालनसे यद्यपि वे स्नायु पुष्ट होते हैं तथापि उनकी अपेक्षा अन्य स्नायु बहुतही निर्बल रहते हैं। शरीरका सच्चा आरोग्य प्राप्त करनेके लिये शरीरके संपर्ण स्नायुओं और नस नाडियोंमें संचालन

और खींचाव होनेकी आवश्यकता है। पहिलवानोंके व्यायाममें सब स्नायुओंका संचालन नहीं होता और स्नायु प्रसारण तो बिलकुल नहीं होता है! इसका परिणाम यह होता है कि हजार दंड और बैठक करनेवाला आदमी पद्मासनमें बैठही नहीं सकता, किंवा अपने पांवके अंगुठे पकडकर घुटनेको नाक या सिर लगाना उसके लिये एक असंभव बात है। इतना ही नहीं परंतु कईयोंकी तो ऐसी अवस्था होती है कि उनकी कमर ऐसी सखत हो जाती है कि हाथसे पांवका अंगुठा पकडा ही नहीं जाता। जैसे युरोपीयन, खुर्सीपर बैठनेकी सदा आदत होनेसे वे, चौकी लगाकर जमीनपर बैठ नहीं सकते, उसी प्रकार अवस्था दंड बैठकोंका अति व्यायाम करने वालोंकी होती है।

नियमपूर्वक आसनोंका अभ्यास करनेवालेके स्नायु तथा नसनाडी आदिमें "लचीलापन" होता है। शरीरके आरोग्यके लिये इस लचीलेपन की अत्यंत आवश्यकता है। तथा आसनोंके व्यायामसे स्नायुओं में मृदुस्पर्श रहता हे और कठोरता नहीं होती। यह बात और है कि यह मनुष्य अपनी इच्छा शक्तिसे अपने स्नायुको समयपर सखत भी बना सकता है, परंतु अन्य समयमें उसके स्नायु मख्खनके समान नरम लगते हैं, लचीले होते हैं और पुष्टभी होते हैं। परंतु पहिलवानके स्नायु आप देखेंगे तो पत्थर जैसे होते हैं, अति व्यायामसे उनका लचीलापन और नरमाई दूर होती है। यही

कारण है कि आसनाभ्यासी आरोग्यसंपन्न और पहिलवान वैसा नहीं होता है। अब अगले लेखमें विचार करेंगे कि आसनोंसे कौनसे रोग दूर हो सकते हैं।

स्वास्थ्य-साधन।

" स्वास्थ्य " का अर्थ " स्वस्थता " अर्थात् [स्व-स्थ-ता] अपनी स्थितिसे रहना, अपनी शक्तिसे आनंद के साथ रहना। रोगी अवस्थामें मनुष्य पराधीन होता है, दवाइयोंकी शक्ति-योंपर अवलंबित रहता है। इसलिये रोगी अवस्था पराधीनता है। पराधीनता सब प्रकारसे दुःखप्रद है, और स्वाधीनता सब प्रकार का आनंद देती है। मानवी शरीरके अनेक शत्रु हैं, उनमें रोगभी एक शत्रु है। अपने शरीरको रोगरूपी शत्रुके आधीन करना और स्वयं परतंत्र होना, यह मनुष्यको कदापि योग्य नहीं। रोगरूपी शत्रुका आक्रमण जिस समय इस शरीर-पर होता है, उस समय शरीरके परमाणु और रोगके बीज, इनका परस्पर युद्ध शुरू होता है; और जिस समय शरीरका पराभव होता है, उसी क्षण मनुष्यशरीर रोगी हो जाता है। इस लिये इस युद्धमें अपने शरीरका पराभव न हो, ऐसा इंतजाम हरएक को करना उचित है।

नीरोगताके विना मनुष्य कोई पुरुषार्थ कर नहीं सकता। रोगी मनुष्य सदा बिस्तरेपर लेटा रहता है, और पराधीन रहता है। रुग्ण अवस्थाके कारण न वह अपनी उन्नति कर सकता है, और न समाज तथा राष्ट्रका हित कर सकता है। (१) " धर्म " अर्थात् कर्तव्य पालन, (२) " अर्थ " अर्थात् धनोपार्जन, (३) " काम " अर्थात् महत्वकी आकांक्षा और (४) " मोक्ष " अर्थात् स्वाधीनता ये चार पुरुषार्थ मनुष्य के लिये करने आवश्यक हैं। परंतु रोगी इन पुरुषार्थोंको कर ही नहीं सकता। इस लिये हरएक मनुष्यको आवश्यक है, कि वह अपनी स्वस्थता सुरक्षित रखे और अपने ऊपर रोगोंका आक्रमण होने न दें।

" आमय " शब्द रोग का वाचक है, इसका अर्थ यह है कि " जो आमसे बनता है, " शरीरमें अपचित अन्नसे "आम" होता है, इस आमका कोष्ठादि स्थानमें संचय होनेसे रोग उत्पन्न होते हैं। इसलिये वेदमें स्वास्थ्य का नाम " अन+आम+य " (अनामय) है। देखिये—

अयक्ष्मं च मेऽनामयच्च मे
जीवातुश्च मे दीर्घायुत्वं च मे ॥ य० १८।६

" मेरी नीरोगता, स्वस्थता, जीवन और दीर्घआयु यज्ञसे बढे। " इस मंत्रमें " अनामयत् " शब्द रोग रहित अवस्थाका द्योतक है। इसी अर्थका वाचक " अनमीव " [अन्+अमीव] शब्द है, इसका तात्पर्य भी उक्त प्रकार ही है।

" आम " से उत्पन्न होनेवाली बीमारी " अमीव " कहलाती है, और उस रोगी अवस्थासे भिन्न स्वास्थ्य की अवस्था " अनमीव " शब्द बता रहा है। यह अवस्था हरएक को प्राप्त करनी चाहिये। इस विषयमें वेदकी प्रार्थना देखिये—

स त्वं नो रायः शिशीहि मीढ्वो अग्ने सुवीर्यस्य ॥
तुविद्युम्न वर्षिष्ठस्य प्रजावतोऽनमीवस्य शुष्मिणः ॥

ऋ. ३।१६।१

" हे (अग्ने) तेजस्विन्! तूं हम सब को ऐसा धन दो, कि जो उत्तम (सुवीर्य) पुरुषार्थ से युक्त, (प्रजावतः) संतान युक्त, (अनमीवस्य) नीरोगतासे युक्त और [शुष्मिणः] बलसे युक्त हो। " तात्पर्य ऐसा धन नहीं चाहिये, कि जो वीर्यहीनता, रोग, निर्बलता और संतान न होने की अवस्था उत्पन्न करनेवाला हो। प्रत्युत ऐसा धन चाहिये कि, जो नीरोगताके साथ उत्तम संतति, पौरुष प्रयत्न करनेकी हिंमत, और बल की वृद्धि करनेवाला हो। तात्पर्य वेदकी दृष्टिसे [१] स्वास्थ्यके साथ [२] उत्तम जीवन, [३] दीर्घायुत्व, [४] सुप्रजा निर्माण की शक्ति, तथा [५] बलका संवर्धन, और [६] उग्रता चाहिये। यही वैदिक आदर्श है। हरएक वैदिक धर्मी मनुष्य को इसकी सिद्धता करनेका यत्न करना अत्यावश्यक है। इसकी सिद्धता करनेके लिये योग साधन का मार्ग ऋषिमुनियों द्वारा निश्चित हुआ है; उसके अनुसार चलनेसे हरएक मनुष्य उक्त गुणोंका विकास अपने अंदर कर सकता है।

योगके आठ अंग हैं उनमें पहिले दो अंग यम और नियम योगसाधन की तैयारी के लिये हैं। वैयक्तिक और सामाजिक तैयारी करनेके लिये नियमोंका पालन करना होता है। आगेके दो अंग "आसन और प्राणायाम" हैं और इनका शरीरके स्वास्थ्यके साथ अत्यंत संबंध है। शरीर को नीरोग बनानेके लिये ही प्रायः ये दो अंग हैं। प्राणायाम का मानसिक स्वास्थ्य के साथ भी संबंध है, परंतु उसका यहां विशेष विचार करनेकी आवश्यकता नहीं है। तात्पर्य आसन और प्राणायामों का उत्तम अभ्यास करने से मनुष्य अपना स्वास्थ्य सुरक्षित रख सकता है। योग में जो आगेके चार अंग हैं, उनका संबंध मानसिक स्वास्थ्य के साथ विशेष है। योग्य समय इसका विचार हो जायगा।

मनुष्यकी पुरुषार्थ शक्ति मुख्यतः आरोग्य, बल, बुद्धि, विचार, सामर्थ्य, व्यवहार-चातुर्य, सचाई, निष्कपटता, और उद्योगप्रियता के ऊपर अवलंबित है। इन गुणोंसे जो विशेष मंडित होगा, वही पुरुषार्थ की सिद्धि प्राप्त कर सकता है। आरोग्य के विना प्रबल पुरुषार्थ होना अशक्य है, यह बात सब मानते ही हैं। बुद्धि और विचार शक्तिके विना अपना ज्ञान बढना अशक्य है और ज्ञानके विना प्रतिबंध-निवृत्तिके उपाय ज्ञात ही नहीं हो सकते। व्यवहार-चातुर्य, सचाइ और निष्कपटताके विना मनुष्य इस जगत् में कोई कामधंदा ठीक रीतिसे करके उत्तम सिद्धि प्राप्त नहीं कर सकता।

उद्योग–प्रियता अर्थात् सिद्धि मिलनेतक उद्यम करने का दृढनिश्चय सब प्रकार के पुरुषार्थों के लिये अत्यावश्यक होनेमें किसी को शंका नहीं हो सकती। इसलिये योगवासिष्ठमें कहा है–

उद्यमः साहसं धैर्यं बलं बुद्धिः पराक्रमः ॥
षडिमे यस्य तिष्ठन्ति स सर्वं प्राप्नुयात् पुमान् ॥

"(१) उद्यम, (२) साहस, (३) धैर्य, (४) बल, (५) बुद्धि और (६) पराक्रम ये छ गुण जिस पुरुषमें होंगे, वह सब कुछ उन्नति प्राप्त कर सकता है।" पुरुषार्थ सिद्धि का यही मूलमंत्र है। तात्पर्य यदि पुरुषार्थ की सिद्धि प्राप्त करनी है, तो उक्त गुण अपने में बढाने चाहिये। अपने में ये गुण वृद्धिंगत करनेके लिये शारीरिक और मानसिक स्वस्थता की अत्यंत आवश्यकता है। तथा शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्यकी सुरक्षितता के लिये योगसाधन जैसा सीधा और सुगम उपाय भी दूसरा कोई नहीं है, यह बात शताब्दियोंके अनुभवसे निश्चित हो चुकी है।

सांप्रतमें शरीरस्वास्थ्य के लिये कितने उपाय प्रचलित हुए हैं, औषधि प्रयोग, व्यायाम के प्रकार, भोजन के विधि, विविध प्रकारके जल प्रयोग, विद्युत्संचार, यक्षकिरण प्रयोग, वर्णजल प्रयोग आदि इतने विधि हैं, कि जिनके कारण रुग्ण मनुष्य मोहित हो जाता है, और अपने स्वास्थ्य के लिये किस बातका उपयोग करें और किस का न करें, इस विषयमें मूढसा बन जाता है। तात्पर्य यह है कि, उक्त रीतिसे अनेक

मार्ग होने पर रुग्णोंकी सुविधा नहीं हुई है। उक्त विधि यद्यपि बुरे नहीं हैं, तथापि हरएक के लिये लाभ दायी होने वाला एक भी विधि उसमें नहीं है विशेषतः निर्धन मनुष्योंका तो इन विविध प्रकारों से लाभ होना अशक्य हुआ है, क्यों कि इनमें धनका बहुत व्यय होता है। इत्यादि बातों का बहुत विचार करनेपर तथा सैंकडों अवस्थाओंके मनुष्यों और रोगियों की स्थितिका विचार करके हमारा यही मत निश्चित हुआ कि, योगसाधन की रीति सबके लिये सुगम, सुसाध्य, और आसानीसे सिद्ध होने वाली है, इसमें न किसी प्रकारका व्यय करना होता है, और न किसी प्रकारका इसमें विघ्न है। हरएक मनुष्य को हरएक अवस्था में इससे लाभ पंहुचता है तथा पूर्वोक्त अन्य उपायोंके साथ भी यह योगसाधन किया जा सकता है, इस लिये इसकी उपयुक्तता अधिक है।

वास्तविक रीतिसे देखा जाय तो सिद्धांतकी बात यह है कि, जो मनुष्य अपने खानपानादि व्यवहारका प्रबंध विचार से करता है, और जो अपने स्वास्थ्यको सुरक्षित रखनेके नियम जानता है वही अपना स्वास्थ्य ठीक रख सकता है। योग के यम नियम और व्रत पालन जो हैं, वे इस बातकी शिक्षा मनुष्यको देते हैं। तथापि प्रत्येक मनुष्यकी प्रकृतिके अनुसार उचित नियम बनाना हरएक मनुष्य के लिये योग्य और अत्यावश्यक है; क्यों कि जितनी व्यक्तियां हैं, उतनी

भिन्न प्रकृतियां हैं, इस कारण हरएक को अपना विचार अपनी प्रकृतिके अनुसार करना उचित है। यहां सर्वसाधारण नियम बताये हैं, और इसी प्रकार साधारण नियम योगशास्त्र में भी कहे हैं। इन साधारण नियमोंका विचार करके विशेष नियम हरएक को अपनी प्रकृति के अनुसार बनाना योग्य है।

शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्यके लिये मुख्यतः (१) आसन, (२) प्राणायाम, (३) उपासना, (४) सात्विक खानपान और (५) योग्य विश्राम, इन पांच बातोंकी आवश्यकता है। इन में से एकके न होनेसे भी बिगाड हो जाता है। इस लिये इनका क्रमशः विचार करेंगे—

[१] आसनों का व्यायाम।

"आसन" शब्द विशेष अर्थमें यहां प्रयुक्त होता है। यद्यपि भाषामें आसन शब्दका अर्थ बैठना है, तथापि योग साधनमें उसका अर्थ विशेष प्रकारके व्यायाम है। आसनोंका व्यायाम इस लिये सब लोगोंको लाभ दायक होता है कि, यह हरएक मनुष्य हरएक अवस्थामें कर सकता है। और इसके लिये कोई व्यय नहीं करना पडता। कमजोर आदमी भी इसको कर सकता है, और बलवान भी कर सकता है। तथा अन्य व्यायामों की अपेक्षा इससे हृदयको विश्राम अधिक मिल सकता है।

आसनोंके मुख्य विभाग चार हैं। [१] खिंचाव के व्यायाम, [२] प्राणायाम के व्यायाम, [३] बलवर्धक व्यायाम और [४] स्नायुसंचालन के व्यायाम। आसनों में ये चार भेद हैं, अथवा आसनों के व्यायाम इन चार विभागोंमें विभक्त होते हैं। कई आसन इन चारों विभागोंमें किये जा सकते हैं, और कई न्यून विभागोंमें किये जाते हैं। कई आसन अत्यंत वेगसे और अतिशीघ्र परंतु वारंवार करनेसे स्नायुसंचालन के उपयोगी होते हैं। स्नायुसंचालन का अर्थ वेगसे स्नायुओंमें गति करके वेगसे रुधिर का अभि-सरण करना है। इस से नसनाडियोंकी निर्मलता हो जाती है और शरीर में उष्णता आजाती है। शरीर के दोष शीघ्र दूर करनेके काम में यह "स्नायु-संचालन" बडाही उपयोगी है।

खिंचावके व्यायामोंके लिये जो आसन करने होते हैं, वे शांतिके साथ करने चाहिएं, और एक एक प्रकारके आसन में देर तक बैठनेका अभ्यास होना आवश्यक है। इस से स्नायु शुद्ध और निर्दोष होते हैं, तथा दीर्घ काल के रोग बीज जो शरीरमें घर बनाकर रहते हैं, इस रीतिके व्यायाम-से दूर हो जाते हैं। बलवर्धक आसन में बोझ उठाने के व्यायाम और प्रतिरोधक व्यायाम मुख्य हैं। प्रतिरोधक व्यायामका अर्थ यह है कि, विरोधी शक्तिके साथ विरुद्ध शक्तिका उपयोग करना। जैसा रसीसे खींचना, हाथसे

ढकेलना इत्यादि। इस प्रतिरोधन से अपनी शक्ति बढ जाती है। श्वास और उच्छ्वास के साथ व्यायाम करना अथवा आसन करनेका नाम प्राणायाम युक्त आसन है। रक्तशुद्धि-द्वारा आरोग्य देना इसका प्रयोजन है।

युक्तिसे उक्त प्रकारके चतुर्विध आसन करने से हरएक मनुष्य आरोग्य, बल और दीर्घ आयु प्राप्त कर सकता है।

दूसरी दृष्टिसे भी आसनोंके चार भेद समझे जाते हैं। [१] खडे होकर करनेके आसन प्रथम वर्ग में आते हैं, [२] बैठकर करनेके आसन द्वितीय वर्ग में गिने गये हैं, [३] भूमिपर लेट कर करनेके आसनोंका तृतीय वर्ग है; और [४] उलटा खडा अर्थात् सिर नीचे और पांव उपर करके करनेके आसन चतुर्थ वर्गमें आते हैं। तृतीय और चतुर्थ वर्गके आसन दिलके कमजोर मनुष्योंको बडे लाभ दायक होते हैं और इतर आसन अन्योंके लिये उत्तम हैं। इस प्रकार विशेष विचार करनेसे पता लगता है कि, ये आसनों के व्यायाम बडा लाभ करने वाले हैं। जो प्रसिद्ध आसन हैं, उनसे कई आसन और भी नये बनाये जा सकते हैं, और इन में भी घट वध करके अपनी आवश्यकतानुसार बनाने से अधिक उपयोगी हो सकते हैं।

आसनोंके व्यायामके अतिरिक्त भी शरीरकी सुस्थिति के लिये यथावकाश दूसरे व्यायाम करनेकी आवश्यकता रहती ही है। भ्रमण, वेगसे चलना, पहाडियोंपर चढना और उत-

रना, दौडना, कूदना इत्यादि व्यायाम गतिवर्धक हैं। वेदमें कहा है कि—

जंघयोर्जवः। पादयोः प्रतिष्ठा ॥

अथर्व. १९।६०।२.

"जंघाओंमें वेग और पांवोंमें स्थिरता अर्थात् आधारशक्ति रहे।" यह मंत्र वैदिकधर्मियोंको उपदेश दे रहा है कि, जंघा और पांवोंमें वेग और बल चाहिये। पहाडी लोगोंकी जंघायें और पिंडरियां कैसी पुष्ट और बलवान रहती हैं, इसका विचार यहां अवश्य करना चाहिये। पहाडियोंपर चढने उतरने का व्यायाम तथा तीव्र वेगसे चलने फिरनेका व्यायाम करनेसे उक्त लाभ हो सकते हैं।

इसके अतिरिक्त जलमें तैरनेका व्यायाम बहुतही लाभदायक है। ब्रह्मचर्य रखनेकी इच्छा करनेवाले यदि दिनमें घंटा डेढ घंटा अच्छीप्रकार तैरनेका व्यायाम करेंगे, तो वीर्यभ्रष्टताका दोष उसी समय दूर होगा। जल औषधिरूप है, इस दिव्य जल का वर्णन वेदमें अनेक स्थान पर है। उनमें से एक ही मंत्र देखिये—

अप्स्वन्तरमृतमप्सु भेषजम् ॥ अपामुत प्रशस्तिभि-रश्वा भवथ वाजिनो गावो भवथ वाजिनीः ॥

अ. १।४।४

"जल में अमृत और औषध है। जलके श्रेष्ठ गुणसे, हे घोडों! और हे गौवों! आप बलवान बन जाइये।" इस मंत्रमें

जल से बलवान बननेकी शक्यता वर्णन की है। यद्यपि यह उत्तानार्थ है तथापि इसका गर्भार्थ और है। अश्व और गौ शब्द पुरुष और स्त्री के सूचक हैं। और " वाजी " शब्द वीर्ययुक्त अर्थात् पुरुषशक्तिसे युक्त पुरुष और स्त्री शक्तिसे युक्त स्त्री का सूचक है। वैद्य शास्त्रमें " वाजी-करण " के प्रयोग अनेक हैं, उनका उद्देश्य मनुष्यको प्रबल वीर्य शक्तिसे युक्त करना ही है। वही " वाजी " शब्द यहां है। तात्पर्य घोडे और गौवें भी जल प्रयोगसे वीर्य युक्त बन सकतीं हैं, उसी प्रकार स्त्री पुरुष भी अपने वीर्य दोष को इसी जल प्रयोगसे दूर कर सकती हैं। सेकडों जवानों के वीर्य दोष जलमें प्रतिदिन घंटाभर तैरनेसे दूर हो गये हैं। किसी औषधिसे जो लाभ नहीं होता, वह तैरनेके अभ्याससे होता है। ऋषिमुनि नदीतट पर रहते थे, इसका अभिप्राय ही यह है कि, जलमें खूब तैरनेसे वीर्य दोष दूर करके, व " स्थिर वीर्य " हो जाते थे। आजकल भी यह अनुभव लिया है, इसलिये जो वीर्यसे दोषी हों, वे तैरनेका अभ्यास खूब करें और स्थिर वीर्य बनें।

खुली हवामें खेलनेके खेल भी सब आयुमें लाभ दायक हैं, विशेषतः मध्य आयुतक अधिक लाभ दायक हैं। देवत्व प्राप्तिके गुणोंमें " क्रिडा, विजिगीषा " आदि गुण प्रसिद्ध हैं, उनमें " क्रीडा " सबसे प्रथम है। मर्दानी खेल देवत्व का परिपोष करनेवाले हैं। भूमिक्रीडा मर्दानी खेलोंका नाम है,

जल क्रीडा तैरनेके विविध प्रकार हैं, कंदुकक्रीडा गेंदबल्ला का नाम है, वृक्षक्रीडा वृक्षोंपर चढनेके खेल प्रसिद्ध हैं, पर्वतक्रीडन पहाडोंकी उतराईपर खेलनेका स्पर्धाका खेल है; इस प्रकार आर्योंकी कई क्रीडायें हैं, कि जो आर्य युवक खेलते और विजयेच्छु बनते थे। ये सब खेल लाभदायक होते हैं।

इसके अतिरिक्त जो भी खेल शरीरका वीर्य, ओज, तेज, बल, फूर्ती, उत्साह और बायु अढानेवाला हो, उसके खेलनेसे लाभ ही होते हैं। खुली हवाके खेल खेलनेसे अनंत लाभ हैं, जो पाठक जानते हैं। इसलिये उनके विषयमें यहां अधिक लिखनेकी अवाश्यकता नहीं है।

साधारणतया पसीना आनेतक आसनादि सब व्यायाम करने चाहिये। व्यायामके परिश्रमसे पसीना आनेके पश्चात् शरीरका मर्दन करना उचित है और मर्दन के पश्चात्, आवश्यक हुआ तो योग्यसमय व्यतीत होनेके बाद, स्नान करनेसे शरीर निर्मल होता है। तैरनेमें व्यायाम और साथ स्नानभी होता है इस लिये तैरनेसे अधिक लाभ होते हैं। अस्तु! तात्पर्य यह कि आरोग्यके लिये दिनमें कुछ समय अवश्यही व्यायाम करना चाहिये। शांत व्यायाम घंटाभर करना चाहिये, परंतु वेग का व्यायाम आधा या पाव घंटा पर्याप्त हो सकता है। अपनी शक्तिके अनुसार न्यून व अधिक समय करना योग्य है।

पूर्वोक्त व्यायाम के पश्चात् प्राणायाम का विचार करना चाहिये। सब लोग प्राणका महत्व जानते ही हैं, क्यों कि

प्राण चला गया, तो इस देहमें कुछभी आदरणीय अवशिष्ट नहीं रहता। प्राणशक्तिके कारण ही यह नाशवंत देह आदरणीय हुआ है!!! सडने वाले देहमें जीवनकी कला रही है!! सब हमारे व्योपार प्राणके आश्रयसे हो रहे हैं। इसलिये शरीरकी अपेक्षा प्राण के अंगोंका बल अधिक बढाना अत्यावश्यक है। प्राणके अवयवोंमें दोष उत्पन्न होनेसे शीघ्रही मृत्यु हो जाती है, वैसी इतर अवयवोंके दोषोंसे नहीं होती।

जो स्वभावसे पूर्ण श्वसन करता है, उसमें विलक्षण उत्साह दिखाई देता है। प्राणायामका अभ्यास करनेवालोंमें कदापि आलस्य और निरुत्साह नहीं होते। विचारशक्तिकी तेजस्विता भी प्राण उपासना करनेवालोंमें ही होती है। इसलिये प्राणायामका अभ्यास करके अपने अंदर उत्साहका जीवन लाना चाहिये।

नासिका द्वारा शुद्ध वायु फेंफडों में जाता है, और वहां रक्त की निर्मलता करता है, रक्त निर्मल होनेसे मानो सब शरीर आरोग्य पूर्ण हो जाता है। सबसे अधिक शुद्धता करनेवाला प्राणवायु है, और वह विपुल प्रमाणमें प्राणायामके दीर्घश्वसनसे ही अपने शरीरमें पहुंचता है। इसलिये जिनकी छाती बडी है, नासिका भी बडी है और जो श्वासके समय अपने फेंपडे पूर्ण भरते और उच्छ्वासके समय खाली करते हैं वे अधिक बलवान होते हैं; प्राणको वीरभद्र कहते हैं। यह वीरभद्र जहां पहुंचता है वहां शत्रुभूत रोगबीज दूर भाग जाते

हैं। सब उपनिषद् इसी हेतुसे प्राणकी महिमा गा रहे हैं। जिस प्रकार स्थूल शरीरकी शुद्धता जलसे होती है उसी प्रकार जीवनरूप रक्तकी शुद्धता प्राणसे—अर्थात् प्राणायामसे—हो जाती है।

शुद्ध वायुमें किया हुआ प्राणायाम लाभदायक होता है। इस लिये बंद मकानोंके अंदर किये हुए श्वासोच्छ्वासकी अपेक्षा पहाडों पर या नदियों के समीप अथवा समुद्र किनारे पर किया हुआ श्वासोच्छ्वास अधिक लाभ दायक होता है। इसी प्रकार प्राणायाम भी शुद्ध वायुमें ही करना उत्तम होता है। तथापि अधिक सर्दीके दिनोंमें बाहिरका वायु अतिशीत होनेसे प्राणायामके लिये अच्छा नहीं होता है। ऐसे दिनोंमें कमरोंमें प्राणायाम करना योग्य है। सब ऋतुओंमें नगरोंमें रहने वाले लोग अपने स्वच्छ कमरेमें भी कर सकते हैं अथवा नगरके बाहिर शुद्ध स्थानमें प्राणायाम करेंगे, तो अधिक उत्तम होगा।

प्राणायाम अनेक प्रकारके होते हैं, उनका वर्णन अन्य पुस्तकों में पाठक देख सकते हैं। मुख्य बात प्राणायामकी यह है, कि श्वास से अपने फेंफडे पूर्ण भरने चाहिये। फेंफडों के तीन विभाग होते हैं, एक गले और कंधोंके पासका भाग, दूसरा पेटकी ओरका भाग और तीसरा भाग उनके मध्यमें है। अपनी पसलियों के हिसाबसे भी ये विभाग कहे जा सकते हैं। निचला उदरके पासका विभाग पहिले भरना चाहिये,

पश्चात् मध्य विभाग और पश्चात् ऊपरका विभाग भरना योग्य है। इस क्रमसे श्वास लेने और उलटे क्रमसे छोडनेका नाम पूर्ण श्वसन है। यह वेगसे करने का नाम " भस्त्रा प्राणायाम " है। भस्त्रा प्राणायाम करनेसे तत्क्षणमें शरीरमें उष्णता उत्पन्न होती है, भूख लगती है। रक्त शुद्ध होता है और अनेक लाभ होते हैं। यह श्वास और उच्छ्वास वेगसे न करते हुए मंद-गतिसे परंतु श्वास और उच्छ्वास की लंबाई सम करनेसे जो प्राणायाम होता है, उसको " सूर्य भेदन प्राणायाम " कहते हैं। इससे उदरस्थानीय " सूर्य चक्र " की जागृति हो जाती है, इससे जीवनशक्ति की वृद्धि हो जाती है। ये प्राणायाम अपनी शक्तिके अनुकूल ही करने चाहिये; शक्तिसे अधिक करनेपर हरएक अभ्यास हानि करता ही है। अन्य प्राणायामका वर्णन पाठक अन्यत्र देख सकते हैं।

कामधंदा करनेवाले मनुष्य घंटा दो घंटा अपना व्यवसाय करनेके पश्चात् दो चार मिनिट ही खुले वायुमें उक्त प्रकार एक दो आसन और प्राणायाम करेंगे, तो उनकी कार्य कर-नेकी शक्ति द्विगुणित हो जायगी, और उनको थकावट नहीं आवेगी। नियम पूर्वक सवेरे और शामको प्राणायाम कर-नेवालों को उत्साह के साथ अपूर्व आरोग्य प्राप्त हो सकता है।

प्राणायाम के विषयमें एक ही बात यहां कहनी आवश्यक है वह यह है, कि नाकसे ही श्वासोच्छ्वास करना चाहिये और मुखसे नहीं। क्यों कि मुखसे किया हुआ श्वासोच्छ्वास

आयुष्य का नाश करता और रोग लाता है, परंतु नाकसे किया हुआ श्वासोछ्वास आयुष्य बढाता और रोगोंको दूर करता है। अस्तु। इस प्रकार आसन और प्राणायामके द्वारा लाभ उठानेके साथ अब उपासनाका विचार करना है—

(३) उपासना। सद्‌गुण मनन।

ईश्वरकी उपासना मनकी शांति बढाने द्वारा शरीरका आरोग्य प्रदान करती है। प्रत्येक सद्‌गुणकी परम सीमा का केंद्र परमेश्वर है। प्रत्येक सच्छक्तिकी पराकाष्ठा परमेश्वर में है। और सद्‌गुण और सच्छक्ति के मनन द्वाराही उपासना करनी होती है, इस लिये सद्‌गुण और सच्छक्तिका मनन ही उपासना है। मनमें नित्य सद्विचार रखने चाहिये, उपासनासे यही कार्य होता है। इसलिये इस दृष्टिसे उपासनाका महत्त्व अधिक है "जैसा मन वैसा मनुष्य" यह सार्वभौमिक नियम है। इसलिये मनुष्य की भवितव्यता मनको ठीक रखनेपर अच्छी और ठीक न रखनेपर बुरी हो जाती है।

मनुष्यमें मनन शक्ति का इतना महत्व है कि, जो मनुष्य सदा विजयी, उत्साही पुरुषार्थके विचार अपने मनमें रखता है, वही पुरुषार्थी बनता हुआ उन्नत होता है; परंतु जो मनुष्य ईर्ष्या, द्वेष, क्रोध, मत्सर, पराजय निरुत्साह, आलस्य आदिके ही विचार मनमें रखता है, वह प्रतिदिन हीन होता जाता है। चिंतासे अपने मनको बिगाडनेवाले मनुष्य नानाप्रकारकी

आपत्तियोंमें डूब मरते हैं। इस लिये मनुष्यको सदा श्रेष्ठ विचार ही मनमें धारण करके सदा विजय की ओर जाना चाहिये।

इतिहास, गाथा आदि पुस्तक अथवा अन्य कथाएं कल्पित ही क्यों न हों, यदि श्रेष्ठ विचार-परंपराको जागृत करनेवाली होंगी, तो उनके पढनेसे लाभ होगा; अन्यथा हानि होनेमें शंकाही नहीं है। धार्मिक ग्रंथोंमें वीरपुरुषोंके चरित्र पढनेका जो महत्व है, वह यही है; उनकी विजयकी कथाएं पढनेवालोंके मनोंको उच्चविचार युक्त बनातीं हैं। देवतामें श्रेष्ठ सद्गुण और सच्छक्तियोंकी कल्पना उपासकको उच्च बना सकती है। क्यों कि उसके मननसे उसके मनमें श्रेष्ठ गुण और श्रेष्ठ शक्तिकी जागृति रहती है। इस बातको छोडकर जो अन्य रीतिकी उपासना होगी वह लाभ दायक नहीं होती।

"देवोंके समान व्रत करनेवाले देव बनते हैं," यह भगवद्गीताका कथन उक्त नियमानुसारही है। श्रेष्ठ कल्पना मनमें स्थिर करनेसे श्रेष्ठता आती है और उसीसे आरोग्य भी प्राप्त होता है। इसके अतिरिक्त उपासनासे मनकी शांति, आत्माका बल, चित्तकी प्रसन्नता, बुद्धिकी तेजस्विता आदि बढती है, इसलिये उपासक लोग आरोग्य संपन्न रहते हैं। "मेरा आधार प्रबल ईश्वर है" यह विश्वास बडा लाभ देता है। धैर्य बढाता है तथा विश्वास और धैर्य किंवा निर्भयता बढनेसे आरोग्य और स्वास्थ्य की दृष्टिसे बडा लाभ होता है।

४ सात्विक खानपान।

आरोग्यका विचार करनेके समय खानपानके विषयमें अवश्य कुछ न कुछ लिखना चाहिये। क्यों कि खानपानके विषयमें आजकल इतना अनाचार बढ गया है कि, उसकी उपेक्षा करना आत्मघात करनेके समान भयानक है। दाल, रोटी, दूध, घी, दही, मक्खन, मलाई, छाछ, चावल, सब्जी आदि सात्विक भोजन बडा लाभदायक और आरोग्य वर्धक है। गायका दुध अच्छा है, उसके अभावमें अन्य दूध लेना चाहिये। बाजारकी चीजें जो हलवाइयोंकी दुकानोंमें अथवा छाबडीवालोंके पास मिलतीं हैं, एकभी खाने लायक नहीं होती। उनपर मक्खियां बैठतीं हैं और उनको दूषित बना देतीं हैं। मक्खियां गटारके मैलपर बैठकर सीधी दुकानके जलेबी-पर आकर बैठ जाती हैं। इसलिये वे पदार्थ विषयुक्त बनते हैं। परंतु जो दुकानदार अपने पदार्थ शीशेके बर्तनोंमें रखकर सुरक्षित रखता हो, उससे लेनेमें कोई हर्ज नहीं है। तथापि तले हुए पदार्थ हानिकारक ही हैं। खानेके सात्विक पदार्थ प्रसिद्ध हैं, शुद्धताके साथ किये हुए ही खाने चाहिये, अन्य पदार्थ न खाने अच्छे हैं। मनुष्यका श्रेष्ठ आहार फल है, इसलिये जो फल अच्छी अवस्थामें मिल सकते हैं, अपनी प्रकृतिके अनुसार होनेपर उनको खाना चाहिये। यही श्रेष्ठ भोजन है। तले हुए पदार्थोंसे फल सौगुणा श्रेष्ठ हैं।

पीनेकी चीजोंमें आजकल बडा अनर्थ हो रहा है। बाजा-

रोंमें हानि कारक पदार्थोंके दुकान दिन प्रति दिन बढ रहे हैं !! चा, काफी, कोको, सोडा आदि वाटर, मद्य, विविध आसव, तथा अन्य शीतपेय बडे हानिकारक हैं, वास्तवमें इनको सरकारद्वाराही प्रतिबंध होना चाहिये, परंतु अपने दुर्भाग्यसे ऐसा प्रतिबंध नहीं हुआ है। इसलिये स्वयं इस विषयमें जागना चाहिये। " शुद्धजल " ही उत्तम पेय है। अच्छे कूवेका अथवा वृष्टिजल सबसे उत्तम है। आरोग्यका विचार करनेवालोंको इस खानपानका इस प्रकार अवश्य विचार करना चाहिये। और कभी अयोग्य खानपानकी ओर झुकना नहीं चाहिये।

५ विश्राम।

परिश्रमके पश्चात् विश्रांति लेनी आवश्यक है। उद्योगधंदा करनेका नाम प्रवृत्ति है और विश्रांतिका नाम निवृत्ति है। प्रवृत्ति के पश्चात् निवृत्ति आवश्यकही है, प्रवृत्तिमें जो शरीरके स्नायुओं का व्यय होता है, उसको दुरुस्त करनेका कार्य इस निवृत्तिके समय होता है, इसलिये यह विश्राम " नव जीवन " देनेवाला होता है। विश्राम में गायन वादन, उत्सव दर्शन, आदि मनोरंजनके विविध प्रकार आते हैं, ऋतु ऋतुमें धार्मिक उत्सव धर्मशास्त्रकारोंने रखे हैं, इसका यही प्रयोजन है। इस प्रकारके दिलबहावेसे प्रवृत्तिके कार्योंका परिश्रम दूर होता है।

इसके अतिरिक्त प्रतिदिन के लिये स्नायु ढीले करना,

दंडासन अथवा शवासन का अभ्यास करना, तथा मनको निर्विचार करना आवश्यक होता है । इतना होनेपर भी पूर्ण विश्रांतिके लिये निद्रा लेनेकी आवश्यकता है । मनुष्य गाढ निद्राका महत्व नहीं समझते, परंतु हमारे आरोग्य पूर्ण जीवन के लिये निद्राकी अत्यंत आवश्यकता है । निद्रासे अनेक लाभ हैं—

निद्रा तु सेविता काले धातुसाम्यमतन्द्रिताम् ॥
पुष्टिवर्णबलोत्साहानग्निदीप्तिं करोति च ॥ राजनि. ५

"योग्य समयमें निद्रा लेनेसे धातुकी समता, उत्साह, पुष्टि, वर्णकी तेजस्विता, बल, और अग्निका प्रदीपन होता है।" तात्पर्य नवीन जीवनही मिलता है । यह तीन प्रकारका विश्राम लेनेसे मनुष्यका आरोग्य उत्तम रह सकता है, और इनमें निद्राका महत्व सर्वोपरि है ।

पूर्वोक्त प्रकार आसन, प्राणायाम, उपासना, सात्विक भोजन, शुद्धजल पान जो करता है, उसको पांच छे घंटे उत्तम निद्रा आती है और उतनी उसके लिये पर्याप्त होती है । और इस प्रकार करनेसे वह सदा आरोग्यसंपन्न रह सकता है ।

सोनेके पूर्व मुख प्रक्षालन करके, सिरको शीतजलका अच्छा स्पर्श करके, लघुशंका करके शिस्न और उसके आस पासका एक वीत भाग शीत जलसे अच्छी प्रकार धोकर शांत करके, परमेश्वर स्मरण पूर्वक बिस्तरेपर शांतिके साथ लेट

जानेसे अच्छी गाढ निद्रा आजाती है और उससे बडा आरोग्य मिल सकता है।

योगशास्त्रका सार।

उक्त प्रकार इस छोटेसे लेखमें योगशास्त्रका सार दिया है। अनेक ग्रंथोंमें विस्तारसे जो बातें लिखीं हैं, उनका संक्षेपसे वर्णन इस लेखमें किया है। जो पाठक इसका अच्छी प्रकार मनन करेंगे, वे अपने प्रयत्नसे अपना स्वास्थ्य सुरक्षित रख सकते हैं, अथवा अपनी रोगी अवस्थाको दूर करके अपना स्वास्थ्य प्राप्त कर सकते हैं।

इस लेखमें कोई ख्याली बात नहीं है, प्रायः सब बातें अनुभव की हैं, इसलिये पाठकोंसे भी निवेदन है कि, इस लेखका उपयोग वे अपनी स्वास्थ्य रक्षा के कार्य में अवश्य करें।

योगसाधन का विषय बडा गहन है। परंतु इस लेखमें उतनाही लिखा है कि, जितना सर्व साधारणके उपयोगी हो सकता है। इसलिये जो लोग योगमें बहुत उंचीं प्रगति करना चाहते हैं। उनको यद्यपि इस लेखसे विशेष लाभ नहीं होगा, तथापि सर्व साधारण लोग जो अपने दैनिक व्यवहारमें रहकरही योगसाधनसे लाभ उठाना चाहते हैं, उनको यह लेख विशेषकर अच्छा मार्ग दर्शक होगा। इसलिये आशा है कि ये लोग इस लेखसे लाभ उठानेका यत्न करेंगे।

"प्रयत्न करनेसे अवश्य सिद्धि मिलेगी।"

स्त्रीजाति और योग विद्या।

(लेखिका-श्री. कुमारी सत्यवती शास्त्रिणी, बन्नु)

हर्ष की बात है कि भारतीय स्त्रियों में दिन प्रतिदिन जागृति पैदा हो रही है। देशके समझदार तथा विद्वान पुरुषोंने इस बात को भली प्रकार समझ लिया है, कि जब तक स्त्रीजाति अज्ञानान्धकार में फँसी हुई है, तब तक भारत वर्ष का उद्धार होना असम्भव है! मनुजी के इस विचारको कि "जिस देशमें स्त्रियोंका अपमान होता है वह देश शीघ्र ही नष्ट हो जाता है" भारत वर्षने भली प्रकार आजमा लिया है। स्त्रियोंको गुलाम तथा अविद्यक रखनेका फल भारत वर्ष चिर काल से भोग रहा है और तबतक भोगता ही रहेगा, जबतक कि वह स्त्रीजातिके सत्कार तथा स्त्रीविद्याको फिरसे प्रचलित करके प्रायश्चित्त नहीं कर लेता। यह कहनेकी आवश्यकता नहीं, कि स्त्री सुधार सम्बन्धी रुपये में आनाभर भी काम नहीं हुआ और आगे के लिये भी ऐसी शीघ्रतासे कार्य होता हुआ दिखाई नहीं देता, जो कि भारतवर्ष की अधोगति से निकालने के लिये होना चाहिए था। आज इस बात के भी कहने की विशेष आवश्यकता नहीं कि स्त्रीसुधार सम्बन्धी कार्य जबतक १६ आने पूरा नहीं हो

लेता, तबतक देशोद्धार के सभी साधन निष्फल हैं। और भारतवर्षीय भाईयोंका इस ओर पूर्णरूपसे ध्यान न देना इस बात का प्रत्यक्ष प्रमाण है। कि भारत वर्षका "सुनहरी दिवस" भी बहुत दूर है।

स्त्रीजातिका सन्मान तथा स्त्री विद्या केवल दूसरों के यत्नोंसे प्रचलित नहीं हो सकती, प्रत्युत इसके लिए स्त्रियों को स्वयंही यत्न करनेकी आवश्यकता है। यद्यपि परोपकारी और देशहितैषी भाई इस कार्यमें बहुत सहायता कर रहे हैं, परन्तु स्त्रीजातिको अपने अच्छे दिनोंकी तबतक आशा नहीं रखनी चाहिए जबतक कि वह अपनी पांवपर आपही न खडी हो जावे और मनुष्योंको अपनी ओर से निश्चिंत कर देशके शेष आवश्यकीय कार्योंमें आसक्त न हो जाने दे।

इस कार्यमें सफलता प्राप्त करने के लिए-जैसा कि प्रत्येक व्यक्ति के लिये आवश्य होता है-स्त्रीजातिको अपने तन मन और आत्माकी शक्तियोंको जगाना आवश्यक है। हमारा जीवन क्या है ? केवल तन मन और आत्मा का मिलाप है। जिस व्यक्तिमें इन तीनोंमेंसे कोई निर्बल तथा कमजोर है उसका जीवन संपूर्णतया दुःखमय होता है। इन तीनों शक्तियोंको जमाकर एक उच्च दरजेपर ले जानेसेही सच्चा और सुखमय जीवन प्राप्त हो सकता है। स्त्रीजातिकी तीनों ही शक्तियां असंपूर्ण और शोचनीय दशामें हैं।

भारतकी स्त्रियोंको अपने स्वास्थ्य तक को ठीक रखनेकी

चिन्ता नहीं भासती, वह अपने तन को निर्बलता का ठेकेदार समझती है। "रोगी तन में रोगी मन" यह प्रसिद्ध कहावत है, तो इस दशामें स्त्रियों को मानसिक शक्तियों की आशा ही क्या हो सकती है। आत्मिक शक्तियों का तो वर्णन करनाही पंजाबीकी इस कहावत के अनुसार है कि—

"सोणां रूडिया परते सुपने शीशा महिलां दे।"

वर्तमानकाल में स्त्रीविद्या ने भी सुशिक्षित स्त्रियोंको अभी-तक इस ओर उतना नहीं झुकाया, जितना कि कमसे कम उन के लिए आवश्यक था। हां कई ऐसी विदुषी स्त्रियां अवश्य विद्यमान हैं, जिनको कि तन और मन की शक्तियोंपर अधिकार पानेका स्वाभाविक ही समय मिल गया है और वह जान बूझ कर या अचेतावस्था में उन्नति कर रही हैं। परन्तु इतने पर ही संतोष नहीं किया जा सकता।

सबसे दुःखकी बात तो यह है और ऐसी स्त्रियां बहुत ही कम हैं जो अपनी दृष्टि को बहुत ही उच्च आदर्श तक ले जाती हों। उन के मनकी गिरावट उनको कभी भी उच्चावस्था तक नहीं पहुंचने देती। इसी प्रकार उनका अपना मन ही उनके अधोगतिका कारण हो रहा है। परम सन्त कबीरजीने भी कहा है कि—

"मन के हारे हार है, मनके जीते जीत।"

आवश्यकता तो इस बात की है कि शृगाल को मारनेके लिए सिंहकी सामग्री एकत्रित की जावे, परन्तु स्त्रीजातिमें

सिंहको मारनेके लिए शृगालके मारनेकी सामग्री एकत्रित करने का स्वभाव हो चुका है। मनकी यह गिरावट चिरकाल से स्त्रीजातिमें परवरिश पा रही है और अब उनको दूर करनेके लिए बड़े भारी यत्नों की आवश्यकता है।

अपनी शक्तियों को जगानेके लिए हमें आरम्भ से ही आत्मा को आदर्श रख लेना चाहिए, तभी हम तन और मन की शक्तियों पर अधिकार पा सकेंगी। तन और मनकी शक्ति जागृत हो कर भी शीघ्र नष्ट हो जाया करती है, यदि उनके अन्दर आत्मिक शक्तिका प्रवाह जारी न रहे। इस लिए केवल तन और मनकी शक्तियों पर ही संतोष नहीं कर लेना चाहिये, प्रत्युत ऊंचा उठ कर आत्मिक शक्तिके भण्डार पर पूर्ण अधिकार प्राप्त करके पूर्ण लाभ उठाना चाहिये।

तनकी शक्तियोंको जगाने के लिए शारीरिक व्यायाम की आवश्यकता है। मनकी बाह्य शक्तियों को प्राप्त करनेके लिए विद्या और आभ्यन्तरिक शक्तियों की प्राप्तिके लिए ऐसे साधनों की आवश्यकता है कि जिनका सम्बन्ध मनके आभ्यन्तरिक पटल से हो। आत्मिक शक्तियों को प्राप्त करने के लिए उनसे भी गहन और असाधारण साधनों की आवश्यकता है। भारत वर्षकी स्त्रियों में शारीरिक व्यायाम का रिवाज बहुत ही कम है, प्रत्युत ऐसा करना असभ्यता और निर्लज्जता समझी जाती है। इस से उच्च शक्तियों के साधन तो पुरुषोंमें भी कम पाए जाते हैं, स्त्रियों का तो कहना ही क्या है।

जितने विघ्न स्त्रीजाति को इस मार्ग में आते और आसकते हैं, मैं उनको भली भांति समझती हूं, परन्तु उनके विस्तार में न पडकर मैं एक ऐसा साधन तजवीज करती हूं कि जिससे उनकी शारीरिक, मानसिक और आध्यात्मिक शक्तिएं जागृत हों। और उनको विशेष कष्टों का सामना न करना पडे।

मैंने बहुत थोडे समय से ही उस साधन को आरम्भ किया है, परन्तु इन दो वर्षों में मैंने अपनी शारीरिक और मानसिक दशाओंमें बहुत अन्तर पाया है। और इस साधन सम्बन्धी विशेष अन्वेषण करने से ऐसे बहुत से प्रमाण मिल सकते हैं, जिनसे कि इस साधन का अद्वितीय और अमूल्य होना सिद्ध होता है।

यह साधन हमारे भारत वर्ष में प्राचीन कालसे चला आ रहा है और श्री वेद भगवान में स्वयं ईश्वरने इसका उपदेश किया है। परन्तु भारत वर्ष की अधोगति से जहां हमारी सुख सम्पत्ति और ऐश्वर्य हमसे पृथक् हो चुके हैं, वहां हमारे अमूल्य आत्मिक साधन भी हमारे हाथसे निकल चुके हैं। जिस साधनका मैं वर्णन कर रही हूं, भारत की मन्द भाग्यता से वह तो बहुत ही घृणित हो चुका है। प्रथम तो भारतीय लोग इसके नाम तक को भी भूल चुके हैं, यदि कोई जानता भी है, तो उसकी शिक्षासे बहुत ही दूर रह कर उसको कपोल कल्पित और एक भयानक साधन समझ चुका है।

अभीतक उस साधन का नाम नहीं बताया गया, आप उस साधन को जानने के लिए बहुत उत्कण्ठित होंगे। सुनिए उस अद्वितीय साधन का नाम हमारे वेद और शास्त्रों में "योग" कहा है। जिसके विषय में भगवान् मनुजी ने यह फरमाया है—

दह्यन्ते ध्मायमानानां धातूनां हि यथा मलाः।
तथेन्द्रियाणां दह्यन्ते दोषाः प्राणस्य निग्रहात् ॥

मनु० अ० ६ श्लोक ७१

जिस प्रकार अग्नि में तपाई हुई धातुओंके मैल जल जाते हैं, उसी प्रकार प्राणों के रोकनेसे प्राणायाम करनेसे इंद्रियोंके दोष नष्ट हो जाते हैं।

अत्रि संहितामें भी है—

योगात् संप्राप्यते ज्ञानं योगो धर्मस्य लक्षणम्।
योगः परं तपो ज्ञेयस्तस्माद् योगं समभ्यसेत् ॥ १ ॥
न च तीव्रेण तपसा न स्वाध्यायैर्न चेज्यया।
गतिं गन्तुं द्विजाः शक्ता योगात् संप्राप्नुवन्ति याम् २

भावार्थ—योग से ज्ञान प्राप्त होता है, योग ही धर्मका लक्षण है, और योगही परम तप है, इस लिये योगका अभ्यास करना चाहिए ॥ १ ॥

बडी तीव्र तपस्यासे, शास्त्रों के अध्ययन से तथा यज्ञों से जो सद्गति नहीं मिल सकती वह द्विजों को योगाभ्यास से मिल सकती है ॥ २ ॥

गरुड पुराण में कहता है—

भवतापेन तप्तानां योगो हि परमौषधम् ॥

भावार्थ—संसारके तापसे तपेहुए मनुष्यों के लिए योगही बडी औषधि है।

स्कन्दपुराण में कहा है—

आत्मज्ञानेन मुक्तिः स्यात्तच्च योगादृते नहि।
स च योगश्चिरं कालमभ्यासादेव सिध्यति॥

भावार्थ—आत्मज्ञान से मुक्ति होती है, परन्तु वह आत्मज्ञान योगके विना नहीं हो सकता, वह योग चिरकाल तक अभ्यास करनेसे सिद्ध होता है।

कूर्म पुराण में लिखा है—

योगाग्निर्दहति क्षिप्रमशेषं पापपञ्जरम्।
प्रसन्नं जायते ज्ञानं ज्ञानान्निर्वाणमृच्छति॥

भावार्थ—योगरूप अग्नि सम्पूर्ण पापके पिञ्जरको शीघ्रही जला देता है, उससे ज्ञान आप ही प्रकाशित होता है, और उस ज्ञान से मुक्ति प्राप्त होती है।

योग बीजमें शिवजी महाराजने पार्वती प्रति कहा है—

ज्ञाननिष्ठो विरक्तो वा धर्मज्ञोऽपि जितेन्द्रियः।
विना योगेन देवोपि न मोक्षं लभते प्रिये॥ १॥
ब्रह्मादयोऽपि त्रिदशाः पवनाभ्यासतत्पराः।
अभूवन्नंतकभयात् तस्मात् पवनमभ्यसेत्॥ २॥

भावार्थ—हे पार्वती ! मनुष्य बडाही ज्ञानी क्यों न हो, विरक्त क्यों न हो, धर्मात्मा क्यों न हो, अथवा जितेंन्द्रिय क्यों न हो बिना योगाभ्यास के मोक्ष को नहीं पा सकता जब कि देवताओं को भी विना योग के मोक्ष नहीं मिल सकता ॥ १ ॥

ऐसाही समझ कर ब्रह्मा आदि देवता भी योगाभ्यास में तत्पर हुए । इस लियें मनुष्यको भी यमराजके भयको मिटाने के लिए योगाभ्यासही करना चाहिए ॥ २ ॥

भगवद्गीता में भगवान् कृष्णजीने भी कहा है—

वेदेषु यज्ञेषु तपःसु चैव दानेषु यत्पुण्यफलं प्रदिष्टं ।
अत्येति तत्सर्वमिदं विदित्वा योगी परं स्थानमुपैति चाद्यम् ॥

भावार्थ—योगी इस योग मार्ग को जानकर "वेदाभ्यास करने से, यज्ञ और तपस्या करनेसे, और दान करने से, पुण्य का फल प्राप्त होना लिखा है, उन सब को उलांघ कर उस श्रेष्ट सर्वोत्तम (मोक्ष) स्थान को प्राप्त होता है।"

तथा शिवसंहिता में कहा है कि—

आलोड्य सर्वशास्त्राणि विचार्य च पुनः पुनः ।
एकमेव सुनिष्पन्नं योगशास्त्रं परं मतम् ॥

अर्थात् सम्पूर्ण शास्त्रों को मथ के और बारबार विचार करके यह एक मक्खन निकाला है, कि एक योंग शास्त्रही उत्तम और मानने योग्य है ।

हठ योग प्रदीपिका में भी कहा है—

ब्राह्मणक्षत्रियविशां स्त्रीशूद्राणां च पावनम्।
शान्तये कर्मणामन्यद् योगान्नास्ति विमुक्तये ॥ १ ॥
युवा वृद्धोऽतिवृद्धो वा व्याधितो दुर्बलोऽपि वा।
अभ्यासात् सिद्धिमाप्नोति सर्वयोगेष्वतन्द्रितः ॥ २ ॥

अर्थात् ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, स्त्री और शूद्रों को पवित्र करनेवाला, इनके प्रारब्ध कर्मों को मिटानेवाला, तथा मुक्ति को देनेवाला योगके विना और कोई नहीं है ॥ १ ॥

जवान, बूढा, बहुत बूढा, रोगी, अथवा दुर्बल क्यों न हो, उसको भी सम्पूर्ण योग शास्त्रके विषयोंमें ध्यान रख कर अभ्यास करने से सिद्धि प्राप्त हो सकती है ॥ २ ॥

इसी प्रकार घेरंड संहिता, महाभारत, योग वासिष्ठ, याज्ञवल्क्य संहिता आदि सर्व ही प्राचीन ग्रंथों में योगकी महिमा कही गई है। केवल योग का साधन ही साधक की शारीरिक, मानसिक, और आध्यात्मिक शक्तियों को जागृत करनेके लिए पूर्ण रूप से काम दे सकता है। लोक और पर लोक दोनों का रक्षक यह अकेलाही साधन है। इसके थोडे अभ्यास से ही साधक को अपने तन और मन की निरख परख का बल प्राप्त हो जाता है। और वह इनमें बल तथा शान्ति अनुभव करने लगता है। जिन प्राणियों को सर्वदा शारीरिक व्याधियों तथा मानसिक भठकनाओंकी शिकायत रहती है, वह अवश्य ही इसकी परीक्षा कर देखें। फिर वह इसकी

महिमा मेरे इस लेख तथा शास्त्रों के लेखों से भी कहीं बढकर देखेंगे।

मैं अपनी बहनों को निश्चय दिलाती हूं, कि शास्त्रों में योगसाधनका तुम्हें भी अधिकार है। और तुम अपने सर्व सांसारिक कार्यों को निभाति हुई—यदि तुम्हारा संयम और सदाचार दृढ हो तो-इस को कर सकती हो। लोगों में जो अनेक वहम और भ्रम इस साधन सम्बन्धी फैल रहे हैं, वह सर्वथा अज्ञानता के कारण हैं। प्यारी बहिनो! अपने अपने अधिकारों को संसार भर मनुष्योंके तुल्य साबित करना है और मनुष्य श्रेणी में उच्च से उच्च पद प्राप्त करना तथा सन्मानित होना है। फिर कोई कारण नहीं कि, आप आत्मिक साधनोंसे विमुख रहें। जो कि वास्तविक उन्नतिका साधन और जरीहा है। यदि मनुष्यों को जगत् पर आत्मिक गुरु होने का अधिकार है, तो तुम्हें भी अवश्य है। पर उसके लिए आत्मिक साधनों की अधिक आवश्यकता है। जो स्त्रीसमाज में अभीतक बहुत कम दिखाई देते हैं।

मुझे आशा है कि मेरी बहनें मेरे इस लेखपर भली भांति विचार करेंगी। और यदि इसे पसन्द करें, तो मैं आगेको योग साधन पर और भी विस्तार पूर्वक लिखनेका यत्न करूंगी॥

"गुरु सबका कल्याण करें"

सूर्यभेदन व्यायामसे स्त्रियोंका लाभ।

" सूर्यभेदन व्यायाम " पर हमारे लेख प्रसिद्ध होनेके पश्चात् कई स्त्रियोंके पत्र आगये हैं। उनकी शंका यह है, कि इन व्यायामोंसे स्त्रियोंको लाभ पहुंच सकता है वा नहीं ? कुमारिकाओंके लिये तथा माताओंके लिये भी यह व्यायाम हितकारक है वा नहीं ? सूर्यभेदन व्यायामके प्रथम लेखमें लिखा ही गया है, कि यह व्यायाम स्त्री और पुरुषके लिये लाभदायक है। तथापि पुरुषको यह व्यायाम लाभकारी होता है, इस विषयमें किसीको कोई शंकाही नहीं है। जो शंका है, वह स्त्रियोंके विषयमें है। इसलिये इस विषयमें थोडासा अधिक स्पष्टीकरण करता हूं।

कुमारिका, कन्या, युवती और वृद्धा अर्थात् सब आयुकी स्त्रियोंके लिये यह सूर्यभेदन व्यायाम अत्यंत लाभदायक है। परंतु इसमें निम्न बातोंका विचार करना आवश्यक है।

(१) मासिक ऋतुके चार पांच दिन यह व्यायाम अथवा कोई अन्य व्यायाम विशेष रूपसे नहीं करना चाहिये। यह समय स्त्रियोंके लिये विश्रांतिका है। इस समय अतिशीत,

अतिउष्ण आदि अवस्थाओंसे बचना और कोई श्रमका कार्य न करना उत्तम होता है।

(२) गर्भवती होनेकी अवस्थामें गर्भके चार मास के पश्चात् यह व्यायाम नहीं करना चाहिये । विशेषतः सर्पासन करना उचित नहीं है । सर्पासनके विना सौम्य रीतिसे पांच या छे मासतक भी यह व्यायाम किया जा सकता है । परंतु छठे मासके बाद सूर्यभेदन करना नहीं चाहिये । इस समयसे प्रसूति होनेके पश्चात् तीन अथवा चार मास तक यह व्यायाम करना नहीं चाहिये । इतने विश्रामके पश्चात् फिर शनैः शनैः किया जा सकता है।

(३) उक्त विश्रांतिके पश्चात् पुनः प्रारंभ करना हो, तो प्रथम दिन चार पांच वार, दूसरे दिन आठ वार, तीसरे दिन बारा वार इस प्रकार प्रति दिन दो अथवा चार की संख्या बढा कर अपनी व्यायामकी संख्यापर शनैः शनैः आना चाहिये।

(४) किसी प्रकार शीघ्रतासे कोई लाभ नहीं होता।

(५) यह सूर्य भेदन व्यायाम स्त्रियोंको न्यून वेगसे करना चाहिए। जो स्त्रियाँ शक्तिशालिनी हैं, उनको पुरुषोंके बराबर वेगसे करनेमें लाभ ही है। परंतु जो स्त्रियाँ अशक्त हैं, उनको शांतिके साथ मंद वेगसे करना उचित है। तथा दस बारह वार व्यायाम करके थोडा विश्राम लेकर पुनः करना उचित है। इस प्रकार अपनी संख्याका व्यायाम करना चाहिये।

यह सूर्य भेदन व्यायाम यहां कई स्त्रियाँ करती हैं। थोडे दिन पूर्व इस्लामपुरमें सूर्य भेदन व्यायाम की "स्पर्धा" हुई थी। इस स्पर्धामें कन्या भी संमिलित थी। जहां सूर्य भेदन व्यायाम की स्पर्धामें कुमारों के साथ कन्याएं भी संमिलित होती हैं, वहां इस व्यायामका प्रचार स्त्रियोंमें भी है इसकी सिद्धता करनेकी आवश्यकता ही नहीं है।

इसके अतिरिक्त कई सरदार और जहागिरदारोंकी धर्मपत्नियां वीस पचीस वर्षोंसे इस सूर्य भेदन व्यायामको कर रही है। पूर्वोक्त नियमोंका पालन करके यह व्यायाम किया जाता हैं, इसलिये संतति होने में भी कोई कष्ट नहीं होते हैं। संतति भी हृष्टपुष्ट है और नीरोग है। सूर्य भेदन व्यायाम करने वाली माताएं भी नीरोग और स्वास्थ्य संपन्न हैं। ये स्त्रियाँ प्रतिदिन दो सौ तक सूर्य भेदन (संख्या १) का व्यायाम करती हैं।

बालिकाएं, कुमारिकाएं तथा प्रौढ स्त्रियाँ भी अनेक हैं कि जो इसको नियम पूर्वक रहीं हैं। कई डाक्टरों का अनुभव यह है कि जो स्त्रियाँ इस व्यायाम को कर रहीं हैं, उनकी तनदुरुस्ती अन्यों की अपेक्षा बहुत ही अच्छी है और उनको प्रसूतिके कष्ट अन्योंकी अपेक्षा बहुत ही कम होते हैं। इस अनुभव के अनंतर ये डाक्टर लोग इसी व्यायामको करनेका उपदेश अन्य स्त्रियोंको देने लगे हैं।

मुंबई के प्रसिद्ध डाक्टरोंकी संमति यह है कि पूर्वोक्त नियमोंके अनुसार यह आसनोंका व्यायाम करनेपर स्त्रियोंको बडा लाभ पहुंच सकता है।

इस लिये सूर्य भेदन व्यायाम संख्या १ स्त्रियों के लिये बडा लाभदायक है। इसविषयमें कोई शंका नहीं है।

दम्माकी बिमारी और शीर्षासन।

(लेखक-श्री रामचंद्र वासुदेव कापरे चित्रकार, कऱ्हाड.)

सन १९१४ के अगस्तमासमें मुझे दम्माका कष्ट प्रारंभ हुआ। इससे पूर्व मुझे इस प्रकार की कोई बीमारी नहीं थी। खांसी, बलगम आदिसे मुझे कभी कष्ट नहीं हुए।

जब दम्माका कष्ट बढ गया तब म० डा० वाटवे महोदयजीके पास गया और उसने बडे परिश्रमसे मेरी शरीरावस्थाकी परीक्षा करके कहा कि-" यह दम्मा आपके पूर्वजोंसे आपके शरीरमें आगया है, इसलिये आपको बडे पथ्यसे आहार विहार करना चाहिये। अन्यथा आपकी शक्ति क्षीण होते ही इस बीमारीके कष्ट आपको बहुत ही सहने पडेंगे।"

दम्माकी बामारी शुरु होनेके पूर्व मेरी दिनचर्या निम्न प्रकार थी-" मैं बंबईमें माधवाश्रम में रहता था। वहां दोपहरके तथा रात्रिके भोजनके समय भी मैं दही, छाछ आदि

बहुतही पीता था। छाछके साथही दूध भी पीताथा। रोटीके साथ भी दही और मिश्री मिलाकर खाता था। रात्रीमें दूध पीनेके पश्चात् नियम से पानी पीता था। और कभी व्यायाम नहीं करता था।" इस प्रकार खासीकी बीमारी होनेके लिये जिस प्रकारका अपथ्य करना चाहिये वह मैं नियमसे करता था।

कई मेरे मित्रोंने कहा भी था कि इस प्रकारके अपथ्य भोजनसे आपको कष्ट भोगने पडेंगे। परंतु मैं अपने स्वास्थ्यकी घमंड में था और इसलिये मैं उनसे कहता था कि–"इस प्रकारके डरसे मैं डरनेवाला नहीं हूं। मुझे न तो खांसी सतायेगी और नाही दम्मा कष्ट देगा। यदि मैं पत्थर भी खालूंगा तो भी मैं पत्थरोंको भी हजम कर सकता हूं। इस लिये मैं आपकी संमतिका मूल्य कुछ भी नहीं समझता हूं।"

इसप्रकार मेरी घमंड कुछ दिन अथवा कुछ साल चलरही थी। अंतमें अपथ्यकी मर्यादा समाप्त होगई और दम्माकी बीमारीने मेरे शरीरपर बडे जोरसे आक्रमण किया।

मेरी माता दम्माके रोगसे बहुत रोगी थी और उनके दोषके कारण वह रोग मेरे शरीरमें आगया। सन १९१४ के अगस्तसे यह दम्मा मुझे सताने लगा। डाक्टरों और वैद्योंके अनेक औषधोपचार किये परंतु यत्किंचितभी आराम नहीं हुआ। होते होते मेरी अवस्था यहां तक पहुंची कि "अब मरता हूं या घडीभरके पश्चात् मरता हूं" इसका ही विचार मेरे सामने उपस्थित हुआ।

ऐसे समयमें पूर्व कालमें किये हुए मेरे सब अपथ्यों का चित्र मेरे सन्मुख उपस्थित हुआ, परंतु अब उस पश्चात्तापसे बनाना क्या था ? पश्चात्तापसे सुधार होनेका काल बहुत ही पूर्व व्यतीत हुआ था। इसलिये अब मेरा मन मृत्युकी ही उपासना करने लगा।

बंबई छोडकर पूनामें आगया, परंतु कुछ भी लाभ नहीं हुआ। वहांसेभी सब कारोबार छोड छाड कर अपनी जन्मभूमि कऱ्हाड में आगया और वहां आर्य वैद्यकके उपचार श्री. श्रीपतराव वैद्यजी के द्वारा करता रहा जिससे कुछ आराम होगया।

थोडा आराम प्राप्त होनेके पश्चात् मैं बंबईमें गया, परंतु वहां जाते ही दमा फिर शुरू हुआ। इसप्रकार कुछ महिने बंबईमें और कुछ मास कऱ्हाडमें रहता रहा। इसकारण मेरे चित्रकारीका व्यवसाय चलानेमें बडी कठिनता होने लगी। इस रीतिसे सन १९१७ तक अत्यंत कष्ट हुए, किसीभी दवासे कोई गुण नहीं हुआ।

सन १९१७ के जून महिनेमें बंबईमें एक योगी संन्यासी आये थे। उनका एक व्याख्यान हुआ जिसमें योगी महाराजने कहा कि "शीर्षासन का अभ्यास करनेसे आंख निर्दोष होते हैं, मस्तिष्क उत्तम कार्य करता है, बाल काले होते हैं, पहिले पंद्रह दिन पांच मिनिट, दूसरे पंद्रह दिन दस मिनिट इस रीतिसे क्रमपूर्वक बढाना और एक घंटा तक

अपना अभ्यास बढाना चाहिये। भोजन उत्तम सात्विक और स्निग्ध होना चाहिये। प्रतिदिन संभव हुआ तो केले खाने चाहिये। इस अभ्याससे सब शरीर सुधर जाता है।"

यह व्याख्यान का वृत्तांत मुझे मित्रों द्वारा विदित हुआ। इसी दिन मैंने शीर्षासन लगाना प्रारंभ किया। प्रति पंद्रह दिन पांच मिनिट बढाते बढाते एक घंटातक अभ्यास मैंने बढाया। पश्चात् मैं सवेरे एक घंटा और शामको एक घंटा करने लगा। कुछ दिनोंके बाद मैं सवेरे ही दो घंटे लगातार करने लगा।

जब मेरा अभ्यास आध घंटेसे अधिक हुआ तबसे मेरा दमा कम होने लगा। गुण प्रतीत होते ही मेरा विश्वास अधिकाधिक जमने लगा। दो घंटे अभ्यास होते ही दमाका नाम-निशान भी न रहा। मैंने और अभ्यास बढाया और तीन घंटे तक शीर्षासन करने लगा। इससे बहुतही उत्साह बढा और सवातीन घंटे तक मैंने अभ्यास किया।

प्रातः चार बजेसे सवासात बजेतक मैं वह आसन करता था।

जब दम्माकी बीमारी पूर्णरूपसे दूर होगई तो फिर मैं केवल दो घंटे का ही अभ्यास करने लगा। जो दम्मा तीन साल औषध खाते खाते भी नहीं गया था वही दम्मा शीर्षासन के अभ्यास से हटगया। अब इस बातको छह वर्ष हुए हैं। मैं प्रतिदिन दो घंटे शीर्षासन करता हूं और एक दिन भी दम्मा का कष्ट नहीं हुआ।

परंतु कुछदिन हुए मेरे डाक्टरोंने कहा और मेरे मित्रों की भी संमति हुई कि अब शीर्षासन करना छोडना चाहिये। मुझे भी वैसाही प्रतीत होता था। इसलिये मैंने एकदम शीर्षासन करना बंद किया। १५।२० दिन कोई कष्ट नहीं हुए, परतु २० दिनोंके पश्चात् दम्माका विकार फिर प्रारंभ हुआ।

इस समय मैं एक अपथ्य भी कर रहाथा। इन दिनों मैं नदीके शीत जलमें खुब तैरता था। जिन दिनोंमें मैं शीर्षासन करता रहता था उन दिनोंमें नदीमें तैरने से भी दम्मा नहीं हुआ। परंतु शीर्षासन का अभ्यास बंद होते ही शीत-जल की बाधा होगई और दम्मा शुरू हो गया।

इसलिये मैंने शीर्षासन का अभ्यास फिर शुरू किया। परंतु दम्माका जोर इतना बढ गया कि किसी दिन शीर्षासन करना भी असंभव होजाता था। परंतु अन्य उपायोंके साथ जब लगातार १५।२० दिन शीर्षासन किया तब दम्माका जोर फिर कम हो गया। इससे स्पष्ट होता है कि शीर्षासन से दम्मा हट जाता है। परंतु अपथ्य नहीं करना चाहिये।

शीर्षासनसे मुझे बहुतही अन्य लाभ हुए हैं। गत छह वर्षोंमें मुझे किसी प्रकारकी बीमारी नहीं हुई। आयनक न लगाते हुए भी मैं चित्रोंका बारीक काम कर सकता हूं, ऐसे मेरे आंख उत्तम हैं। मेरी आयु इस समय ४५ वर्षकी है, परंतु मेरी शक्ति कम नहीं हुई। मैं अब भी बढईका लक-

डीका काम चोखटे आदि बनाना स्वयं ही करता हूं। दम्माके बीमारको नदीके शीत जलमें स्नान करना निःसंदेह हानिकारक है, परंतु शीर्षासनके बलसे मैं वह कर रहा हूं।

गत इन्फ्लुएन्झाके समय मुझे वह ज्वर हुआ। परंतु मैंने औषध लिया नहीं, केवल शीर्षासन किया और ज्वरको हटाया।

इसप्रकार अनेक रीतिसे मुझे इस शीर्षासनसे बहुतही लाभ हुए हैं।

एन्फ्लुएंझाका ज्वर १०५ डिग्रीका था उस समय मैंने शीर्षासन करना शुरू किया। उससे ज्वर उतरने लगा। इस दिन मैंने थोडा थोडा मिलकर कईवार शीर्षासन किया था। ज्वर बहुत हटगया और मुझे भूख लगी। उस समय मैंने थोडासा अन्न भी खालिया। इस प्रकार मैं तीन दिन करता रहा। तीसरे दिन मैं बिलकुल अच्छा हुआ।

इसके पंद्रह दिनके पश्चात् फिर वही बुखार हुआ। उस समय भी मैंने यही उपाय किया। तबसे जो बुखार हटगया है वह इस समयतक मेरे पास आया ही नहीं।

साधारण ज्वरोंपर भी शीर्षासन का परिणाम अच्छा होता है। सिरदर्द पर इसके समान दूसरा उपाय ही नहीं है।

आसनों से आरोग्यका अनुभव।

(ले०--श्री. ज्ञानचंद्र आर्य पुरोहित, आर्य समाज भक्कर)

इसमें संशय नहीं कि आपका पत्र पहुंचे हुए बहुत काल बीत गया-परन्तु कई आकस्मिक कार्योंके वश सेवा में उत्तर नहीं भेज सका हूं। क्षमा कीजिएगा। आपकी आज्ञानुसार आसनों के संबन्ध में अनुभव निजू तथा दूसरों से प्राप्त भेजता हूं-यदि आप उसे उचित समझें तो उद्धृत कर दें।

(१) मुझे विष्टंभ का रोग था। कई औषधिया करने पर भी ठीक नहीं हुआ, हां थोडे काल के लिये आराम आजाता परन्तु चार दिवस पश्चात् अवस्था पूर्ववत् ही हो जाती। मई २४ से शीर्षासन आरंभ किया था। नियमपूर्वक ३ मास तक दीवार के साथ करता रहा जिससे विष्टंभका रोग जाता रहा। जब पांच मास बीत गए तब शरीर में अपाचन सम्बंधी कोई रोग नहीं रहा।

सातवें मास में मुझे एक मित्र द्वारा आंग्ल भाषा का "योग मीमांसा" पत्र मिला, जिस में शीर्षासन संबन्धी लेख पढा। तथा सर्वाङ्गासन के संबंध में भी कुछ ज्ञान प्राप्त किया। इन दोनों आसनों के प्रभाव से दो मासमें ही शरीरांगों में सुडौलता आनी प्रारंभ हो गई। थोडे काल तक

पठनपाठन करनेके पश्चात् जो कभी कभी शिरोवेदना आदि प्रतीत होती थी वह नितान्त नहीं रही।

इस समय १५ मिन्ट तक शीर्षासन, तथा १५ मिन्ट तक सर्वांगासन, १० मिन्ट तक हलासन और चार मिन्ट तक मत्स्यासन कर रहा हूं। स्वास्थ्य नियम पूर्वक चल रहा है। मानसिक शक्तियोंके विकास में भी व्यायाम ने पर्याप्त सहायता दी है। स्फूर्ति और उत्साह का सदैव बने रहना यह इस व्यायाम का अद्भुत चमत्कार है। शीर्षासन तथा सर्वांगासन इन्द्रिय संयमके लिये अत्यन्त लाभकारी हैं। वीर्य दोषों को ठीक कर उन का सान्त्वन करते हैं।

(२) एक देवी जिसकी पाचन शक्ति अत्यन्त शिथिल हो गई थी, जिस का मुख्य कारण चाय पीना था, को भी नियमपूर्वक लगभग दो मास तक शीर्षासन करने पर बडा लाभ हुआ और पाचनशक्ति ठीक होगई। यद्यपि अबभी कभी कभी उसे स्वभाव-वश चाय पानका अवसर आया होता है परन्तु तो भी कोई हानि देखने में नहीं आई।

(३) आर्य समाज मंडई के प्रधान म. धर्मचन्द्रजी सब पोष्ट मास्तर (जिन को उसने आसनों का प्रयोग सिखला दिया था) का पत्र मुझे प्राप्त हुआ है। उन्होंने अपने कई मित्रों पर "शीर्षासन" का विचित्र प्रभाव ही देखा है, वह स्वयं भी एक पीतवर्ण, निर्बल व्यक्ति प्रतीत होते थे। परन्तु उन्होंने भी लगभग तीन मास तक नियमपूर्वक अभ्यास करने के पश्चात्

पाचनादिके सब रोगों से मुक्ति प्राप्त की है, अब उनका मुख-मण्डल तेजस्वी रक्त से भरा हुआ प्रतीत होता है। सारे शरीर में सुडौलता आ गई हैं।

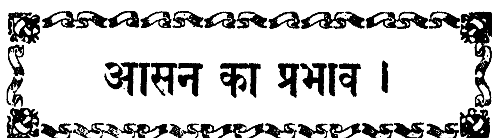
वह लिखते हैं—

(क) एक भाई को जब अधिक काल तक उसे ब्रह्मचर्य धारण करना पडता था तो अण्डकोश में अत्यन्त पीडा आरंभ हो जाती थी। परंतु शीर्षासनके नियमपूर्वक लगभग दो मासके अभ्यास से वह पीडा जाती रही है और वीर्यदोष दूर हो गए हैं।

(ख) एक मोटा पेटवाले व्यक्ति का शरीर भी अत्यन्त भारी था। उन्हें इस का अभ्यास थोडे काल के लिये कराया गया। उनका शरीर हलका हो रहा है। इन के लिये शीर्षासन पश्चात् दौड भी आवश्यक कर दी है।

(ग) एक अब व्यक्ति को अर्श रोग है। दो मास के अभ्यास से रोग कम होने लगा है। कई खट्टी मिरचवाली वस्तु खाने पर भी उन्हें कोई कष्ट नहीं है। अब उनका मुखमण्डल भी तेजस्वी रहता है!

(घ) एक महाशय को क्षयरोग था। उनकी अवस्था जांच करने पर द्वितीय दर्जेकी प्रतीत होती थी। उन्हें क्षुधा नहीं लगती थी। कई औषधियां की गई परन्तु कोई लाभ नहीं हुआ। शीर्षासन तथा खुली हवामें रहनेसे उनके शरीर में अन्तर आना आरंभ हो गया है-पीत वर्ण जाता रहा, क्षुधा अच्छी लगती है। गायनमें भी उनकी आवाज मधुर तथा सुरीली हो गई है।



आसन का प्रभाव।

(एक कुमारिका का अनुभव।)

एक सुप्रसिद्ध डाक्टरकी अविवाहित तरुण कुमारिका श्री० संपादक "योगमीमांसा" लोणावला को लिखती है—

ता. १८।४।२५

"महाशय

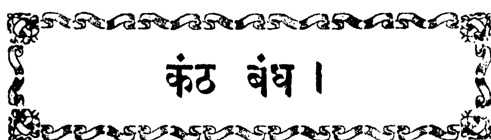
आपके पत्र में मैंने पढा कि शरीरका स्वास्थ्य (Thyroid gland) निकंठ मणिके आरोग्यपर है, तबसे मैंने सर्वांगासन का अभ्यास प्रारंभ किया। पंद्रह दिनोंके अभ्यास से ही मैं बीस मिनिट तक यह आसन करने लगी।

दस बरस के करीब समय व्यतीत हुआ जबसे कि मेरे सिरके पीछे लाल दादके धब्बे बन गये थे और उन पर कई प्रकारके इलाज किये जानेपर भी वे धब्बे हटते नहीं थे।

पंद्रह दिनोंके सर्वांगासन के अभ्यास से वे धब्बे सूखने लगे और तीन मास के अभ्यास से बिलकुल हटगये! गत तीन मासों में मैंने इस आसन का अभ्यास छोडा हुआ है तथापि वह दाद फिर नहीं उत्पन्न हुई। तथा मेरी पाचन शक्ति जो बचपनसे सुस्त थी, इस आसनके अभ्याससे बहुत कुछ सुधर गयी...."

भवदीय..."

(संपादकीय) सर्वांगासन के करने से निकंठ मणि का सुधार होकर उक्त कुमारिका के धब्बे हट गये अथवा सर्वांगासन में और कोई गुणधर्म है जिससे कि उक्त लाभ हुआ॥ इसका विचार सुविज्ञ वैद्यों और डाक्टरोंको करना चाहिये।



कंठ बंध।

शंख के समान कंठ अर्थात् गला होना चाहिए। इसका तात्पर्य यह है, कि मनुष्यका कंठ सामनेसे देखनेपर जबडों की हड्डीसे बडा दीखना चाहिये। परंतु प्रायः लोगोंके गले छोटे होते हैं और जबडों की हड्डियों का अंतर बडा होता है।

ऐसा होना चाहिये। परंतु ऐसा होता है—

जबडेकी हड्डी जबडेकी हड्डी जबडेकी हड्डी जबडेकी हड्डी

गला गला गला गला

गला पतला होनेसे सिरका बोझ उसपर सहा नहीं जाता और थोडीसी अशक्तता आनेपर सिर कंपायमान होने लगता है। तथा वृद्धापकाल होनेपर तो बहुत ही कांपने लगता है।

जो लोग "शीर्षासन" करते हैं उनके गलेमें बहुत शक्ति आती है और इस कारण उक्तदोष से उनको बाधा नहीं होती। तथापि इस विशेष कार्य के लिये योगसाधन में "कंठ-बंध" का अभ्यास किया जाता है। इस की रीति निम्न प्रकार है—

(१) समसूत्र स्थिति।

आप भूमिपर बैठें या खडे रहें, दोनों अवस्थाओं में कंठ-बंध किये जा सकते हैं। परंतु इस समय अपनी पीठ, कमर, गला और सिर समसूत्रमें रखिये। समसूत्र स्थितिके विना किया हुआ कंठबंध लाभदायक नहीं हो सकता।

(२) कंठ-पुरो बंध।

कंठके मूलमें ठोढीको लगानेसे यह बंध सिद्ध होता है। गलेको सिकोड कर ठोढी छाती और गलेकी संधिमें डाटके लगानेसे कंठ पुरोबंध होता है। गलेके मूलस्थानमें दोनों ओरकी हड्डियोंके बीचमें अंगूठा रखने योग्य नरमसा स्थान है, वहां ठोढी लगानी चाहिये। इससे पीठकी रीढके मणियोंका स्थान ठीक होता है। किंचित् काल इस बंधमें बैठनेसेही गलेके पृष्ठ भागपर खिंचाव आता है और वहांकी नस नाडियों की शुद्धि होनेका अनुभव उसी समय आता है। बहुधा लिखने, पढने, चलने आदिके समय मनुष्यका सिर आगे झुकता रहता है और इसकारण गलेके पृष्ठभाग में पृष्ठवंश ठीक न रहनेके कारण दोष उत्पन्न होता है। उसकी निवृत्ति इस बंधके अभ्यास से होती है। इसलिये पृष्ठवंशके दोषको ठीक करनेके कारण

यह बंध आयुष्य वर्धक है ऐसा कहते हैं। किंचित् काल इस बंधका अभ्यास कीजिये, और पुनः पूर्ववत् सिर और गला सीधा कीजिये। इस प्रकार प्रारंभमें बार बार कीजिये। पश्चात् इस बंधमें देरतक भी बैठ सकते हैं। कुंभक के साथ इसका करना अधिक लाभदायक होता है। इससे छाती भी फैलती है।

(३) कंठ-पृष्ठ बंध।

पूर्वोक्त कंठबंध छोडकर मस्तक को सीधा पीठ की ओर ले जाकर, मस्तक का पृष्ठ भाग गलेके पृष्ठभाग के मूलमें लगाइये। इस समय आंख नाक मुख सीधे छतके सामने आजांयगे। पूर्वोक्त कंठपुरोबंधमें गलेका सामने का भाग सिकुड गया था, उसी प्रकार इस बंधमें गलेका पृष्ठभाग सिकुड जाता है। और अच्छी प्रकार छाति आगे फैलती है। इसका भी फल पूर्ववत् ही है।

(४) बाहुकर्ण स्पर्शन।

पूर्ववत् समसूत्रमें रहकर बाहुको ऊपर न करते हुए दायें बाहुको दायां कान लगाइये। किंचित् काल इस अवस्थामें रहकर पश्चात् बांये बाहुको बायां कान लगाइये। इसका अभ्यास वारंवार करनेसे विरुद्ध दिशाकी नसनाडियोंकी शुद्धता होती है।

(५) बाहुहनु स्पर्शन।

पूर्ववत् समसूत्रमें रहकर गलेको घुमाकर अपनी ठोडी किसी एक बाहुको लगाइये, पश्चात् दूसरे बाहुको लगाइये। इस प्रकार

वारंवार करनेसे गला शुद्ध हो जाता है और गले के नसनाडी के दोष दूर हो जाते हैं।

(६) हनुस्कंधास्थि स्पर्शन।

बाहुओं से दो हड्डियां गलेके मूलमें आकर मिलतीं हैं, उनका नाम स्कंधास्थि है। किसी एक हड्डीके मध्यमें हनुका स्पर्श करना और उसके पश्चात् उस की विरुद्ध दिशा के पृष्ठ-भागमें सिर लेजानेसे यह बंध सिद्ध, हो जाता है। इसी प्रकार दूसरी हड्डीपर हनु लगाकर पश्चात् उसके विरुद्ध दिशामें सिर का पृष्ठभाग लेजानेसे दूसरी ओर का बंध सिद्ध होगा। इस प्रकार वारंवार करनेसे बडा लाभ होता है।

(७) शीर्षचक्र।

समसूत्रमें खडा रहकर गलेके साथ सिरको गोल घुमाइये। जितना बडा चक्र सिरके साथ हो सकेगा, उतना कीजिए। दाईं ओर से बांई ओर तथा उस की विरुद्ध दिशामें ये चक्र वारंवार करनेसे बडा लाभ हो सकता है।

(८) सिंहासन।

समसूत्रमें खडा हो कर मुख खोल दें। जितना खोला जा सकता है खोल दें। जिह्वा को जितना बाहिर निकाला जा सकता है निकालें। दांतों को अच्छीप्रकार उग्र रूपमें बाहिर निकाल दें। जैसा शेर और बबरका मुख बडा भयानक होता है उस प्रकार मुख बनाइये। आँखें खोल

लीजिए। गलेकी नस नाडियां अच्छीप्रकार तना कर अपना रूप उग्र बनाइये। यह सब अपने मनसे ही करना चाहिये। इस प्रकार करनेका नाम सिंहासन है। कंठ और मुखके स्नायुओंमें अच्छीप्रकार खिंचाव आता है, इस लिये यह आसन बडा उपयोगी है।

(९) आरोह और अवरोह।

समसूत्रमें अपने धड को रखिये और अपने गलेको ऊपर उठाइये। इसको आरोह कहते हैं। तथा गलेको अंदर दबाइये इसको अवरोह कहते हैं। गलेके स्नायु निर्दोष करने के लिये इसका बहुत उपयोग होता है।

(१०) शीर्षभ्रमण।

समसूत्रमें रहकर अपने सिरको दाईं ओर जितना घुमासकते हैं घुमाइये, पश्चात् बांईं ओर उसी प्रकार अधिकसे अधिक घुमाइये। इस प्रकार बार बार कीजिये। यह अभ्यास विस्तरेपर लेटते हुए भी किया जा सकता है। सिरोनेपर सिर रखकर सिर दाईं ओर घुमाकर दायां कान सिरोनेको लगाइये, पश्चात् उसकी विरुद्ध दिशामें सिर घुमाकर बायां कान सिरोनेको लगाइये। ऐसा वारंवार कीजिये। इससे गलेके स्नायु शुद्ध हो जांयेगे।

कंठको स्वर्गद्वार कहते हैं। इस स्थानकी विशुद्धि करनेके लिये पर्याप्त प्रयत्न होना आवश्यक है। कंठ के निर्दोष होने से उत्तम स्वर बनता है। मस्तिष्कसे मज्जाप्रवाह अच्छी प्रकार

नीचे तक शुद्ध रह सकता है, इसलिये सब शरीरके आरोग्यके साथ कंठ की शुद्धीका संबंध है।

इसके अतिरिक्त कंठबंधका एक विशेष महत्त्व यह है कि, केवल कुंभक की सिद्धि के लिये बडी देरतक कंठमूलमें ठोडी लगानी आवश्यक होती है। इस प्रकार स्थिर बैठना उस समय शक्य होता है कि जिस समय गलेके व्यायामों द्वारा गलेकी नसनाडियां निर्मल हुई हों। इस कारण इस उद्देश्यके लिये यह कंठबंधका अभ्यास बडा सहाय्यकारी होता है।

ऊपर जो कंठबंधके दस व्यायाम बताये हैं, प्रत्येक का अभ्यास प्रारंभमें पांचवार और अभ्यास होनेपर दस या बीस वार करना अच्छा होता है। किसी विशेष कारण के लिये कोई विशेष अभ्यास अधिकवार भी किया जाय, तो कोई हानि नहीं होगी। सब अभ्यासोंको आठ दस मिनिट पर्याप्त होते हैं। आशा यह है कि पाठक इनका योग्य अभ्यास करके कंठकी निर्दोषता सिद्ध करेंगे।

दीर्घश्वासका महत्त्व।

भोजन के विना आदमी सप्ताहों तक निर्वाह कर सकता है। जलके विना घंटों तक वह रह सकता है, किन्तु श्वास के विना एक क्षण भी प्राणी का जीवन चल नहीं सकता।

शरीर के रुधिर की शुद्धी करनेका काम फेफडों का है। ये फेफडे हमारी बहुतही सुन्दर सेवा करते हैं। हमारे फेफडों द्वारा दिन भर में हमारा शरीर इतना विष निकाल देता है कि जिस से बारह हाथी मर जांय। प्रति क्षण हमारे शरीर के पुटों का क्षय होता है। शरीर रूपी शहर में प्रतिक्षण इन पुटरूपी मुरदा का ढेर लग जाता है। किन्तु फेफडों का काम इस बात में बडा ही उपयोगी है। वे बाहर की शुद्ध हवा को इस शहर में ले जाकर प्रत्येक श्वास प्रश्वास द्वारा कार्बोनिक गेस नामक अनुपयोगी तत्त्व को लेकर अपने साथ रक्खे हुये प्राणवायु नामक उपयोगी तत्त्व को उन पुटों को देकर पुनः शरीर में भ्रमण करने के लिये भेज देते हैं। इस प्रकार प्रतिक्षण हमारे शरीर में रचनात्मक और खंडनात्मक क्रियाएं होती रहती हैं। श्वास प्रश्वास के स्वाभाविक सदैव होते हुये भी हमें बहुत बार शिरोवेदना अशक्ति आदिका कुछ अनुभव प्रतीत होने लगता है। क्यों कि हम श्वास प्रश्वास तो करते हैं किन्तु दीर्घ श्वास प्रश्वास नहीं करते हैं। हमारे फुफ्फुसों की १४०० चौदहसौ फीट जगह का बहुत ही थोडा भाग हम श्वास प्रश्वास के उपयोग में लेते हैं। अतः उपयोग न किया हुआ शेष भाग रोगी बन जाता है, निष्क्रिय बन जाता है, इस लिये हमारे में से बहुत सारे विशाल छातीवाले तथा लाल बुझक्कड जैसे दीखते हुये भी न्यूमोनिया तथा क्षय से मरते दीख पड रहे हैं। अतः बडे शोक के साथ कहना पडता है कि वर्तमान में सभ्य गिनी जाने वाली प्रजा

निर्बल फुफ्फुसवाली होती चली जा रही है। बहुत सारे आदमी तो केवल जीने के लिये ही थोडा, श्वासोच्छ्वास ले रहे हैं। उन्हे जरासा परिश्रम लेने से श्वास भर आता है और वे थक जाते हैं। और सर्दी या जुखामके बलिदान बन जाते हैं। वर्तमान सभ्यताका अपना वेग इतना तो बढा है कि इस के साथ साथ रहने के लिये असाधारण फेफडों का तथा दीर्घ श्वास प्रश्वास की शक्ति का होना बडा आवश्यक है किन्तु वर्तमान सभ्यता में गर्क होनेवाली प्रजाओंमें यह बात प्रतीत नहीं होती। गोरीला नामक वानर को उसकी जंगली हालत में से उठा लेकर वर्तमान शहरों में रखने के प्रयोग किये गये तब पता चला कि ये क्षय आदि बीमारियों से मर गये। इसी तरह हिमाच्छादित ध्रुव प्रदेश के निवासी का भी हाल हुआ। कतिपय वर्षोंपर अमेरिका में कितने एस्किमा जाति के स्त्री पुरुषों को लाकर रक्खा गया। उन में से एक के सिवाय अन्य सर्व क्षय और न्यूमोनियासे मर गये। इसका क्या कारण ? हमारा जीवन वैभवी बन रहा है जीवनकी सादगी में रही हुई उपयोगिता को हम देख नहीं सकते। यदि आज हमें कोई डाक्टर कर्ण नालिका से देखकर कह दे कि तुह्मारे फेफडे अच्छे हैं तो हम मनमाने आहार विहार करने लग जाते हैं। किन्तु हमें यह जानना चाहिये कि अच्छे फेफडोंको अच्छा रखने के लिये सतत प्रयत्न और परवाह की जरूरत है और मुखद्वारा श्वास-प्रश्वास न करते हुये नासिका द्वारा ही करना चाहिये।

समवृत्ति प्राणायाम।

प्राणायामके विघ्नोंको दूर करनेका सुगम उपाय।

आज कल नाना प्रकार के दुष्ट व्यसनोंके कारण लोगोंके शरीर ऐसे अशक्त और कमजोर हुए हैं कि, वे कुंभक के साथ थोडेसे भी प्राणायाम कर नहीं सकते ! ! कुंभक प्राणायाम करनेसे कई लोग नाना प्रकारकी शिकायतें करते रहते हैं, वास्तवमें इसका दोष प्राणायाम के साथ बिलकुल नहीं है; परंतु उनके दुर्व्यसनों के साथ अथवा उनके माता पिताओंके दुर्व्यसनाधीनता के साथ संबंध रखता है। दस पंद्रह वर्षोंके सूक्ष्म निरीक्षणसे जो बातें अनुभव में आचुकीं हैं, उनका सारांश रूपसे वर्णन यहां करता हूं, जिससे प्राणायाम करनेवाले अपनी पूर्ण तैयारी करके ही प्राणायाम का अभ्यास कर सकेंगे।

जो स्वयं जन्मसे मांसाहारी हैं और विशेषतः जिनके बापदादा भी मांसाहारी–अर्थात् अधिक मांसाहारी रहे हैं, उनको कुंभक प्राणायाम से विविध प्रकारके कष्ट होते हैं। छातीमें, पसलियोंमें दर्द होता है, पेटकी गडबड उत्पन्न होती है, सिरमें कई दोष होने का ख्याल हो जाता है। विशेषतः श्वास-दमा-आदि का प्रकोप होता है। इसका कारण इतना ही है कि, मांसाहारी कुलमें जन्म होनेके कारण अथवा अपने शरीरके

सब परमाणु मांसभोजन के ही होनेके कारण खून, मज्जातंतु तथा फेंफडोंमें विशेषतः और सब शरीरमें साधारणतः प्राण-शक्तिको धारण करनेका बल ही नहीं रहता है। प्राणशक्ति का बल सबसे अधिक है, इस लिये जब उसको स्वाधीन कर-नेका यत्न किया जाता है, वह शक्ति क्रोधित होकर प्रतिबंध को तोडना चाहती है। प्राण स्वयं " वीरभद्र " होनेसे उसके सामने अन्य शक्तियां कमजोर ही होतीं हैं। मांसभोजी लोग मसाले आदि उत्तेजक पदार्थ बहुत खाते हैं, इसलिये उनके शरीरके परमाणुओंमें प्राणधारक शक्ति कम ही होती है। मांसके साथ मद्यसेवन करनेवालों में, और जिनमें आनुवंशिक मद्य पान शुरू है, उनमें तो बहुत ही, प्राणधारक शक्ति अत्यंत हीन अवस्थामें रहती है। ऐसे लोग जिस समय अपने प्राण-रूपी " वीरभद्र " को रोकना चाहते हैं, उस समय वह उनको ही ताडन करता है और जो शरीरका भाग अत्यंत कमजोर होता है, उसीमें बिगाड होने लगता है। इसलिये ऐसे लोगोंको प्रारंभमें उत्तम पथ्य करना चाहिये और पश्चात् प्राणायाम शुरू करना चाहिये।

मांस भोजनसे यद्यपि शरीर बडा पुष्ट होता है तथापि सौमें ३६ ऐसी बीमारियों की स्वभावतः संभावना उनके शरीरमें रहती है, कि जो रोग कदापि फल भोजियों को होते ही नहीं। इसलिये दौडना, तैरना अथवा दीर्घ काल तक कोई कार्य करना, जिसमें कि प्राणशक्तिकी स्थिरताकी आवश्यकता रहती

है, ऐसे कार्योंमें मांसभोजी लोग फलभोजियोंके पीछे हमेशा रहते हैं। यही कारण है कि, इनसे कुंभक नहीं होता और बलसे किया जाय तो हानि करता है। मद्यपियोंके लिये तो यह भय अत्यंत अधिक है।

भंग, गांजा, अफीम, चरस आदि भयंकर व्यसन करनेवालोंके लिये तो कुंभक प्रायः अशक्य ही है। तमाखू खाने पीने वालोंके शरीरमें रक्त दोष बहुत होता है, तथा तमाखुके व्यसन जन्मभर करनेवालों की संततिमें खूनकी बीमारी, मज्जातंतुओंकी कमजोरी और हृदयकी निर्बलता जन्मसे ही रहती है। इस कारण इन लोगोंसे कुंभक प्राणायाम करना कठिन हो जाता है, तथा बलपूर्वक करने से हृदयकी कमजोरी बढ जानेकी संभावना होती है। न्यूनाधिक व्यसनके कारण न्यूनाधिक परिणाम होता है इसका विचार पाठक भी कर सकते हैं। अर्थात् यदि मातापिता बहुत बलवान हुए, तो उनपर व्यसनों का बुरा परिणाम उतना नहीं होता है, जितना कि कमजोर मनुष्योंपर होता है, इसलिये संतानों में भी उसी प्रमाणसे दोष उतरते हैं। तमाखु के व्यसनमें विशेष यह बात है, कि, इसके सेवन करने वाले पर थोडासा बुरा परिणाम होता ही है, परंतु उसके वीर्य में बहुत ही दोष उत्पन्न होते हैं। इसका परिणाम यह होता है कि, उनकी संततिमें जन्मसे वीर्य दोष और हृद्यकी कमजोरी रहती है तथा खूनकी खराबी और मज्जातंतुओंकी शिथिलता जन्मसे ही रहती है। इस लिये तमाखू आदि

व्यसन किसी गृहस्थीको करने नहीं चाहिये । परंतु आजकल सिगरेट आदि पीना बडा सभ्यताका द्योतक समझा जाता है, और बडे बडे अखबारोंमें तमाखूके विज्ञापन भी कम नहीं होते हैं । इस दुष्ट सभ्यता के साथ "वैदिक धर्म" को अवश्य युद्ध करना चाहिये, और निर्व्यसनता की सर्वत्र स्थापना करनी चाहिये ।

इससे और सभ्य व्यसन हैं, जो चाय काफी आदि रूपमें हमारे चूले तक घुस गये है ! ! ! ये व्यसन मज्जातंतुओंको ऐसा बिगाडते हैं कि उस से बचनेका उपाय आगे की आयुमें कोई भी नहीं होता है । चाय काफी पीने वाले माता पिता-ओंके बाल बच्चोंमें जन्म से मज्जातंतुओंकी निर्बलता रहती है और उसमें अधिक दोष इस कारण उत्पन्न होता है कि, जब स्वयं पीते हुए माता पिता अपने छोटे छोटे बालबच्चों को भी चा काफी पिलाते हैं ! कई पुत्रद्रोही पिता हमने ऐसे देखे हैं कि जो स्वयं बिडी पीकर अपने चारपांच वर्षके लडके को पीने देते हैं ! ! ! इसी प्रकार चा कापी भी पिलाते ही हैं ! ! बचपन से जो बच्चे चा काफी पीते हैं, उनको आगे दूध भी हाजम नहीं होता, और अन्तमें पेट का बिगाड निः-संदेह हो जाता है । ये सब व्यसन 'सभ्यता' के नामसे अपने देशमें फैले हैं ! ! जिन लोगों में विचार का कार्य कम किया जाता है , उन जातियोंमें इन व्यसनों का बुरा परिणाम कम दिखाई देता है; परंतु जिन लोगों के पीछे पढने पढाने का

काम बडा होता है, अर्थात् जो दिमागी कार्य बहुत करते हैं, उनमें तथा उनकी संतति में इन दुष्ट व्यसनों के परिणाम भयानक रीतिसे दिखाई देते हैं। नाश कम हो वा अधिक हो इन व्यसनोंसे नाश निःसंदेह होता है, इस लिये सुविचारी धार्मिकों को इन व्यसनोंसे बहुत दूर रहना चाहिये।

"हुका पानी" शुरू करना या बंद करना जिन लोगोंसे संमान के साथ संबंध रखता है, उन जातियोंकी हीन अवस्थाका वर्णन नहीं हो सकता। इस लिये सब पाठकोंसे प्रार्थना है कि, वे उक्त व्यसनोंसे अपने आपको तथा अपने इष्टमित्रों, अपने परिवारके लोगों और अपनी जातिके लोगोंको दूर रखनेका यत्न करें।

जो लोग ऐसी हीन परिस्थितिमें जन्मे हैं, उनको कुंभक प्राणायाम के पूर्व पथ्य करना चाहिये और पश्चात् अभ्यास का प्रारंभ करना उचित है। पथ्य यह है, (१) मांस भोजन छोडदेना, (२) मसाले कम करते करते बिलकुल न्यून करने और अंतमें छोडना अथवा अतिन्यून उपयोग करना, (३) खटाई, मिर्च आदि पदार्थ कम खाना, (४) वीर्यदोष हुआ होगा, तो उसका उपाय–जो " ब्रम्हचर्य " पुस्तक में लिखा है–करना और उस दोषसे निवृत्त होना, (५) सात्विक भोजन करना, फलोंका सेवन अधिक करना, (६) विशेषतः 'गायका दूध पीना,' असंभव हुआ तो बकरी का पीना, ये दूध बिलकुल न मिलनेकी अवस्थामें म्हैसका पीया जा सकता है।

" गायके दूधमें प्राण धारक शक्ति सबसे अधिक होती है।" प्राणायाम करनेवालोंको गायका दूध अवश्य पीना चाहिये, आजकल गौवें कम होती जाती हैं। यह एक धार्मिक आपत्ति है, इस लिये गोरक्षण और गोवर्धन का प्रयत्न अवश्य करना चाहिये। गोदुग्ध के अभावमें भैस का दूध लेना पडेगा। अन्य रहने सहनेमें सात्विक भाव अधिक लाना चाहिये। इस प्रकार शरीरदोष की न्यूनाधिकताके अनुसार एक वर्षसे तीन वर्ष तक पथ्य करना चाहिये। जिनके शरीर बहुत दोषोंसे युक्त हों, उनको कदाचित् अधिक भी करना पडे। इस प्रकार देहशुद्धिका उपाय करते करते निम्नलिखित " समवृत्ति प्राणायाम " का अभ्यास करनेसे बडा लाभ होता है।

" समवृत्ति प्राणायाम " वह होता है कि जिसमें आंतरिक और बाह्य कुंभक नहीं होता। समगति से तथा मंद वेगसे श्वास और उच्छ्वास चलते रहते हैं। पहिले आप श्वासकी गति मंद कीजिये और पश्चात् श्वासको जितना समय लगता है, उतना ही उच्छ्वास को लगाइये। श्वासोच्छ्वासकी गति आप अंकोंकी गिनतीसे माप सकते हैं, अथवा ॐ कार के जपसे अथवा किसी अन्य मंत्रके जपसे माप सकते हैं। यदि आपका श्वास आठ अंकोंसे अंदर जाता है, तो आठ ही अंकोंसे उसको बाहिर छोडिये। फिर उतने ही अंकोंसे अंदर

लेकर उतने ही समयसे बाहिर छोडिये। किसी प्रकार प्राण-शक्तिपर बलका दबाव न डालते हुए जितना आसानीसे हो सकता है उतना ही करते जाइये। इस प्रकार दो सप्ताह करनेके पश्चात् एक अंककी संख्या बढाइये। फिर प्रति पंद्रह दिनके पश्चात् एक अंककी संख्या बढाइये। बीसकी संख्या होने तक श्वास और उतनेही समयका उच्छ्वास होने तक ही कीजिये। कईयोंके मतसे २४ की संख्या तक भी बढाया जासकता है। बढाया तो इससे भी अधिक जा सकता है, परन्तु यह सब प्रत्येक प्रकृतिके अनुसारही बढाना योग्य होता है। इसलिये हमारा ख्याल यह है कि जिनका विचार हम इस लेखमें कर रहे हैं, उनके शरीरके बलके अनुसार वीस अथवा चौवीसकी संख्यातक बढाना पर्याप्त है।

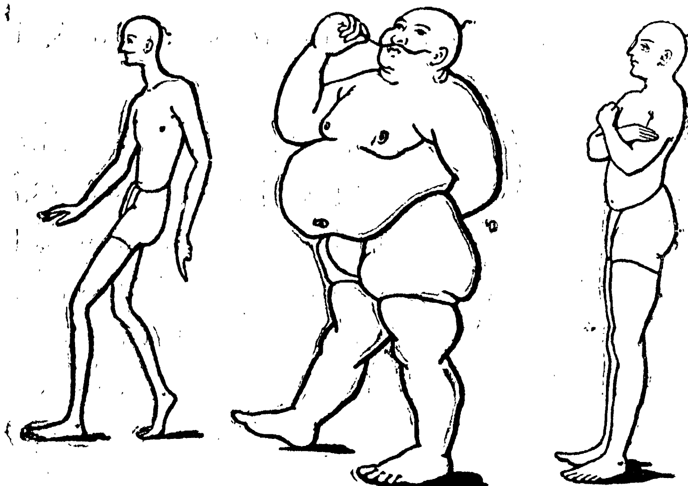
श्वास तथा उछ्वास इतनी मंदगतिसे हो कि उसका बिल-कुल आवाज न हो, श्वासोछ्वासका आवाज न तो दूसरेको सुनाई दे और न अपने आपको सुनाई देवे। नहीं तो कई-योंके श्वासका आवाज बडा दूर तक सुनाई देता है, ऐसा श्वास लेना ठीक नहीं है। शब्द रहित श्वास और उच्छ्वास चलने चाहिये और नियमित गतिसे होने चाहिये।

उछ्वास छोडनेके समय पूरा छोडना चाहिये, अर्थात् फेंफडोंको निःशेष खाली करना चाहिये। तथा श्वास लेनेके समय भी फेंफडोंके निचला भाग जो पेटके पास होता है,

उसमें श्वास पहिले पहुंचे और पश्चात् क्रमशः ऊपरके भागाम श्वास भरना चाहिये । और श्वास भरनेके समय अथवा उच्छ्वास छोडनेके समय किसी प्रकारका धक्का लगना नहीं चाहिये । भरना भी ऐसा चाहिये और छोडना भी ऐसा चाहिये कि जो समझमें भी न आवे ।

दमा और श्वासके रोगी, तथा जिनके फेंफडे बडे कमजोर होते हैं, यदि अपनी शक्तिके अनुसार इस प्राणायामको गर्मी के दिनों में शुरू करेंगे, तो उनके दोष दूर हो सकते हैं। किसी प्रकार की बीमार अवस्थामें इस प्राणायामको करना हो, तो गर्म हवा का स्थान पसंद करना योग्य है । जिस हवामें आर्द्र सर्दी है उस गीली हवामें बैठकर करना अच्छा नहीं है । वायु शुद्ध हो परंतु गीला और सर्द न हो । इस लेखके प्रारंभमें जिनका वर्णन किया है, उन लोगों में प्राणका बल बढाने के लिए यह " समवृत्ति प्राणायाम " बडा उपयोगी है। बीमार अवस्थामें इसको शक्तिसे कम करना योग्य है, योग्य शक्ति आनेपर बढाया जा सकता है । आशा है कि इस विधिके अनुसार करके साधारण लोग इससे लाभ उठायेंगे ।

आप कैसे हैं ?



म. लकीरचंद, सेठ कद्दूलाल, सुदेह शर्मा.

आपके सन्मुख ये तीन चित्र हैं। आप इनकी ओर देखिये और अपना कौनसा वर्ग है इसका विचार कीजिये।

"म. लकीरचंद" जी का चित्र देखिये, इसमें केवल अस्थि मात्र अवशेष रहा है, मनके उत्साहके साथ ये कार्य कर रहे हैं, परंतु शरीरकी अवस्था बडी शोचनीय है। आप इस वर्गमें कदापि न रहिये। यदि आपमेंसे कोई सज्जन इस श्रेणीमें हों, तो उनको आसनोंका अभ्यास करके दूसरी श्रेणीमें प्रविष्ट होना आवश्यक है।

" सेठ कद्दूलाल " जी की दूसरी श्रेणी है। कई लोग इस श्रेणीमें जाना पसंद करते हैं। विशाल पेट है, गोल मुख दिखाई देता है, हाथभी मोटे ताजे दीखते हैं और कदाचित् कईयोंके विचारसे यह अवस्था अच्छीभी समझी जाती होगी। परंतु यह सेठ कद्दुभाईजी की अवस्था महाशय लकीरचंदजी-सेभी खराब है। लकीरचंदजीकी श्रेणीके लोग दीर्घ आयु-तक जीवित रह सकते हैं, परंतु सेठ कद्दुलालजीकी श्रेणीके लोग अल्पायुमें ही यात्रा समाप्त कर लेते हैं। पेटमें जो इतना बोझ है वह अच्छा नहीं है, इसके कारण पेटके स्नायु निर्बल होते जाते हैं। इस प्रकार पेटका आकार जितना बढेगा उतना अधिक स्थान मृत्युको प्राप्त होता है। इस लिये पेटका आकार छोटा रखना चाहिये।

पेटको छोटा कैसा बनाया जा सकता है? ऐसा प्रश्न कई पाठक पूछते हैं। प्रतिदिन योगके आसन करनेसे दो चार महिनोंमें पेट ठीक होने लगता है। शरीरकी फूर्ति बढती है, थकावट दूर होती है और नित्य उत्साह प्रतीत होने लगता है। इसमें कोई व्यय नहीं है, परंतु प्रतिदिन व्यायाम करनेका निश्चय करना ही आवश्यक है।

आसनोंका व्यायाम करनेसे शरीरपरकी चर्बी कम होगी, स्नायुओंमें बल बढेगा, और शरीरकी जैसी अवस्था चाहिये वैसीही रहेगी। जो म. लकीरचंदके समान पहिले ही कृश होते हैं, वेभी आसनोंका अभ्यास करनेसे, पहिले महिनेमें

अधिक पतले हो जाते हैं; परंतु दूसरे महिनेसे पचनशक्ति बढ जानेके कारण पुष्ट होने लगते हैं, क्यों कि खायाहुआ अन्न अच्छी प्रकार पचन होता है। मुखकी रुचि अच्छी होती है, और भी बहुत लाभ होते हैं।

तात्पर्य यह कि म. लकीरचंदजीका तथा सेठ कद्दुलाल-जीका वर्ग अच्छा नहीं है। दोनोंको अपने आरोग्य के लिये यत्न अवश्य करना चाहिये। म. लकीरचंदजीको गायका घी और दूध अधिक पीना चाहिये, तथा सेठजीको पहिले दो तीन मास ये स्निग्ध पदार्थ कम खाने चाहिये। जब दोनोंकी अवस्था ठीक सम हो जायगी, तब वे अपने अनुकूल भोजन यथेच्छ कर सकते हैं।

म. सुदेहशर्माजी का जो वर्ग है, वह सम वर्ग है और " समत्व का नामही योग है।" गीतामें कहा है कि—

समत्वंयोगउच्यते। भ. गी. २।४८

समता प्राप्त करनाही योगका उद्देश्य है। मन बुद्धि और चित्तकी समवृत्ति होगई तो उसको समाधि कहते हैं। इंद्रियों-की समवृत्तिको संयम अथवा निग्रह कहते हैं, तथा शरीरकी समपुष्टताको भी समत्व कहते हैं। शरीरसे लेकर आत्मा-तक समत्व साधन करना योगको अभीष्ट है; इतनाही नहीं, परंतु समाजमें व्यवहार करनेके समय भी समवृत्ति धारण करना आवश्यक है, यह बात यमनियमोंसे साध्य होती है।

जिनके देह म० सुदेहशर्माजीके समान पहिले से ही सम हैं, उनको योगका अभ्यास इसलिये करना चाहिये कि, अपना शरीर अधिक दीर्घकाल तक अच्छी अवस्थामें रहे। तथा जिनके देह ऐसी अवस्थामें नहीं हैं, उनको यह आदर्श सन्मुख रखते हुए आसनोंका उत्तम अभ्यास करना अत्यंत आवश्यक है।

कई पूछते हैं कि, किस आयुमें यह अभ्यास करना योग्य है। इस प्रश्नके उत्तरमें निवेदन है कि, छः वर्षकी आयुसे सत्तर अस्सी वर्षकी आयुतक के लोग इससे इस समय लाभ उठा रहे हैं। जो लोग पचीसवे वर्ष वृद्ध दिखाई देते थे, वेही पचासवे वर्ष तरुण दीखने लगे हैं, जो पचीसवें वर्ष एक मीलभी नहीं चल सकते थे, वेही पचास वे वर्ष हिमालयके पहाडोंकी सफर करके आये हैं। जिनके शरीरों पर यह परिणाम हुआ है, वे इस समय जीवित हैं, और वे स्वयं भी अपना अनुभव कह सकते हैं।

रुग्ण अवस्थामें जिनको बडी अशक्तता आगई है, वे यदि युक्तिसे शनैः शनैः आसनोंका अभ्यास करेंगे, तो उनका पेट, यकृत, प्लीहा तथा आंतोंके स्थान अच्छा कार्य करने लगेंगे। और उनकी प्रकृति शीघ्रही अच्छी होजायगी। परंतु इस अशक्त अवस्थामें बहुत थोडा अभ्यास करना चाहिये, और प्रथम अत्यंत सुगम आसन करके पश्चात् जैसी शक्ति बढ जायगी, वैसे कठिन आसन करने योग्य हैं। परंतु यह बात हरएक व्यायामके साथ ही देखनी होती है।

आसनोंके विषयमें एक मुख्य बात, जो देखनेमें आगई है, वह यह है कि, जिसप्रकार अन्य व्यायामोंसे अशक्त हृदयपर बडा दबाव पडता है, और वह दिन प्रतिदिन अधिक निर्बल होता जाता है, वैसा हृदयपर दुष्परिणाम आसनोंके व्यायामोंसे कदापि नहीं होता है; प्रत्युत इस योगके व्यायामोंसे हृदयको आराम मिलता है; इसलिये ये व्यायाम अशक्त अवस्थामें भी उतने हानिकारक नहीं हैं, जैसे कि अन्य व्यायाम हैं। इस लिये रोगके कारण दुर्बल बनेहुए मनुष्योंको आसनोंसे बड़ा लाभ होता है।

तात्पर्य बालक, तरुण, वृद्ध, व्याधिग्रस्त अथवा दुर्बल, तथा स्त्रियोंको भी ये आसन बडे लाभदायक हैं। जो स्त्रियां विशेष प्रकारके आसन गर्भधारण के पश्चात् करती रहेगीं, उनको प्रसूतिके कष्ट कदापि नहीं होंगे। ये अनुभव देखे गये हैं, इसलिये इस विषयमें अब कोई संदेह ही नहीं है।

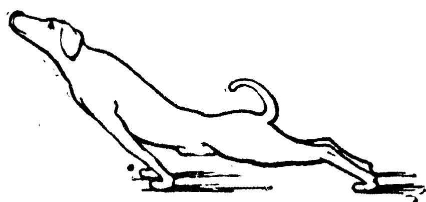
कई आसन खासकर पुरुषोंके लिये ही हैं, कई केवल स्त्रियोंके लिये हैं, कई दोनोंके लिये समान हैं और कई ऐसे हैं कि जो विशेष प्रकारसे पुरुष कर सकते हैं और वेही आसन स्त्रियोंको दूसरी प्रकार करने होते हैं। इस व्यवस्थासे जो लोग आसन करते हैं, उनको बहुत लाभ होता है।

कई लोग, आसनोंसे बडी भूख लगती है इस लिये, इतना अधिक खाते हैं कि, वे अपचनसे बीमार हो जाते हैं। कितनीभी भूख लगी तो जब उससेभी अधिक खाया जाय, तो अपचन होगा ही। तथा कई ऐसे डरते हैं,

और भूख लगनेपरभी बहुत कम खाते हैं; ये लोग सूखते चले जाते हैं । तिसरे लोग अयोग्य पदार्थोंका अयोग्य समयमें सेवन करते हैं। इत्यादि जो आदतें हैं, सब की सब खराब हैं । जो योगाभ्यासके क्षेत्रमें अपना कदम रखना चाहते हैं, उनको उचित है कि, वे अपना आचरण और व्यवहार योग्य नियमोंसे बंधा हुआ रखें, और योग्य अभ्यास करके योग्य आहार विहारके साथ अपनी उन्नति प्राप्त करें। निश्चय करनेपर यह सबको साध्य हो सकता है ।

आसनोंका तत्त्व ।

आसनोंका तत्त्व समझनेके बाद आसनोंका अभ्यास करनेसे मनुष्य बहुत लाभ प्राप्त कर सकता है । इस लिये आसनोंके मूल तत्त्वके विषयमें थोडासा यहां लिखना आवश्यक है । योगके ग्रंथोंमें कहा है कि, आसन उतने हैं कि, जितनी जीवजातियां हैं, अर्थात् प्रत्येक जातिके प्राणीसे एक अथवा अनेक आसन सीखेगये हैं । यह तब हो सकता है,



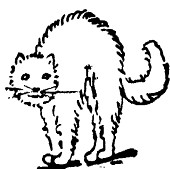
कि जब मनुष्य प्रत्येक जातिके प्राणीका व्यवहार सूक्ष्म दृष्टिसे

निरीक्षण करेगा और देखेगा कि, उसके चालचलनमें आरो-ग्यवर्धक चलनवलन कौनसा है। ऋषिमुनी और योगी सूक्ष्म दृष्टिसे हरएक प्राणीका व्यवहार और उसका चलनवलन देखते थे, इतनाही नहीं, प्रत्युत वृक्षवनस्पतिका भी इसी दृष्टिसे निरीक्षण करते थे, और उनमें जो लाभदायक बात विदित होती थी, उसका स्वीकार करते थे, यही उनकी उन्नतिका मूलमंत्र था। आजभी हमें यदि अपनी उन्नतिकी साधना करनी है, तो उसी रीतिका अवलंबन करना चाहिए।

वृक्षवनस्पति, पशुपक्षी और कीटपतंग आदिकोंका इस रीतिसे निरीक्षण करनेका अभ्यास अनेक वर्षोंतक करनेसे इस तत्वका ज्ञान इस समयमें भी होना संभवनीय है। यह समझनेकी अवश्यकता नहीं है कि, ऋषिमुनियों द्वारा जो खोज हो गई है वह संपूर्ण हो चुकी है; अथवा उस दिशामें अधिक खोजकी आवश्यकता नहीं है। यदि कोई मनुष्य उक्त प्रकार विश्वास करके अपनी खोज बंद करेगा, तो निश्चय समझिये कि, वह ऋषि प्रणालीके सर्वथा विरुद्ध होगा। आदर पूर्वक ऋषियोंकी खोजका हमको स्वीकार करना चाहिये, और अधिक आगे बढना चाहिये, तभी ऋषिऋणसे उत्तीर्ण होनेकी संभावना है। ऋषियोंकी शक्ति अगाध थी, इसलिये उन्होंने अनेक विद्याओंमें विविध प्रकारकी प्रगति की थी, हम वैसा कर सकें या न कर सकें, तथापि जितना हमसे हो सकता है, उतना अवश्य प्रयत्न करना चाहिये। इसलिये यहां आसनोंके

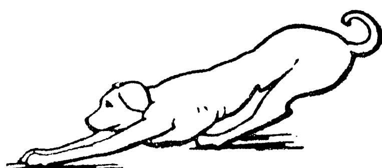
अभ्यासमें जो तत्त्व कार्य कर रहा है, उसका विचार करता हूं। इसका मनन करके पाठक इस क्षेत्रमें अधिक खोज करनेका यत्न करें।

जो पशुपक्षी आपके आसपास रहते हैं, उनका सूक्ष्म दृष्टिसे



और शांतिसे निरीक्षण कीजिये और देखिये कि, उनके व्यवहार किस प्रकार हो रहे हैं। जिस समय बिल्ली सोकर उठती है, उस समय वह चार पावोंपर खडी होकर बीचका पेट ऊपर उठाकर अपने पृष्ठवंशमें खिंचाव करती है। दो चार सेकंद ऐसा करके पश्चात् अपने कार्य करने लगती है। प्रतिदिन बिल्लीका यह आसन आप देख सकते हैं। विना सीखे सिखाये यह बिल्ली इस प्रकारके आसन करती है, ये आसन स्वयं उनसे होते हैं, इसलिये ये स्वाभाविक हैं। पाठक बिल्लीसे ये आसन सीख सकते हैं।

कुत्तेके हिलने जुलनेका इसी प्रकार निरीक्षण कीजिये। तो



इस पशुसे भी आपको दो चार आसनोंका उपदेश मिल सकता है। जब यह पशु सुस्ति निकालता है, तब पिछले और अगले पावोंके सहारेसे खिंचाव करता है। इस प्रकारके कई आसन इस कुत्तेके हिलने जुलनेके निरी-

क्षणसे आपको प्राप्त हो सकते हैं। आसनोंको जिन पशुपक्षियोंके नाम हैं, उनका निरीक्षण करनेसे पता लग सकता है कि, उन पशुओंका स्वभावधर्म कैसा है, और वे किस प्रकारका "स्नायु-चालन" करते हैं, और उनके अवयवचालनसे आसनोंका बोध कैसा हो सकता है।

विशेषतः बंदर (वानर) और रीछ (ऋक्ष) का हिलना जुलना देखनेसे उनके अंदर अनेक आसन स्वतः सिद्ध दिखाई देंगे। हर समय इनकी कुचेष्टाओंमें विविध आसन होते ही रहते हैं, इसलिये नित्य आसन करनेके कारण ही इनके शरीरपर चरबी बहुत कम रहती है, और इनके शरीर भी बहुत ही फुर्तिले होते हैं। मनुष्य भी यदि आसनों का व्यायाम करता जायगा, तो उसका शरीर उक्त कारणसेही चुस्त रहेगा, और उससे सुस्ति दूर होगी। बंदर और रीछ के हाथ और पांव ऐसे विलक्षण चपलताके साथ घूमते हैं कि, वे अपने हाथ और पांवसे अपने शरीरके प्रायः हरएक भागको स्पर्श कर सकते हैं। इसीमें अनेक आसन सिद्ध होते हैं।

सांप, उंट, मत्स्य, हंस, मोर, बग आदि अनेक पशुपक्षियोंके नाम आसनोंको दिये गये हैं। जिस आसनके साथ जिस पशुपक्षिका विशेष संबंध है, उस पशुपक्षिका चित्र प्रायः इस पुस्तकमें आसनके चित्रके साथ दिया है, उसका विचार करनेसे पाठक जान सकते हैं कि, पशुपक्षिके स्वाभाविक हलचलके साथ आसनका संबंध क्या है। ये आसनोंके नाम ही

बता रहे हैं कि, इसप्रकारके आसनोंकी कल्पना पशुओंके अंग-विक्षेपोंका विचार करनेसेही ऋषिमुनियोंको सूझी थी।

इसके सिवाय दूसरा भी एक विचार है, उसका तात्पर्य यह है कि, मनुष्य सब योनियोंमेंसे गुजर कर मनुष्य योनीमें आगया है, गर्भाशयमें भी मानवी गर्भके परिवर्तनोंमें यह विकासका संपूर्ण इतिहास दिखाई देता है। प्रत्येक अन्य योनीके प्राणीके शरीरमें जो विशेषता है, वह सूक्ष्म रीतिसे अथवा गुप्त रीतिसे इस मानवी शरीरमें विद्यमान है। इसलिये सब पशु-पक्षियोंके विशेष अंगविक्षेप मनुष्यके लिये लाभदायक होना संभवनीय हैं। जिन योगियोंनें आसन-विचारमें अपने जन्म व्यतीत किये, उनका कथन है कि, " जितनी जीवजातियां हैं उतने आसन हैं।' इस कथन का मूल आशय उक्त प्रकारही है। चूं कि प्रत्येक जीवजातिकी विशेषता मानवदेहमें है, इस लिये प्रत्येक जीवजातिकी विशेष " अंगचालना " नरदेहके आरोग्यकी साधक होनेमें शंकाही नहीं हो सकती। इस तत्व पर आसनों की मूल रचना होगई है, यदि यह मूलतत्व पाठकोंके मनमें आजायगा, तो वे अधिक विचार करके नवीन अधिक आसन भी ढूंढकर निकाल सकते हैं। इस लिये पाठक इस दृष्टिसे विचार करें।

इसीप्रकार छोटी ऊमरका बालक किसप्रकार अपने हाथ पांव हिलाता रहता है, इसका भी अवश्य विचार करना चाहिये। यद्यपि विविध आसनों की उसके लिए उतनी आव-

श्यकताही नहीं है, तथापि नीरोगी बालक आनंदित अवस्थामें सतत अपने हाथपांव हिलाता रहता है। सोनेकी अवस्थामें तथा रोगी अवस्थामें वह हाथपांव नहीं हिलाता, परंतु नीरोग जागृत अवस्थामें उसकी सतत हलचल चलती रहती है। इसका सूक्ष्म निरीक्षण करनेसे स्वाभाविक व्यायामका पता लग सकता है। वह डंबेलस मुद्गल आदिका बनावटी व्यायाम नहीं करता, परंतु अपने हाथ पांवोंको वारंवार खींचता है और "खींचनेका व्यायाम" सदा करता रहता है। आसनोंकी व्यायाम पद्धतिमें यही खिंचाव का व्यायाम मुख्य है।

जोर, बैठक, दंड, दौड, मुद्गल, डंबेलस आदि जो अनेक व्यायाम हैं, उनमें बोझ उठाने और एकही प्रकारकी गति एक एक स्नायुको अनेक वार देनी होती है। इसप्रकार के व्यायामोंसे स्नायुओंका आकार बहुत बढ जाता है, और उनमें बल भी बहुत आता है, परंतु वहांका आरोग्य नहीं रहता। इसका कारण यह है कि, स्नायुकी अधिक गति करनेसे उस स्नायुमें रक्त बहुत आता है। और वहां रक्तका संचय प्रमाणकी अपेक्षा अधिक बढनेसे वहांके सूक्ष्म मज्जातंतु फट जाते हैं। इस कारण इस प्रकारके व्यायामोंसे शक्ति बढनेपर भी आरोग्य नहीं बढ सकता। पहिलवानोंके शरीर इतने बलवान और हृष्टपुष्ट होनेपर भी कोई पहिलवान पूर्णायुषी नहीं होता है और वे अति अल्प आयुमें मर जाते हैं। परंतु योगी लोग, सब व्यवस्था ठीक होनेकी अवस्थामें और बालपनसे योग-जीवन सिद्ध होनेपर

तथा निरोग मातापितासे जन्म होनेकी संभावनामें, तीन गुणा आयुष्य प्राप्त कर सकते हैं। अपनी इच्छासे मरण की सिद्धि प्राप्त करनेवाले कई योगी इस समयमें भी हैं। यह अंतिम सिद्धि अलग की जाय, तो इसमें कोई संदेह ही नहीं है कि, साधारण आरोग्य के लिये ये " खिंचाव के व्यायाम " अर्थात् योगासन बडे लाभदायक होते हैं। यद्यपि इन खिंचावके व्यायामोंसे उतना बल नहीं आता, जितना कि पहिलवानी व्यायामोंसे आसकता है, तथापि आरोग्यके साथ बल बढता है, इसलिये निःसंदेह इन व्यायामोंसे लाभ होता है।

दूसरी बात यह है कि, पहिलवानी व्यायामोंसे हृदयपर बहुत ही दबाव पडता है और इस दबाव के कारण पहिलवानोंका हृदय प्रायः कमजोर होता है। उनकी अपमृत्युका यही एक मुख्य कारण है। इस प्रकारका हृदयपर दबाव आसनोंके व्यायामोंसे नहीं होता है, इसलिये आसनोंसे कोई नुकसान नहीं हो सकता।

हम अपनी लेखनकी सुविधाके लिये पहिलवानी व्यायामोंको " दबावका व्यायाम " और योगके आसनोंको " खिंचावका व्यायाम " कहेंगे। दबावके व्यायाममें एक स्नायुकी अनेक वार गति करनेसे वहां अधिक रक्त आता है और रक्तका दबाव भी वहां बढ जाता है। यह व्यायाम जिन स्नायुओंके साथ होता है, उन स्नायुओंमें, प्रमाणकी

अपेक्षा अधिक रक्तका संचय होनेसे, वहांकी नसनाडीमें रक्तका दबाव बढ जाता है, और वहांकी सूक्ष्म नसनाडियां तथा वहांके सूक्ष्म मज्जातंतु फट जाते हैं, और इनके गोले बन जाते हैं। पहिलवानोंके स्नायु पथ्थर जैसे सख्त लगते हैं, इसका कारण यही है। यद्यपि इनमें बल बढता है, तथापि यह आरोग्यकी अवस्था नहीं है। स्नायुमें रक्त प्रवाह अधिक करनेसे इसप्रकार लाभके साथ नुकसान भी है। जिस प्रकार किसी बोतलमें पानी डालनेसे वह साफ होती है, अथवा नालीमें कुछ अटका हो, तो पानी डालनेसे साफ हो जाता है, उसी प्रकार स्नायुकी शुद्धता उसमें रक्तप्रवाह अधिक करनेसे भी होना संभव है। परंतु पहिलवानी व्यायामोंमें रक्तका प्रवाह नहीं होता, परंतु रक्तका संचय होता है, यही दोषकारक है। यदि जोरका रक्तप्रवाह शुरू होगा, तो निःसंदेह आरोग्य होगा, परंतु इस पहिलवानी व्यायाममें रक्तका प्रवाह नहीं होता, परंतु स्नायुमें आया हुआ रक्त वहांही बहुतसा ठहर जाता है। यही कारण है कि, जिससे स्नायुओंमें घनता आजाती है।

इस दोषको दूर करनेके लिये योगियोंने आसन अर्थात् “ खिंचाव के व्यायाम ” सिद्ध किये हैं। इसमें प्रायः स्नायु खींचे जाते हैं। रबर की नालीके समान छोटी मोटी नसनाडियां शरीरभर हैं। स्नायुओंमें भी इनके द्वारा ही रक्तप्रवाह पहुंचता है। जिसप्रकार रबरकी नाली खींचनेसे चपटी होती है, और चपटी होनेके कारण उसमें से जलप्रवाह न्यून हो

जाता है; उसीप्रकार स्नायु खींचनेसे स्नायुमें सर्वत्र रक्त न्यून हो जाता है, जितनी देर यह खिंचाव रहता है, उतनी देर स्नायुमें रक्त कम होता है। फिर किंचित् समयके पश्चात् पूर्ववत् स्नायु ढीला करनेसे वहां जोरसे रक्तका प्रवाह शुरू हो जाता है। जहां रक्तका प्रवाह जोरसे शुरू होता है वहांके मल धोये जाते हैं, और जोरका रक्तप्रवाह ही सब शरीरके आरोग्यका हेतु है, इसमें कोई संदेह ही नहीं है। इस प्रकार संपूर्ण आसन करनेसे सब शरीरमें शुद्ध रक्तका प्रवाह जोरसे शुरू होता है और इस कारण शरीरका आरोग्य सिद्ध होता है। पहिलवानी व्यायामोंमें स्थान स्थानमें रक्तका संचय होता है, और योगासनोंके व्यायामोंसे स्थान स्थानमें रक्तका प्रवाह शुरू होता है, दो व्यायामपद्धतियोंमें यही मुख्य भेद है, और इसी कारण परिणाममें भी भेद होता है। यदि आसनोंका यह एक तत्त्व पाठकोंके ध्यानमें आजायगा, तो वे इस तत्वका विचार करके खिंचावके कई और व्यायाम नवीन रीतिसे सिद्ध कर सकते हैं। पाठकोंको उचित है कि, प्रत्येक आसन करनेके समय खिंचाव का स्थान कौनसे स्नायु अथवा स्नायुओंपर है, इसका विचार करके यदि आसन करेंगे, तो उनको उस स्नायुकी निर्दोषताका पता उसी समय अवश्य लग जायगा। और अन्यान्य स्नायुओंकी निर्दोषता करनेके अधिकाधिक आसन नवीन रीतिसे सिद्ध करनेका उत्साह उत्पन्न होगा। योगग्रंथोंमें जितने आसन लिखे हैं, उतनेही

केवल हैं, ऐसा आग्रह धारण करना अयोग्य है, क्यों कि, वास्तविक रीतिसे आसन अनंत हैं। ८४ लक्ष योनियां हैं, इसलिये योगग्रंथोंमें कहा है कि ८४ लक्ष आसन हैं, परंतु उनमेंसे केवल ८४ ही आसन उपयोगमें लाये हैं। जो अन्य आसन हैं, उनको ढूंढकर निकालनेकी रीति ऊपर दी है, पाठक विचार करते रहेंगे, तो अधिकाधिक आसन भी हो सकते हैं। और उनका उपयोग करके अधिकाधिक शरीरकी निर्दोषता संपादन की जासकती है। इस लिये आसनोंका तत्व जाननेके पश्चात् अधिक विचार करना चाहिये।

(१) आसनोंमें कई आसन खडा होकर करनेके हैं, (२) कई आसन बैठकर करनेके, (३) कई आसन सोकर करनेके और (४) कई आसन सिर नीचे और पांव ऊपर करके करनेके हैं। कई आसन ऐसे हैं कि जो ऊपरके सब विभागोंमें किये जा सकते हैं, परंतु कई ऐसे हैं कि, जो एक एक विभागमें ही होना संभव है। उक्त प्रत्येक विभागका फल प्रायः समान होता है, परंतु कुछ न्यूनाधिकता भी कारणविशेषसे होना संभव है। सिर नीचे और पांव ऊपर करनेके चतुर्थ विभागमें शीर्षासन, कपाली आसन, कपालासन, मस्तकासन, विपरीत करणी, विपरीतासन, सर्वांगासन, वृक्षासन, अर्धवृक्षासन, हस्तवृक्षासन, मुक्तहस्तवृक्षासन, उर्ध्वपद्मासन इत्यादि आसन आते हैं। यद्यपि ये आसन कुछ अंशमें भिन्न हैं, तथापि इनका प्रकरण एकही है। सिर नीचे

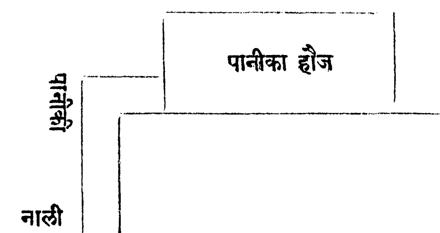
और पांव ऊपर यह जो विपरीत खडा होनेका भाव है, वह इन सबमें समान है; इसलिये इन सबका परिणाम भी शरीर-पर बहुत अंशमें समानही होता है। बहुत अंशमें ऐसा कहनेका तात्पर्य इतनाही है कि, प्रत्येक भिन्न भिन्न आसनमें जो न्यूनाधिकता होती है, उस कारण फलमें भी न्यूनाधिक होना संभवनीय है; तथापि इन सबमें जो मुख्य बातकी समानता है; जिस कारण उनकी एक वर्गमें गणना हो सकती है, उस हेतुके कारण उस क्षेत्रमें फलकी भी समानता है। इसी प्रकार पूर्वोक्त अन्यान्य वर्गोंके आसनोंके विषयमें विचार करके जानना चाहिये। पूर्वोक्त प्रत्येक वर्गमें और उपवर्ग भी हैं। यदि पाठक इन आसनोंका इस दृष्टिसे विचार करेंगे, तो उनको इस बातका पता लग जायगा और वे अपनी अपनी विचारकी दृष्टिसे अलग अलग वर्गभी बना सकते हैं, और किसी आसन का किस आसनसे साधर्म्य और किस दृष्टिसे वैधर्म्य है, इसका भी विचार कर सकते हैं। इस प्रकारका बहुत विचार करनेकी आवश्यकता है, इसलिये केवल सूचना-मात्र यहां लिखा है, आशा है कि, पाठक प्रथमतः स्वयं अभ्यास करके पश्चात् इस दृष्टिसे अधिक सोचनेका पुरुषार्थ करेंगे।

जो आसन सोकर अर्थात् बिस्तरेपर लेटकर करनेके होते हैं, वे उन लोगोंको करने योग्य हैं कि, जो हृदयके कमजोर हैं। आज कल दिलकी बीमारी जनतामें बढ रही है, इसका

कारण स्पष्ट है कि तमाखू, भंग, अफीम, चा, काफी, शराब आदि दुर्व्यसन प्रतिदिन बढ रहे हैं। विशेषतः तमाखूसे खून बिगडता है, और संतानोंमें दिलकी और खूनकी कमजोरी जन्मसे ही घर करके बैठती है। जनतामें मूर्खता अधिक होनेके कारण अपना और बालबच्चोंका संहार होता है, यह देखते हुए भी लोग दुर्व्यसन करते जाते हैं, और इसकारण दिलकी कमजोरी बढती ही जाती है। इसलिये लेटे हुए करनेके आसन इन लोगोंके लिये बहुत लाभदायक हैं। क्यों कि ये लेटे हुए करनेके होते हैं, इसलिये हृदयपर बहुत बोझ नहीं पडता, और हृदयको आराम पहुंचता है। जितना आराम हृदयको पहुंचेगा, उतना आरोग्य की दृष्टिसे इस प्रकारके दिलके कमजोरों को अच्छाही है। इन लोगोंके लिये थोडे प्रमाणमें चतुर्थ वर्गके अर्थात् सिर नीचे और पांव ऊपर करनेके व्यायामभी बडे लाभदायक हैं। अन्य वर्गके व्यायामभी अल्पप्रमाणमें करनेसे कोई हानि नहीं होती, परंतु यहां अधिक लाभ पहुंचानेवाले व्यायामोंके विषयमें ही-विशेष कहनेका उद्देश्य है। कोई भी आसन किया जाय, उससे श्वासोंकी संख्या अधिक नहीं होती। पहिलवानोंके सब व्यायामोंसे श्वासोंकी संख्या अधिक होती है। जिन व्यायामोंसे श्वाससंख्या बढ जाती है, वे व्यायाम दिलके कमजोर मनुष्योंको निःसंदेह हानिकारक हैं, और जिनसे श्वाससंख्या नहीं बढती वे दिलकी बिमारीवालोंको करनेमें उतना भय नहीं है।

इससे सिद्ध है कि प्रायः सभी आसन इनके लिये लाभकारी हैं, परंतु लेटकर करनेवाले आसन तो बहुतही लाभदायक हैं।

शहरों और नगरोंमें जहां नलकेका पानी होता है, वहांके लोगोंको पता होता है कि, नगरके उच्च भागमें एक बडा पानीका हौज होता है, और उसमेंसे छोटी मोटी नालियां नगरभर फैलायीं होतीं हैं। ये नालियां सबकी सब



सीधी नहीं होतीं, परंतु एक दूसरे को जोडनेके स्थानमें तथा जहां मोड आता है वहां कोने होते हैं। स्थान स्थानपर मोड और कोने होते हैं और वहां पानीमेंसे कुच जंग, मिट्टी तथा अन्य मल संचित होते हैं। दस पांच वर्षोंके पश्चात् पानी कम आने लगता है। और ऐसा होनेपर लोग व्यवस्थापकोंको लिखते हैं, और वे आकर नालीको साफ करते हैं, और फिर पानी पूर्ववत् आने लगता है, इससे लोगोंको सुख होता है। यही अवस्था शरीरमें है। शरीरमें हृदयमें खून होता है और वह नस नाडियों द्वारा शरीरभर फैलाया होता है, जिससे आरोग्य होता है। यद्यपि नस नाडियोंकी व्यवस्था बडी अच्छी होती है, तथापि अवयवोंके संधियों और जोडोंमें तथा नसनाडीयोंके संधियों और जोडोंमें किसी कारणवशात् थोडाथोडा मल संचित होने लगता

है । जब तक जवानीका रक्त वेगसे चलता रहता है, तबतक यह दोष थोडा रहता है, और इतना अपायकारक नहीं होता । परंतु जिस समय शरीर कृश होने लगता है, अथवा वृद्धावस्था आती है, उस समय उक्त संधिस्थानोंमें मलसंचय बढने लगता है । शारीरिक निर्बलताके अनुसार यह दोष न्यूनाधिक होता है, और जिस समय निर्बलता बढ जाती है, उस समय यह दोष भी बढ जाते हैं । और दोष बढने के कारण बीमारियां बढती हैं, इसका परिणाम अकालमृत्युमें होता है । यह सब दोष दूर करनेके लिये स्नायुओंके खिंचाव के व्यायाम अत्यंत उत्तम हैं । प्रायः हरएक आसनमें स्नायु खींचे जाते हैं । जिस समय स्नायु खींचे जाते हैं उस समय वहांकी नस नाडीका खिंचाव होनेसे उस स्थानका सब रक्त चला जाता है । और जिस समय खिंचाव बंद होता है, और पूर्ववत् स्नायुकी स्थिति हो जाती है, उस समय फिर नया खून उसमें जोरसे आता है । वेगसे रक्त आनेके कारण वहां के दोष धोये जाते हैं, इस प्रकार वारंवार आसन करनेसे वारंवार दोष धोये जाते हैं, और इस कारण शरीर निर्दोष होता जाता है । यही कारण है कि, जिससे आसनोंके अभ्यासके हेतुसे आरोग्य प्राप्त हो जाता है । रक्तमें जीवन होता है और वह जीवनरूपी रक्त आसनों द्वारा ही सब शरीरभरमें फैलाया जाता है । यह आसनोंका तत्व विचारकी दृष्टिसे देखिये और जिस स्थानमें बीमारीका उद्भव होगा,

उस स्थानमें वहां के स्नायुसंचालनके अनुकूल खिंचाव करके आरोग्य प्राप्त कीजिये। आसनोंका तत्त्व जाननेसे इस प्रकार अपनी आवश्यकतानुसार नवीन आसन भी बनाये जा सकते हैं। इस लिये स्थान स्थानके स्नायुओंके आकुंचन और प्रसरणका धर्म जानकर उस धर्मके अनुकूल खिंचावके आसन बनाये जा सकते हैं।

इस पुस्तकमें प्रत्येक आसन का चित्र दिया है, जिस पशुपक्षीके साथ उसका संबंध है, उसका भी चित्र साथ साथ दिया है। विवरणमें आसनका तत्व, उससे होनेवाले परिणाम और किन रोगोंपर इसका उपयोग होना संभव है, उसका दिग्दर्शन किया है। यदि पाठक इतने साधनोंका अच्छा मनन करेंगे, और स्वयं करके अनुभव लेंगे, तो उनको आसनोंका तत्त्व समझमें आ सकता है। आशा है कि, पाठक इस रीतिसे मनन करेंगे।

इन आसनोंमें कई आसन हैं कि, जो बलवर्धक हैं, कई ऐसे हैं कि, जो स्नायुकी तथा नस नाडीकी निर्दोषता सिद्ध कर सकते हैं, कई ऐसे हैं कि जो उक्त दोनों बातें कर सकते हैं, कई आसन केवल उत्साहवर्धक हैं, और कई ऐसे हैं, कि जो भविष्यमें आनेवाले रोगोंका प्रतिबंध कर सकते हैं। यह सब वर्णन स्थानस्थानके आसनोंके वर्णनमें अंशरूपसे दिया है। पाठकोंको उचित है कि, वे इस अनुभवके साथ अपना अनुभव मिलाकर देखें और जो न्यूनाधिक अनुभव

होगा, वह लिखकर रखें तथा समय समय पर हमारे पास लिख कर भेजें। ऐसा करनेसे यह एक उत्तम आरोग्यका शास्त्र बन जायगा।

प्रायः सब आसन स्त्रीपुरुषोंको करने योग्य ही होते हैं। परंतु कई आसन खास कर पुरुषोंके लिये, कई विशेषकर स्त्रियोंके लिये और कई दोनों के लिये सम होते हैं। आगे जहां प्रत्येक आसन का वर्णन दिया है, वहां इस विशेषताको दर्शाया है। जहां कुछ भी नहीं लिखा है, वहां समझना उचित है कि, वह आसन दोनों के लिये समान है। जिन आसनोंमें पांवकी एंडी गुदा और अंड कोशके बीचमें लगानी होती है, वे आसन स्त्रियोंको करने योग्य नहीं हैं, और यदि करने हों तो पांव की एंडी का संघट्टन उस स्थानपर करना नहीं चाहिये। यही विशेषतया भेद है। यदि इतना भेद ध्यानमें रखा जाय, तो कौनसा आसन किस रीतिसे करनेपर स्त्रियोंके लिये उपयोगी होगा, इस विषयका ज्ञान हो सकता है। स्त्रियोंको इन आसनोंका अभ्यास करवा कर विशेष ध्यानसे यह अनुभव देखा है कि, जो स्त्रियां गर्भधारणके पूर्व तथा गर्भधारणा होनेपर भी नियमपूर्वक आसनोंका व्यायाम करती हैं, उनको प्रसूतिके कष्ट प्रायः नहीं होते। और ऐसी प्रसूति होती है कि, जैसा शौच हो आना सुगम है। इसलिये स्थान-स्थानके स्त्रीपुरुषों को इस बातका अनुभव लेना उचित है, और अपने अपने अनुभव लेखबद्ध करना भी अत्यावश्यक

है । इसीसे यह एक उत्तम शास्त्र बन सकता है । हमने अनुभवपूर्वक यह भी देखा है कि, जिन स्त्रियों की पहिले कष्टदायक प्रसूति होती थी, आसनोंका अभ्यास ब्रह्मचर्यपूर्वक साल दो साल करनेसे उनकी ही प्रसूति तीसरी बारके पश्चात् अत्यंत सुगम हुई । इस लिये योजनापूर्वक इस दृष्टिसे पाठकोंको अनुभव लेना उचित है । तथा हमारे अनुभवमें यह भी एक बात आगई कि, गर्भधारणाके पश्चात् भी जहां स्त्रीपुरुष संबंधका अतिरेक हुआ है, वहां वैसा लाभ आसनोंके अभ्याससे भी नहीं हुआ । परंतु जो स्त्री पुरुष व्रतस्थ रहे, उनको निःसंदेह लाभ हुआ । इस लिये पाठक इससे भी लाभ उठा सकते हैं । गर्भधारण होनेके पश्चात् जो स्त्री पुरुष व्रतस्थ रहते हैं और विशेषतः जो स्त्री खानपानका पथ्य रखती है, यदि वह स्त्री नियमपूर्वक आसनोंका व्यायाम करती जायगी, तो उनकी प्रसूति निःसंदेह कष्टहीन होगी, और बालक भी सर्वांग पूर्ण होगा । इस लिये स्त्री पुरुषोंको इससे लाभ उठाना आवश्यक है, क्यों कि इस देशमें जितने बालक सुदृढांग होंगे उतने देशके हितकी दृष्टिसे अच्छेही हैं ।

जो आसन केवल ध्यानधारणाके लिये ही होते हैं, उनसे भिन्न अन्य सब आसन आरोग्यके साथ संबंध रखते हैं । तथा ध्यान धारणाके आसनों में भी पद्मासन, सिद्धासन आदिकोंका संबंध यदि साक्षात् नहीं, तथाति परंपरासे आरोग्यके साथ पहुंचता है । इसलिये यह आसन उपयोगी नहीं

और फलाना उपयोगी है ऐसा भेद करना उचित नहीं है। शरीरके भेदके अनुकूल हरएक आसन लाभदायकही है। इसलिये आसन करनेके पूर्व अपनेको किस बातके लिये आसन करने हैं, इसका निश्चय करना और तत्पश्चात् उस बातके साधक जो जो आसन होंगे उनको करना उचित है। परंतु जिनको विशेष बातके लिये आसन करनेकी आवश्यकता नहीं है, वे यथाक्रम अथवा यथारुचि सभी आसन करके लाभ उठा सकते हैं।

यह देखा है कि, सुदृढांग बालकको छे वर्षोंकी उमर में तथा साधारण बालकोंको आठ वर्षकी आयुमें आसनोंका अभ्यास प्रारंभ करनेसे अच्छा लाभ होता है। विशेष दृढांग बालकोंको इससे पूर्वभी एक वर्ष प्रारंभ किया जा सकता है। परंतु सर्व साधारणतः आठ वर्षकी आयुमें ये आसन करने उत्तम हैं। प्रारंभके दो चार वर्षोंमें सुगम आसन करवाने चाहिये और तत्पश्चात् कठिन आसन करने योग्य हैं। तथा जिन आसनोंमें पांवकी एंडी गुदा और अंडकोशके बीचमें दबाकर लगानी होती है, वे आसन अत्यावश्यक होनेके विना १५।१६ वर्षकी आयुके पूर्व न करने अच्छे हैं। किंवा करने हों तो उक्त बातके विना करने चाहिये। परंतु यदि किसी कारण युवकमें वीर्यदोष उत्पन्न हुआ हो, अथवा होनेकी संभावना हो, तो उस अवस्थामें योग्य उपाय करनेके लिये ये वीर्यरक्षक आसन करने ही चाहिये। जो बालब्रह्मचारी आजन्म ब्रह्म-

चर्य रखना चाहते हैं, वे इन आसनोंसे अपना ब्रह्मचर्य अखंडित रख सकते हैं।

आसनों के साथ थोडा थोडा प्राणायाम तथा अपनी शक्तिके अनुसार कुंभक, अल्प प्रमाणमें प्रथम प्रारंभ करके पश्चात् शनैः शनैः बढा सकते हैं। परंतु जो दिलके कमजोर होंगे, वे प्राणायामके विना ही आसन कर सकते हैं, अथवा उनको प्राणायामके विनाही करना योग्य है। क्यों कि दिलके कमजोर मनुष्य यदि अधिक कुंभक करेंगे, तो उससे उनका दिल अधिक कमजोर होना संभव है। इस लिये ऐसे लोक केवल आसनोंसे ही अपना आरोग्य बढा सकते हैं। जो लोग रोगी अवस्थामें आसन करना चाहते हैं, वेभी कुंभकके साथ न करें, अभ्यास होनेपर कुंभक किया जा सकता है। तथा वृद्ध पुरुष भी कुंभकके साथ न करें। अथवा यों कहना उचित होगा कि, ये लोग प्रारंभमें प्राणायामपर बल न दें। आसनोंसे आरोग्य प्राप्त होनेपर फेफडोंमें तथा अन्यशरीरमें बल बढेगा, तत्पश्चात् प्राणायामका विचार करना योग्य है।

रोगी अवस्थामें लेटकर करनेके ही आसन प्रारंभमें करने योग्य हैं। पश्चात् जैसा जैसा बल बढेगा, वैसे अन्य आसन किये जा सकते हैं। अतिवृद्धों के लिये भी लेटकर करनेके ही आसन योग्य हैं। जो ८०।८५ वर्षसे अधिक आयुवाले हैं, वे अतिवृद्ध शब्दसे यहां लक्षित हैं। इससे पूर्व नीरोगी

वृद्ध सब प्रकारके आसन करके लाभ उठा सकते हैं । ७५ वर्षतक की आयुवाले वृद्ध पुरुष जो गलित शरीर हो गये थे, वे भी दो वर्ष नियमपूर्वक आसनोंका अभ्यास करके तथा खानपानका पथ्य पालन करके अच्छे फुर्तिले बनगये हैं, इस लिये इससे थोडी आयुवाले इन आसनोंके व्यायामसे योग्य लाभ उठा सकते हैं, इसमें कोई संदेह ही नहीं है।

हरएक मनुष्यकी शरीरकी अवस्था विभिन्न होती है। कई लोग २५ वे वर्ष भी अत्यंत अशक्त होते हैं, और कई ७० वे वर्ष भी बलिष्ठ होते हैं । इसलिये इतनी भिन्नता होनेके कारण कोई सर्वसाधारण नियम नहीं लिखा जा सकता। प्रत्येक मनुष्यको अपनी अवस्था, शक्ति और परिस्थितिके अनुसार योग्य रीति विचार करके निश्चित करनी चाहिये और उस प्रकार अनुष्ठान करके लाभ उठाना चाहिये। यह सूचना यहां करनेका कारण इतना ही है कि, कई लोग जोशसे अपनी शक्तिसे बहुत ही अधिक कार्य करते हैं, और नुकसान होने पर अपने अविचारको दोष नहीं देते, प्रत्युत योगसाधन को ही दोष देते हैं। वास्तवमें देखा जाय तो यह योग-साधन का प्रत्येक व्यायाम दस पांच हजार वर्षोंसे चला आया है, और हरएक समय योग्य विचारके साथ करनेपर इससे लाभही हुआ है। इसलिये यदि दोष उत्पन्न हुआ, तो वह दोष योगसाधन का नहीं है, परंतु वह कर्ताके अविचारका ही दोष समझना चाहिये । आशा है कि, इस सूचना की ओर पाठक विशष ध्यान देंगे।

आसनोंका अभ्यास स्वयं करके और सेंकडों विभिन्न परिस्थितिके मनुष्योंपर इसका परिणाम देखकर हमारा पूर्ण निश्चय हुआ है कि, यह ऋषिमुनि और योगियोंकी आसन-पद्धति मानवी आरोग्यके लिये अत्यंत उत्तम है। इससे योजक मनुष्य अपना लाभ कर सकता है। यह आसनपद्धति अत्यंत लाभदायक होनेसे इसका सर्वत्र प्रचार होना अत्यंत आवश्यक है। हरएक मनुष्य जो ये आसन करेगा और अनुभव लेगा, वह इसका प्रचारक स्वयंही बन सकता है। परंतु व्यवस्थासे इसका प्रचार करनेके लिये और सहस्रोंतक इसका लाभ पहुंचानेके लिये पाठशालाओंमें इसका अभ्यास आवश्यक करना योग्य है। ऐसा करनेसे ही हरएक बालक और हरएक नवयुवकको इसका लाभ पहुंच सकता है। और बालकपनमें जो बात अनुभव सिद्ध हो जाती है, वह स्वभावतः उसकी आयुभर स्थिर रूपसे रह सकती है। इस-लिये जो पाठक इन आसनोंकी व्यायाम पद्धति का स्वय अनुभव लेंगे, उनको उचित है कि वे अपने नगरमें इसके प्रचारक बनें और अपने नगरकी पाठशालामें इसको शुरू करनेका यत्न करें। प्राचीन कालमें सब गुरुकुलोंमें यही आसनपद्धति आवश्यक रीतिसे पढाई जाती थी, और इस कारण ही वे लोग उत्साही, तेजस्वी, दीर्घायु और दिर्घोद्योगी होते थे। इस समय भी हमको इन गुणों से युक्त होना चाहिये और अपने भावी संतानोंको उक्त गुणों से मंडित

करना चाहिये। इसलिये आशा है कि पाठक इस दृष्टिसे अपना कर्तव्य करेंगे।

विशेष ध्यानसे देखिये।

"आसनोंका तत्त्व" अब आपके ध्यानमें आचुका है। और प्रत्येक आसन का वर्णन भी इस पुस्तकमें आगे पढेंगे। प्रत्येक आसन वास्तवमें शनैः शनैः और मंद गतिसे करने होते हैं, क्योंकि शरीरकी स्थिरता और नीरोगता पूर्वक शरीरको सुख प्राप्त करना आसनोंका उद्देश्य है। परंतु यह अनेकवार देखा है कि मंदगतिके व्यायामोंसे अथवा मंदगतिके आसनोंसे शरीरपर वह इष्ट कार्य कभी कभी नहीं होता, जो कि वास्तवमें होना चाहिये। इसके अनेक कारण हैं, उन सबका उल्लेख यहां करनेकी आवश्यकता नहीं है। अनेक प्रकारके आसन करनेपर भी शरीरपर इष्ट परिणाम नहीं होता, ऐसा अनुभव आनेपर उसका उपाय निम्न प्रकार करना चाहिये। उपाय यह है किः—

(१) मंदगतिके आसन बंद करना तथा सब मंदवेगके अन्य व्यायामभी बंद करने, (२) और येही आसन जो इस पुस्तकमें लिखे हैं, वैसे ही अति तीव्र वेगसे करनेका अभ्यास करना, (३) अर्थात् प्रत्येक आसन एक, दो, तीन, या अधिकसे अधिक चार निमेषोंमेंही करना, फिर आसन खोलकर फिर करना, इस प्रकार एक मिनिटमें दस पंद्रह बार वेगसे एकही आसन करना, (४) प्रत्येक आसन इस

ढंगसे अतिवेगसे कमसे कम दस वार करनेके पश्चात् इसी रीतिसे तीव्र वेगसे दूसरा आसन करना, इस प्रकार दस पंद्रह मिनिट विविध आसन करनेसे बहुतही आश्चर्यकारक इष्ट परिणाम होता है। (५) प्रत्येक आसन करनेके समय वेगसे श्वास लेना और वेगसे छोडना, परंतु प्रारंभमें वेगसे श्वासोछ्वास न भी हुआ, तोभी कोई पर्वाह नहीं, विना प्रयास वेगसे श्वास और उच्छ्वास एक आसनमें एकबारही करना चाहिये इससे बडा लाभ होता है। इस प्रकार तीव्र वेगसे श्वासोच्छ्वासपूर्वक वेगसे वारंवार आसन करनेसे शरीरके संपूर्ण स्नायुओंका योग्य संचालन होता है, इस कारण इस रीतिसे विलक्षण आरोग्य प्राप्त हो सकता है। (६) साधारण रीतिसे आसनोंका व्यायाम करनेपर जिस समय योग्य परिणाम नहीं होता, उस समय इस प्रकार करनेसे सत्वर आरोग्य प्राप्त होता है। (७) अथवा प्रतिदिन दस पंद्रह मिनिट इस रीतिसे स्नायु संचालनके लिये वेगसे आसन करके पश्चात् स्नायुस्थिरताके लिये साधारण रीतिसे आसन करनेसे भी बहुत उत्तम आरोग्य प्राप्त हो सकता है।

पाठक अपनी आवश्यकतानुसार अभ्यास करके लाभ उठावें।

अंतमें निवेदन इतनाही है कि इस समयतक जितने पुस्तक आसन विषयपर लिखे हैं उनसे भिन्न दृष्टिसे यह पुस्तक लिखी गई है। जो बातें इसमें लिखी हैं, सेंकडों मनुष्योंपर अनुभव लेकर लिखी हैं। इसलिये जो नियमपूर्वक अभ्यास

करेंगे उनकोभी यही अनुभव आसकता है। तथापि इस विषयका और भी अधिक विचार होना चाहिये, और अधिक अनुभव भी लेना चाहिये। इसलिये जो पाठक इस रीतिसे व्यायाम करेंगे उनको उचित है कि वे अपना अनुभव, जैसा आवेगा वैसाही, हमारे पास लिख भेजनेकी कृपा करें, इससे शास्त्रीय संशोधनमें बडा लाभ हो सकता है। आशा है कि पाठक इस रीतिसे अवश्य सहायता करेंगे।

चतुर्थवार का मुद्रण।

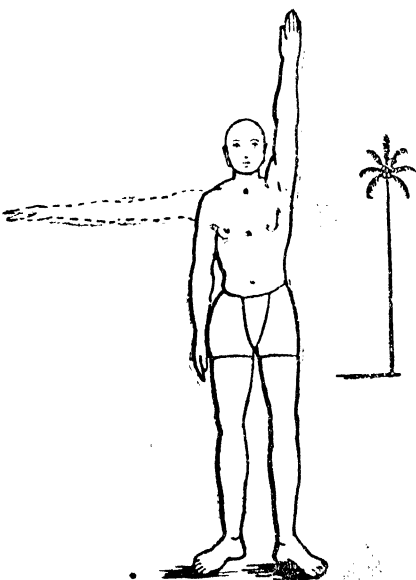
तृतीय वार छपी हुई आसनों की सब पुस्तकें अतिशीघ्र समाप्त होनेके कारण यह चतुर्थवार मुद्रण करना आवश्यक हुआ है। पहिले की अपेक्षा इसमें अनेक आसन, अनेक चित्र तथा अनुभव के अनेक लेख अधिक दिये हैं। पहिलेकी अपेक्षा पुस्तक बहुत ही बढी गयी है, तथापि प्रचार के उद्देश्यसे मूल्य उतना ही रखा है।

आसनों से जिनको प्रत्यक्ष लाभ हुआ ऐसे सहस्रों मनुष्योंके अनुभवके पत्र आये हैं, उनमेंसे थोडेसे इस पुस्तकमें दिये हैं। इससे ही पाठकोंको पता लगसकता है कि इस आसन-पद्धतिसे आरोग्य प्राप्त होनेमें कितनी सहायता हो सकती है।

आशा है कि पूर्वकी अपेक्षा यह पुस्तक पाठकों को अधिक लाभदायक सिद्ध होगी।

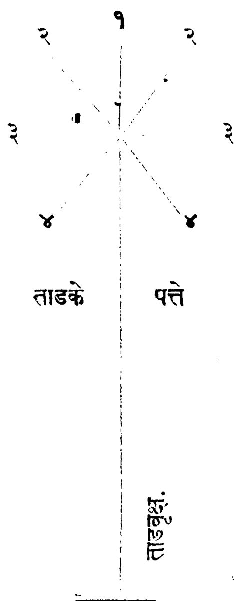
औंध (जि. सातारा) } श्रीपाद दामोदर सातवळेकर,
१ चैत्र संवत् १९८७ } स्वाध्याय मंडल.

(१) ताडासन।



पाठकोंने ताडका वृक्ष देखाही होगा। नारियल, खजूर, सेंधी, ताड, ये वृक्ष करीब एक प्रकारके होते हैं। ये वृक्ष सीधे खडे होते हैं, और उनके पत्ते सबसे ऊपर होते हैं। वृक्षकें धडके स्थानमें अपना शरीर खडा रखना होता है, इसलिये ये वृक्ष जैसे सीधे खडे होते हैं, वैसा सीधा खडा होना इस आसनके लिये आवश्यक है। दीवारके साथ पीठ लगाकर सीधा खडा रह जाइये। ऐसा खडा रहनेसे सिरका पिछला भाग, पीठ, चूतर, पांवकी एडी इनका स्पर्श दिवारके साथ होगा। दिवारका सहारा छोडकर यदि आप कमरेके बीचमें खडे रहेंगे, तो उक्त अवयव समरेखामें आने चाहिये; गला, कमर आदि भी सीधे हों। तात्पर्य सैनिक विभागमें

सैनिक जैसे सीधे खडे हो जाते हैं, वैसे आप प्रथम सीधे खडे हो जाइये । इस आसनके सिवायभी साधारण चलनेके समय आपको ऐसाही ताडवृक्षके समान सीधा रहकर चलना चाहिये । पृष्ठवंशको सीधा रखना योगसाधन के लिये अत्यंत आवश्यक है । आरोग्यके लिये भी पृष्ठवंशको सीधा रखनेकी बडीभारी आवश्यकता है ।



उक्त प्रकार ठीक खडा रहनेके पश्चात् अपने हाथोंको ताडपत्तों के स्थानपर समझकर एक एक हाथको एक एक स्थानपर धरनेका यत्न कीजिये । अपना एक हाथ ऊपर सीधा कीजिये, हाथ ऊपर बिलकुल सीधा कीजिये, जहांतक हो सके वहांतक उसको ऊपर खींचनेका यत्न कीजिये; जैसा कि आपके मनमें कमरेके छतको हाथ लगाना है । ऐसा खींचनेसे गुदा और शिस्नके पासकी नस नाडियाँभी ऊपर खींची जातीं हैं, तथा जो हाथ ऊपर खींचा जाता है, उस तर्फकी पेटकी नसनाडीयां ऊपर खींची जातीं हैं । इस आसनके करनेके

समय इस आवश्यक बातको मनमें रखिये कि, गुदातककी नस-नाडी पर भी ऊपरकी ओरका खिंचाव आना चाहिये तब आसनका परिणाम ठीक प्रकार होता है। जब अपने हाथको सीधा ऊपर "१" के स्थानपर रखकर ऊपर खीचेंगे तब अधिक खिंचाव होगा; तत्पश्चात् " २ " के स्थानपर तथा क्रमशः " ३ और ४ "के स्थानपर रखकर बाहिर की ओर खींच लीजिये। " ३ और ४ " के समय उतना खिंचाव नहीं आवेगा, जितना कि " १ और २ " के समय आसकता है। इसी प्रकार दूसरे हाथका भी कीजिये। तत्पश्चात् दोनों हाथोंका एक समय कीजिये। इसके अनंतर हाथको अपने सामने तथा अपने पीछे, जितना होसके उतना करके भी, खींचना चाहिये। खींचना मनसेही है न कि दूसरेकी सहायतासे। दूसरेकी सहायतासे करेंगे, तो वह परिणाम नहीं होता है, जैसा कि अपने मनसे करनेमें होता है; और दूसरी बात इसमें यह है कि, अपने मनका स्वामित्व अपने शरीरके प्रत्येक नसनाडीपर स्थापित करना है, इसलिये मनसेही और अपनीही शक्तिसे खींचनेका यत्न होना चाहिये। इस आसनमें तो कोई कठिनता नहीं है। एक दो बारके अभ्यासके ध्यान पूर्वक देखनेपर स्वयं पता लगता है कि किस प्रकार खिंचाव करना चाहिये, और किस नसनाडी और स्नायुतक खिंचाव पहुंचता है।

किसी एक अवस्थामें क्षणमात्र रहनेसे कोई विशेष लाभ नहीं होगा, परंतु कमसे कम दो तीन मिनिट, अथवा इससेभी कम चाहिये तो एक मिनिट तक एक अवस्थामें स्थिर रहना चाहिये, तब कुछ परिणाम होगा। जिस स्नायुपर खिंचाव आता है, वहांके सब मल और दोष दूर होते हैं, और वहां शुद्ध रक्तका संचार होने लगता है। पेटपरभी इस आसनका परिणाम अच्छा लाभदायक होता है।

इस आसनके करनेके समय श्वास और उच्छ्वास अत्यंत शांत, गंभीर, गहरा और दीर्घ लेना चाहिये तथा अपनी सब मानसिक शक्ति हाथमें ही रखनेका यत्न करना चाहिये। तथा जहां खिंचाव होता है, वहांके पूर्ण आरोग्यका चिंतन करना उचित है। इससे पेट और पीठके सब स्नायुओंको लाभ पहुंचता है।

यह आसन पांव पास पास रखकर, अथवा पावोंमें अंतर रखकर, खडा होकर किया जासकता है। यह आसन सब शरीरको सम रेषामें रखकर ही करना चाहिये, विशेषतः पृष्ठवंश—मेरुदंड—को सम रेखामें सीधा रखना अत्यंत आवश्यक है। इसमें एक हाथसे तथा दोनों हाथोंसे करनेका विधि ऊपर दिया ही है। जब उक्त प्रकार ठीक होने लगेगा, तब कमरके निचले भागको स्थिर ही रखते हुए, कमरके ऊपरले भागको ही जहां तक हो सके वहांतक दाईं और बाईं ओर घुमाना चाहिये। इस घुमानेके समय आसनके हाथका

स्थान वैसाही रखना होता है। सब का सब ऊपरला भाग जैसा का वैसा घुमाना है। ऐसा घुमानेसे पेटपर अच्छा परिणाम होता है। हाथ ऊपर करनेसे पेटके स्नायुओंमें ऊपर ला खिंचाव होता ही है और ऐसा घुमानेसे दोनों ओर खिंचाव होकर पेट अच्छा रहनेमें बडी सहायता होती है। ऊपरला धड घुमानेके समय दांई और बांई ओर जितना अधिक क्रमशः घुमाया जाय उतना अधिक अच्छा है।

इस समय ठोडीको कंठमूलमें, तथा दांये और बांये कंधेपर क्रमशः लगानेसे, तथा सिरका पिछला भाग कंठके पिछले मूल भागमें लगानेका केवल यत्न करनेसे, कंठके स्नायुओंमें नवजीवन आता है।

जिस समय आप इस आसनमें स्थिर रहेंगे उस समय अपने फैलेहुए हाथों के पंजों को बहुतही सख्त मिटाकर फिर बहुतही फैलाइये। हाथका पंजा मिटाना और फैलाना अपनी सब शक्तिके साथ जोरसे कीजिए। इससे खूनका प्रवाह होनेमें मदत होगी, हाथ के स्नायुओंको बडा व्यायाम होगा, उसमें पकडनेकी शक्ति आजायगी, और अपने बलका भी पता लग जायगा। यदि आप विना थके हुए पांच सो बार कर सकते हैं, तो आपकी शक्ति अच्छी समझी जायगी। साधारण मनुष्य दस वीस बारमेंही थक जाते हैं। परंतु ख्याल रखिये, कि, स्पर्धामें आकर आप अपनी शक्तिसे अधिक वार न कीजिये,

थोडा थोडा अभ्यास बढाते जाइये; अन्यथा आपके मज्जातंतुओंमें अधिक थकावट आजायगी। इसलिये सब अभ्यास अपनी शक्तिके अंदरही होना चाहिये। यह नियम सदाके लिये स्मरण में रखिये।

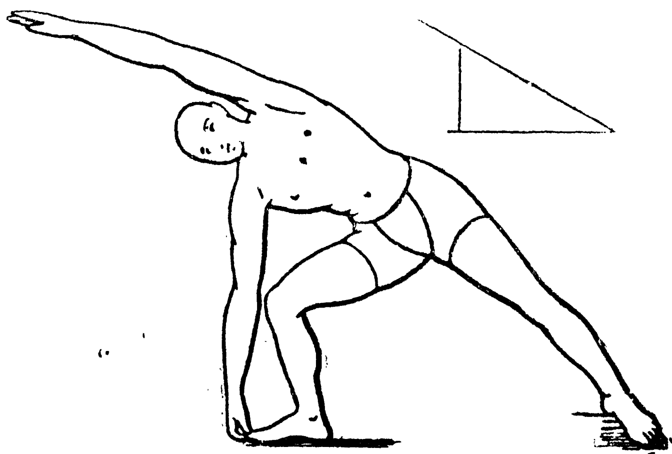
पंजा मिटाना और फैलाना उसी समय करना चाहिये कि, जिस समय हाथ फैले हों। हाथ ऊपर नीचे, तिरछे और बाहुकी समरेखा में रखे जाते हैं, हरएक वार पंजा मिटाकर फैलानेका थोडा थोडा अभ्यास करना अच्छा है जिस समय आप दफ्तरमें काम करते हैं, घंटा दो घंटे काम करनेके पश्चात् यदि आप दो चार मिनिट ताडासन करेंगे, तो आपके अंदर उत्साह द्विगुणित हो जायगा। सुस्ती दूर होगी और फिर नये स्फुरणसे आप अपना काम कर सकेंगे। परंतु स्मरण रहे कि, यह ताडासन करनेके समय कपडे तंग न हों, कपडोंके सब बटन खोल कर तथा कमरबंध ढीला करके आप कपडोंके समेतभी कर सकते हैं। मस्तिष्कके काम करनेवालोंको शीर्षासन अत्यंत उत्तम है, परंतु वह कपडोंके समेत नहीं हो सकता। इसलिए कपडोंके समेत होनेवाला यह ताडासन बहुत अच्छा है। हरएक स्थानपर यह हो सकता है। पाठशालाओंमें विद्यार्थी, अध्यापक, कार्यालयोंके कर्मचारी आदि घंटा दो घंटेके पश्चात् चार पांच मिनिट इसको कर सकते हैं, और इससे लाभ उठा सकते हैं। रेलमें

प्रवास करते करते, जिस समय बैठे बैठे मनुष्य थक जाता है, इस आसनसे पांच मिनिटमें थकावट दूर हो जाती है ।

यदि सब शरीरको चालना नहीं देनी है, तो खुर्सीपर या जमीन पर बैठे बैठे ही हाथों द्वारा इस ताडासनको किया जा सकता है, इससे ऊपरले धडको अवश्य लाभ पहुंचता है। बिस्तरे पर लेटकर भी इसको किया जा सकता है, चार पाई पर सोना है तो ढीली चार पाई न हो, जो जमीन पर सोते हैं उनको तो कोई काठिणता ही नहीं है। सबेरे बिस्तरे पर उठनेके पूर्व ओढनेके कंबल ऊपर रखते हुए ही आप अपने हाथोंको ऊपर, तिरछे और बाहुकी समरेखामें फैलाइये और पंजेको मिटा कर फैलाइये। जैसा आप खडा रहकर कर सकते हैं वैसाही ठीक बिस्तरे पर सोते सोते ताडासन कर सकते हैं । प्रतिदिन इस प्रकार दस पांच मिनिट करनेके बडा लाभ होता है । जाग आते ही सुस्तीके कारण जो शीघ्र उठ नहीं सकते, वे इस आसनको बिस्तरेमें करेंगे, तो तत्काल उत्साहका अनुभव कर सकते हैं । शौच शुद्धिके लिए भी इससे बडा लाभ होता है ।

यह आसन स्त्रियां कर सकतीं हैं तथा सब अवस्थाओंके स्त्रीपुरुषों बाल और वृद्धों को यह लाभदायी है। इस का विशेष परिणाम पेट पर अच्छा होता है ।

(२) कोनासन.



सबसे पहिले पांव फैलाकर खडे रहिये, और पीठ समरेखामें रखकर पूर्वोक्त प्रकार ताडासन कीजिए। जब अच्छी प्रकार हो जाय तब एक पांवको सीधा रखकर दूसरे पांव को मोडकर अपने एक हाथसे मोडे हुए पांवके अंगुठेको स्पर्श कीजिये तथा दूसरा हाथ सीधे पांवकी समरेखामें सीधा रखिये। कुछ देर इसी प्रकार ठहरकर फिर सीधा खडा हो जाइये। तत्पश्चात् दूसरे पांवको मोडकर दूसरी तर्फ का आसन कीजिए। जब दाई ओर बाई ओरका ठीक हो जाय, तब समझिये कि आपका अभ्यास ठीक हुआ है।

पंजा
दायाँ हाथ
पंजा बाहु
बांया हाथ

इस आसन को करनेके पूर्व ही ताडासनमें अपने हाथोंको साथ बतायी हुए रीतिसे समकोणमें रखेंगे, और उस प्रकार समकोणमें रखे हुए हाथोंके समेत ही आप बांये हाथको नीचे बांये पांव तक शनैः शनैः और मंद वेगसे ले आयेंगे, तो इस आसनका अभीष्ट अच्छी प्रकार सिद्ध हो जायगा। इसी प्रकार दूसरी तर्फ करनेके समय आप हाथोंको साथ वाली रीतिके अनुसार पहिले रखेंगे और दांये हाथको दांये पांवतक मंद वेगसे ले आयेंगे तो अच्छा होगा। शीघ्र गतिसे लानेमें इससे वैसा लाभ नहीं होता कि जैसा मंद वेगसे लानेसे होता है। इससे पेटके नस नाडियोंपर बडा परिणाम होता है, तथा हाथ पांवके स्नायुओंतक इसका परिणाम अनुभवमें आता है। पहिले इसका अभ्यास दो चार सेकंदही किया जाय पश्चात् समय बढायां जा सकता है। जो मनुष्य इसको पहिले पहिले पूर्ण रीतिसे और अच्छीप्रकार कर नहीं सकते उनको बलसे करना नहीं चाहिये। थोडा थोडा अभ्यास बढाकर दस पंद्रह दिनोंमें ठीक आ जाता है, जो पहिले दिन ही अच्छी प्रकार करते हैं उनके लिये कोई विशेष बातही नहीं है।

बाँया हाथ
पंजा
बाहु पंजा
दांया हाथ

विशेष स्पष्टीकरण।

पूर्व स्थलमें ताडासनका वर्णन लिखा है, उसके अनुसार

खडे रहिये। दो पावोंके बीचमें अंतर करीब दो हाथ रखिये। एक हाथ सीधा ऊपर और दूसरा उसके समकोणमें रखकर पूर्ववत् अच्छीप्रकार खिंचाव कीजिये। तत्पश्चात् उसी समरेखामें शनैः शनैः हाथ नीचे करके उससे पांवका अंगुठा पकडलीजिये, और दूसरा हाथ पांवके साथ सीधी रेषामें रखकर उसे ऊपर खींचनेका यत्न कीजिये। इस समय इस पांवका घुटना सीधा रहेगा और दूसरा तेढा हो जायगा, जैसा कि ऊपरके चित्रमें बताया है।

इसी प्रकार दूसरी ओर करना चाहिये। इस आसनसे पीठ, कमर, पांव, हाथ,. पेट आदि स्थानके स्नायु अच्छी प्रकार खिंचाव होनेके कारण निर्दोष हो जाते हैं। विशेष लाभ होनेके लिये कमसे कम दस सेकंद इस आसनको करना चाहिये। जितना अधिक होगा उतना अच्छा है। मनकी इच्छा शक्तिसे जितने स्नायुओंमें खिंचाव उत्पन्न किया जा सकता है, उनमें आरोग्य होना संभव है।

कमर, पीठ आदि स्थानोंमें दर्द होनेकी अवस्थामें थोडा थोडा करने परभी बडा लाभ हो सकता है। वारंवार करते रहनेसे वहां दर्द उत्पन्नही नहीं हो सकता। इस आसनका विशेष उपयोग बगलके स्नायुओंको ठीक करनेके कार्यमें होता है। जमीनपर लेटकर पीठ जमीनको लगाते हुए भी यह आसन किया जा सकता है, इस समय सिरका पिछला भाग, पीठ, चूतड, एडीतक पांव, हाथ इनका स्पर्श जमीनको होता है। इससेभी उक्त लाभ हो सकते हैं। बहुत दर्द होनेकी अवस्थामें

जिस समय खडा होकर नहीं हो सकता, उस समय लेटकर करके भी लाभ प्राप्त किया जा सकता है।

जो हृदयके कमजोर हों और खडा रहकर करनेसे जिनको कठिनता प्रतीत होती हो, उनको उचित है कि, वे जमीनपर लेटते हुए, ही इसको करें और लाभ उठावें। एक दो मास ऐसा अभ्यास करनेसे वे खडा रहकर भी कर सकते हैं। सर्दीके दिनों में बिस्तरेपर लेटते हुए कपडे ओढकर भी यह आसन अच्छी प्रकार हो सकता है। जाग आनेके पश्चात् और उठनेके पूर्व बिस्तरेमें ही यह आसन दो चार वार दाईं बाईं ओर किया जा सकता है, इससे शौचशुद्धिमें बडी सहायता हो सकती है। वृद्ध मनुष्य शनैः शनैः इसी प्रकार करके लाभ उठा सकते हैं।

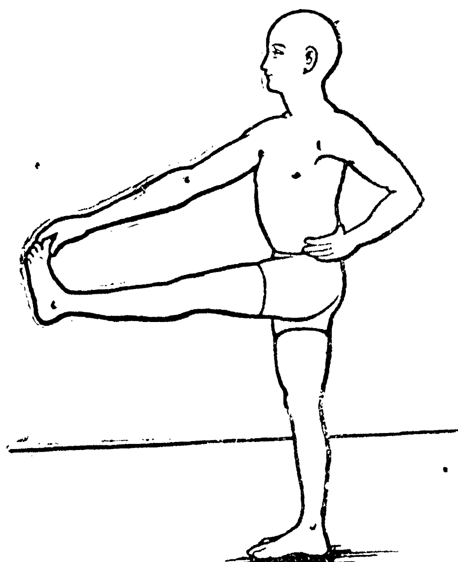
खुर्सीपर बैठकर यह आसन अच्छी प्रकार हो सकता है। कार्यालय में घंटा दो घंटे कार्य करनेके पश्चात् दस पांच सेकंद इस आसनको खुर्सीपर बैठे ही करनेसे नवीन उत्साह उत्पन्न हो सकता है। और शिथिलता दूर हो सकती है। इस समय कपडे ढीले किये जांय। कपडे तंग रहनेसे लाभ नहीं हो सकता।

यदि जमीनपर चौकी लगाकर बैठकर यह आसन करना हो, तो आसन का ऊपरका आधा भाग किया जा सकता है। इस समय एक हाथकी कोहनी जमीन को लगानी और दूसरा हाथ पूर्ववत् ऊपरकी ओर खींचना चाहिये। वास्तवमें देखा जाय, तो यही ऊपरका आधा भाग इस आसनमें मुख्य ह। और निचला भाग गौण है। जो हाथ ऊपर होता है। उसका आगे तथा पीछे झुकाव करनेके साथ ऊपरका खिंचाव करनेसे

क्रमशः पीठ और पेट के स्नायुओंपर इष्ट परिणाम होता है। इससे पेट, पीठ और बगलके स्नायु ठीक निर्दोष होनेमें सहायता होती है। गर्भवती स्त्रियां इसको न करें अन्य स्त्रीपुरुष कर सकते हैं।

---

(३) हस्तपादांगुष्ठासन।



छाती आगे फैलाकर समरेखामें खडे रहिये, सिर, गला, पीठ, चूतर और पांव सीधे समसूत्रमें हों। घुटने सीधे रखिये। दो पांव एक दूसरेके पास हों। अब एक पांव घुटना सीधा रखकर शनैः शनैः ऊपर कीजिये, जब यह पांव दूसरे पांवके साथ समकोणमें आजाय, तब भूमिके साथ समांतर होगा;

इस समय एक हाथसे एक पांवका अंगूठा पकड लीजिये और दूसरा हाथ कमरपर रखिये, अथवा किसी प्रकार किधर भी रख सकते हैं। क्योंकि इसका कोई कार्य इस आसनमें नहीं है। हाथ और पांवके हेर फेरसे यह आसन दो चार प्रकारका होता है।

जब आप इस आसनपर कुछ देर तक ठहरेंगे, कमसे कम आधा मिनिटतक ठहरेंगे, तत्पश्चात् ऊपर किये हुए पांवके घुटनेको अपना सिर अथवा नाक लगानेका यत्न कीजिये। इस समय अपनी इच्छा शक्तिसे पेटको अंदर खींचना चाहिये और कमसे कम एक मिनिटतक घुटनेपर सिर . अथवा नाक लगाकर रखना चाहिये। इतना होना पहिले पहिले कठिन है, तथापि मास दो मासके अभ्याससे सुगमतया हो सकता है। इस आसनसे पांव, जंघा, कमर, पीठ, पेट, गला आदि स्थानके स्नायु-ओंकी निर्दोषता हो जाती है। करनेवालेको पहिलेही दिन पता लग जाता है कि, इतने स्थानोंमें इस प्रकार परिणाम हो रहा है।

जो पहिले दिन इस प्रकार बीचमें खडे नहीं हो सकते उनको उचित है कि वे प्रारंभमें दिवारका सहारा लेकर खडे हो जांय, तथा ऊपर उठाये पांव के नीचे मेज, खुर्सी या और कुछ रखें। ऐसा सहारा लेनेसे आसनका परिणाम यद्यपि न्यून हो जाता है, तथापि आसन बननेमें बडी सहायता हो जाती है। पहिले दिन घुटनेको सिर लगना भी कईयों को अशक्य हो जाता है, परंतु एक दो मासके अभ्याससे सब कुछ ठीक होने लगता है। जैसा जैसा अभ्यास बढ जायगा,

वैसा वैसा किसी सहारेके विना आसन करनेका यत्न करना चाहिये अर्थात् कमरेके बीचमें खडा होकर उक्त सब प्रकारसे यह आसन बनाने चाहियें और कमसे कम एक दो मिनिट स्थिर होना चाहिये।

जो खडा होकर नहीं कर सकते, वे जमीनपर लेटकरभी कर सकते हैं। छतकी ओर छाति और भूमिको पीठ लगाकर लेट जाइये और शनैः शनैः मंदवेगसे एक पांव ऊपर कीजिये। दोनों घुटने सीधे रखिये। तत्पश्चात् हाथसे पांवका अंगुठा पकड कर सिर उठाकर घुटनेको लगाइये। इस प्रकार बिस्तरेपर लेटकर यह आसन हो सकता है। इसी रीतिसे बगलपर लेटकर भी हो सकता है। वृद्ध और अशक्तोंको लेटकर ही करना योग्य है।

खुर्सीपर बैठकर भी यह आसन होता है। इस समय खुर्सीपर बैठनेके कारण एक पांवका घुटना सीधा नहीं होगा, परंतु आसन का ऊपरका आधाभाग पूर्ववत् हो सकता है और बहुतसा लाभ हो सकता है। खडे होनेकी अवस्थामें इधर उधर गिरनेका संभव होता है, परंतु खुर्सीपर बैठकर करनेसे उस प्रकारके कोई कष्ट नहीं होते और आसन बनता है।

जमीनपर एक पांवसे चौकी लगाकर तथा दूसरा पांव सीधा आगे फैलाकर इस आसन का आधा भाग किया जाता है। यही भाग इस आसनमें मुख्य है। तथापि खडा रह कर करना मुख्य है और अन्य रीतियां लाभकी दृष्टिसे गौणही हैं। परंतु अशक्तोंके लिये अन्य रीतियां सुकर हैं।

स्त्रीपुरुष समानतया यह आसन कर सकते हैं।

(४) गरुडासन।



खडा रहकर एक पांवपर दूसरा पांव ऐसा लपेटना जैसी वृक्षपर वल्ली होती है। हाथ भी एक दूसरेके साथ वैसाही लपेटना चाहिये और हाथके दोनों तलवे एक दूसरेको लगने चाहियें। इस आसनसे पांवों और हाथोंके सब स्नायुओंपर अच्छीप्रकार खिंचाव आता है, इसलिये वे निर्दोष होते हैं। वृषण वृद्धि की बीमारी इस आसनके करनेसे तथा बस्तिधौतिके करनेसे दूर होनेका अनुभव है। तथा घुटनोंका दर्द तथा पांवका दर्द भी इससे दूर होता है। हाथको भी इसी से लाभ पहुंचता है।

यह आसन खुर्सीपर बैठकर, तथा भूमिपर लेटकर भी होता है। और इससे वही लाभ प्राप्त होता है जो ऊपर लिखा है।

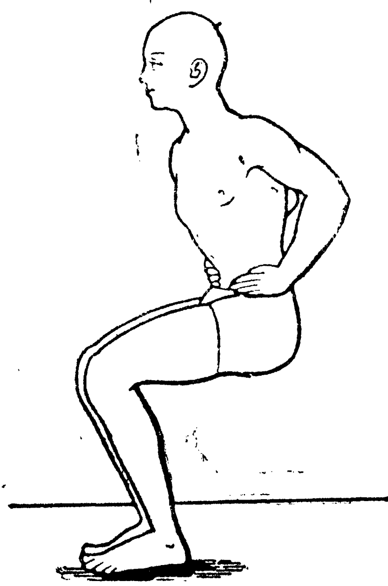
इस आसनमें एक पांव सीधा होता है, और दूसरा उसपर लिपटा होता है। इस लिपटे हुए पांवका अंगुठा जमीनको लगानेका यत्न करनेसे इस आसनका पूर्ण लाभ प्राप्त होता है।

इस समय दोन पांव घुटनेमें तेढे करने पडते हैं, और प्रारंभमें किसी का सहारा लेना पडता है। इस समय दोनों हाथ घुटनोंपर रखना उत्तम है।

पांवों और हाथोंके हेरफेर से यह आसन करना चाहिये। यह आसन स्त्रियोंके गर्भधारण होनेके बाद करना उचित नहीं है।

---

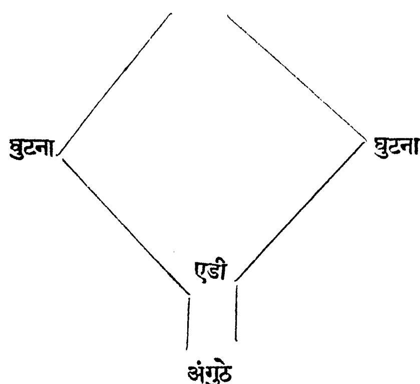
(५) उत्कटासन.



जिस प्रकार खुर्सीपर बैठते हैं उस प्रकार खुर्सीके बिना बैठनेका नाम उत्कटासन है। पहिले खडा होकर शरीरको शनैः शनैः नीचे करना और जंघाओंको घुटनोंकी सम रेखामें लानेसें यह आसन सिद्ध होता है। इस समय हाथ जैसे चाहे वैसे रखे जासकते हैं। तथा घुटने पांवको अंगुठोंकी सम रेखामें रखने चाहिये। आगे नहीं जाने चाहिये। जब इस प्रकार रहनेका अभ्यास हो जाय तब पावोंके

अंगुठोंको ही केवळ जमीनपर रखकर, एडीयोंको ऊंची करके, दोनों पावोंके पंजों या अंगुठोंपरही शरीरका बोझ डालकर खुर्सीपर बैठनेके समान बैठे रहनेका अभ्यास करनेसे और अधिक लाभ हो सकता है।

इस रीतिसे पावोंके अंगुठोंपर का उत्कटासन सिद्ध होनेके पश्चात् दोनों घुटनोंको अलग अलग करनेका यत्न कीजिये। दोनों एडियां एक दूसरेके साथ मिलीं रहें परंतु दांयां घुटना दांई ओर तथा बायां घुटना बांई ओर घुमाइये। जब दोनों घुटने इस ढंगसे दोनों ओर पूर्णतासे होंगे तब यह आसन सिद्ध हो जायगा।

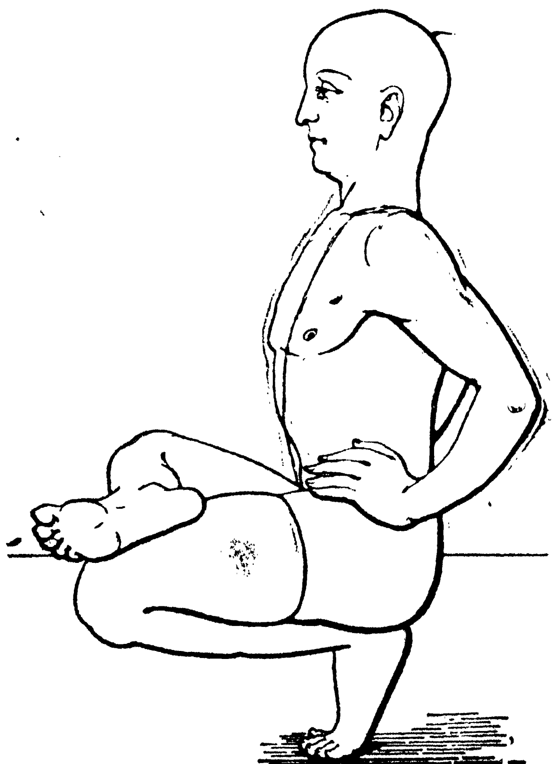


इसके करनेके समय किसी पदार्थका सहारा लेना नहीं चाहिये, और पांवके बलपर ही खडा होना चाहिये। इससे पांवकी शक्ति बढती है। जिनके पांव कमजोर हों उनको इस आसनसे बडा लाभ होता है। पांवकी सूजनका एक रोग है, जो गरुडासन तथा उत्कटासन वारंवार और हेर फेरके साथ करनेसे अच्छा हो जाता है। इस आसनके उक्त सब प्रकारोंमें पीठको जहांतक हो वहांतक सम रेषामें रखनेका यत्न करना चाहिये।

एक पांव दूसरे पांवपर लपेटके दोनों पांवोंके अंगुठे जमी-नपर लगाकर जो इसी प्रकार उत्कटासन किया जाता है, उसको "संकटासन" कहते हैं । स्त्रियोंको यह करना उचित नहीं है ।

---

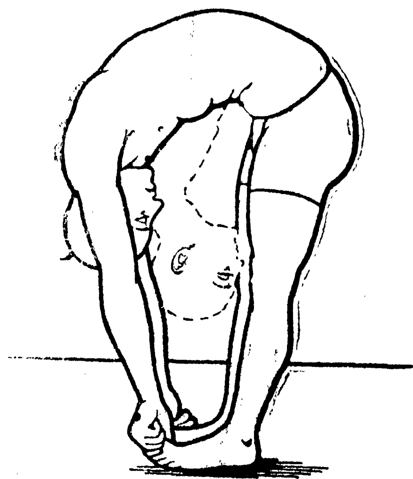
(६) पादांगुष्ठासन ।



पावकी एडीको गुदा और अंडकोशके बीचमें लगाकर

उसीपर सब शरीरका भार संभाल कर बैठिये और दूसरा पांव घुटनेके ऊपर रखिये, सहारे के लिये चाहे एक हाथ दिवारपर अथवा चौकीपर रख सकते हैं। गुदा और अंडकोश के बीचमें चार अंगुलके इतना स्थान है। वहां वीर्य की नाडियां हैं। उनको एडीसे दबानेसे वीर्यका प्रवाह बाहिर होना बंद हो जाता है। इस लिये इस आसन का अभ्यास करनेसे वीर्य दोष हट जाता है। स्त्रियों को यह आसन नहीं करना चाहिये (तथा गृहस्थाश्रमी पुरुषभी इसका अभ्यास निरंतर और बहुत न करें।)

(७) पादहस्तासन।



प्रथमतः सीधे खडे हो जाइये। पश्चात् शनैः शनैः हाथ नीचे करके दोनों हाथोंकी अंगुलियोंसे दोनों पांवोंके अंगुठे पकड लीजिये। यह पादहस्तासन हुआ। इसको चक्रासन भी कहते हैं। हाथों और पांवोंके हेरफेर से इसी आसनके और दो भेद

होते हैं । अंगुठे पकडनेके समय दांये हाथसे बांये पांवका और बांये हाथसे दांये पांवका अंगुठा पकडनेसे एक प्रकार का पादहस्तासन होता है । तथा पहिले पांवोंको एक दूसरेके स्थानपर रखकर फिर पूर्ववत् पांवके अंगुठे पकडनेसे दूसरा प्रकार सिद्ध होता है । इसके बाद, जब इतना आसन ठीक प्रकार होगा, तब पावोंके दोनों ओर अथवा पावोंके सामने हाथोंके पूरे तळवे जमीनपर रखने चाहिये । जब यह ठीक होने लगेगा, तब अपना नाक घुटनेको लगाइये, अथवा अपना मस्तक दोनों घुटनोंके बीचमें रखिये । मस्तक दोनों घुटनोंके बीचमें इतना जाना चाहिये कि, कानोंको घुटनोंका स्पर्श हो जाय । इसका और एक प्रकार यह है कि, अपना मस्तक घुटनोंके नीचे दस बारह अंगुल पांवों पर लगाना । घुटने और पांव तक जो अंतर है उसके मध्यमें सिर आजाय, और वह दोनों पांवोंके बीचमें चला जाय ।

यह आसन करनेके समय विशेष ध्यान इस बातके विषयमें देना चाहिये कि, पांव सीधे रहें, घुटने तेढे न हों और हाथ भी जहां तक हो वहांतक सीधे हों । तथा इस आसनको करनेके समय पेटको अंदर अच्छीप्रकार खींचना चाहिये । पेट जितना अंदर खींचा जाय उतना अधिक लाभ इससे होता है । पांवके स्नायुओपर अच्छा खींचाव आता है, तथा पीठ, कमर आदिके स्नायु अच्छे खींचे जाते हैं, इसलिये इस स्थानका आरोग्य इसके अभ्याससे प्राप्त होता है । तथा पेटपर भी इस

का उत्तम परिणाम होता है। यकृत और प्लीहा निर्दोष होती है, पेटका स्थान और आंतोंके भाग भी शुद्ध होनेमें बडी सहायता होती है।

इसके करनेसे जठराग्नि बढता है, भूख बडी लगने लगती है, अजीर्ण दूर भाग जाता है, कृमिविकार हटता है, तिल्लीके विकार कम होते हैं, पेट में कृशता आती है अर्थात् मेद हटता है। विशेषतः यकृत् की निर्दोषता होनेसे शरीरके बहुतसे रोग जो अजीर्णसे बढते हैं, दूर होते हैं। इस आसनसे विशेष लाभ प्राप्त करनेके लिये कमसे कम दस मिनिटतक तो अवश्य ही करना चाहिये। विशेष करनेसे विशेष लाभ होगा। तथापि एक मिनिट पर्यंत इस आसनमें स्थिर रहनेसे भी लाभका अनुभव होने लगता है।

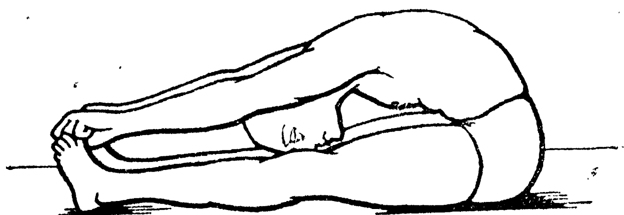
इस आसनसे पेटके वायुकी निम्नगति होती है, और वह गुदद्वारसे बाहिर जाता है, इस लिये शौचशुद्धिमें भी इसका बडा उपयोग होता है। किंचित् जलपान करके इस आसनको करनेसे शौचशुद्धि होनेमें बडी सहायता होती है।

इस आसनसे सुषुम्ना नाडीका बल बढ जाता है, और शुद्धता भी होती है। इसलिये मज्जातंतुओंके बहुतसे दोष इस आसनसे दूर होते हैं।

यही आसन जब बैठकर किया जाता है तब उसको पश्चिमोत्तानासन कहते हैं, इसका विधि देखिये—

---

(८) पश्चिमोत्तानासन ।



जमीनपर बैठकर पांवोंको आगे फैलाइये । पश्चात् दोनों हाथोंसे दोनों पावों के अंगुठे पकड लीजिये और सिर दोनों घुटनोंके बीचमें रखिय । पूर्व लिखित आसन के अनुसार ही हाथों और पांवों के हेर फेर से तथा नाक अथवा सिर घुटने पर अथवा घुटनेके आगे लगानेसे इसके चार प्रकार होते हैं । उनको पूर्व लिखित विधिके अनुसार ही करना चाहिये । पूर्व आसन खडा होकर किया जाता है और यह बैठकर किया जाता है । इतना ही दोनोंमें भेद है । बाकी दोनों आसनों की विधि और दोनों क लाभ एक ही हैं । इसके

लाभों का वर्णन पूर्व आसनमें ही देखिये। इसको "पश्चिम-तान" अथवा "पश्चिमोत्तान" भी कहते हैं।

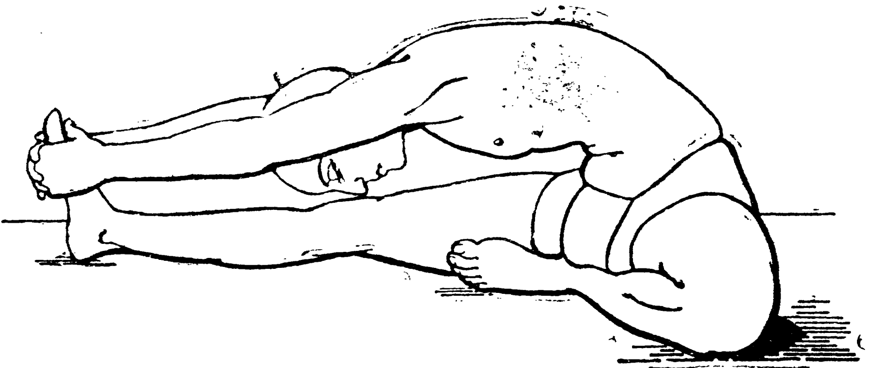
जमीन पर लेट कर भी यह आसन होता है। जमीन पर पीठ का थोडासा भाग लगता है और पांव सिर के ऊपर से सिर के पीछे आते हैं, अंगुठे आदि पूर्ववत् ही पकडे जाते हैं। इस से भी लाभ पूर्ववत् ही होते हैं।

खडा रह कर करने में हाथ और पांव सीधे रहते हैं, परंतु बैठ कर अथवा लेट कर करनेमें घुटनों समेत पांव तो अवश्य ही सीधे सम सूत्रमें रखने चाहियें, परंतु हाथ बिलकुल सीधे नहीं रहते। तथापि इससे कोई फलकी न्यूनता नहीं होती। कई लोग खडा रह कर बडी देर तक यह आसन कर नहीं सकते उनको बैठ कर या लेट कर करनेसे वेही लाभ प्राप्त हो सकते हैं। प्रत्येक वार करनेके समय पेटको अंदर लेजाना और घुटने सीधे रखनेका ख्याल अवश्य रखना चाहिये।

स्त्रियां गर्भवती होनेकी अवस्थामें तीन मासके पश्चात् इस आसनको न करें। पुरुषोंके लिये यह रुकावट नहीं है। पंद्रह मिनिटतक प्रतिदिन यह आसन करनेसे पेटके विकार दूर होते हैं।

---

(९) जानुशिरासन ।



एक पावकी एडीको गुदा और अंडकोशके बीचमें जमाकर दूसरा पांव सीधा आगे रखिये । परंतु ध्यान रहे कि जिसकी एडी गुदा और अंडकोशके बीचमें रही है उसके पांवके तलेसे दूसरी जंघापर अच्छी प्रकार दबाव आजावे । तत्पश्चात् दोनों हाथोंसे उस फैले पांवको पकड कर उसी पांवके घुटनेपर सिर अथवा नाक लगाकर बैठिये । यह आसन पांच मिनिटसे आधा घंटा तक कर सकते हैं ।

यह आसन करनेके समय नाभिसमेत पेटको पीठ की ओर अंदर खींचनेसे बहुत

लाभ होता है, परंतु ऐसा करनेपर प्राणको स्थिर करना पडता है, इसलिये इस प्रकार यह आसन बहुत देर करना कठिन हो जाता है तथापि नाभिसमेत पेटको अंदर खींचकर और साथ साथ गुदा और शिस्नके आसपासकी सब नस नाडियाँ मनके द्वारा ऊपर खींचकर यह आसन करनेपर वीर्यस्थिरता आदिके संबंधमें अनेक लाभ होते हैं ।

जो इस प्रकार आकर्षण विधिके साथ नहीं कर सकते, वे उसके विनाभी कर सकते हैं । आकर्षण विधिके साथ करनेसे वीर्यरक्षण होगा, तथा आकर्षण विधिके विना करनेसे निम्न लिखित लाभ हो सकते हैं ।

यह आसन मिनिट दो मिनिट करनेसेही बहुत लाभकी आशा करना व्यर्थ है । कमसे कम प्रतिदिन पांच मिनिट करनेसे लाभका अनुभव होता है और अधिक देर करनेसे निःसंदेह निम्न रोग दूर हो जाते हैं अथवा होतेही नहीं ।

प्लीहा और यकृत्के दोष कम होते हैं । जीर्णज्वर दूर होकर उससे होनेवाले पांडुता आदि अन्य रोग हट जाते हैं । कास, श्वास और प्राथमिक अवस्थाका क्षय भी हटता है । आंतोंके दोष दूर होनेके कारण पचनशक्ति बढ जाती है, अच्छी भूख लगने लगती है । भूख लगनेपर गायका अथवा बकरीका दूध पीना तथा सात्विक भोजन और उत्तम घीका सेवन करना अत्यंत आवश्यक है । चटपटे पदार्थ, मसालेदार भोजन तथा अन्य रूक्ष पदार्थ खाने नहीं चाहिये । योग्य फल, कंद मूल आदिका सेवन करनेसे बहुत लाभ होता है । बहुत

लोग भूख लगनेपर अयोग्य पदार्थोंका सेवन करके फिर अपना स्वास्थ्य बिगाड देते हैं।

जिन रोगोंमें मलमूत्रका स्तंभन होता है, आंतोंमें उष्णता बढ जाती है और वायुका प्रकोप होता है, उन रोगोंको, यह आसन पूर्वोक्त पथ्यके साथ करनेपर दूर करता है। पेटका दर्द, नाभिस्थान का शूल अथवा जो सिरदर्द पेट बिगडनेसे होता है वह इस आसनके अभ्याससे दूर हो जाता है। सिरका भारापन, नेत्रोंका दाह, अंगोंकी दुर्बलता, मूत्र स्थानके क्लेश, खुजली, आमके कारण होनेवाला सूक्ष्मज्वर, मुख की अरुचि, बेचैनी, आलस्य आदि सब इसके उत्तम अभ्याससे दूर होते हैं। तात्पर्य यह है कि, जिन रोगोंकी उत्पत्ति आंतोंके दोषोंसे होती है वे रोग इस आसनके अभ्याससे दूर हो जाते हैं।

यह आसन एक वार दांये पांवसे करनेपर दूसरी वार बाये पांवसे अवश्य करना चाहिये। इसमें भूलना नहीं चाहिये। तात्पर्य। दांये और बांये अंगोंके साथ इसका अभ्यास सम प्रमाणमें होना आवश्यक है। जितनी वार और जितना समय एक अंगसे किया है उतनी वार और उतना समय दूसरे अंगसे करना चाहिये। ऐसा न करनेपर कोई दोष नहीं होगा, परंतु लाभमें अवश्य हानि होगी।

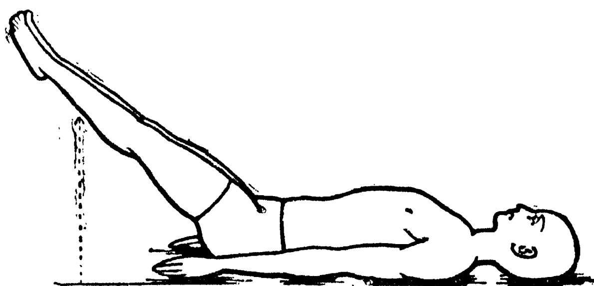
इसकी दूसरी रीति—जिस पांवकी एडी गुदा और अंडकोश के बीचमें रखनी होती है, वह पांव वहां नीचे न रखते हुए, उसके तलवेको फैले हुए पांवकी जंघापर रखकर शेष आसन पूर्ववत् करनेसे भी यह आसन सिद्ध होता है। इससे भी पूर्ववत् ही लाभ होते हैं।

पहिले पहिले यह आसन बहुत देर नहीं होता, परंतु अभ्यास बढ जानेपर बहुत देरतक बैठा जा सकता है। कई-योंको तो पहिले दिन घुटनेपर सिर लगानाही कठिन प्रतीत होगा, परंतु महिना दो महिनोंके अभ्याससे लग सकता है। कमरमें और पेटमें विजातीय द्रव्य बहुत होनेके कारण घुटने-पर सिर लगाना कठिन हो जाता है। प्रतिदिन वहांके स्नायु-ओंपर खींचनेका दाब पडनेसे मास दो मासोंमें सब स्नायु-और कमर तथा पेटकी नस नाडियां शुद्ध और निर्मल हो जातीं हैं। कईयोंका पेट कद्दूके समान बडा होता है, वे लोग ऐसा बडा पेट होते हुए भी अपने आपको तन्दुरुस्त समझते हैं, यह उनकी गलती है। मृत्युका निवास बडे पेटके अंदर होता है। अपनेही मृत्युको अपने पेटके अंदर स्थान देना कोई अच्छा कार्य नहीं है। इस आसनसे पेटकी अवस्था ठीक होती है, और वहांसे मृत्युको दूर भागना पडता है।

थोडा जलपान करके यह आसन करनेसे शौच शुद्धि होनेमें बडी सहायता होती है। तथापि शौचके पूर्व इस आसनको करना योग्य नहीं है। एक पांवसे जमीनपर खडा रहकर टेबलपर दूसरा पांव फैलाकरभी यह आसन हो सकता है। इस समय टेबलपर फैले पांवके घुटनेपर सिर रखना होता है और हाथ पूर्ववत ही रखने चाहियें।

इस आसनका पहिला प्रकार स्त्रियोंको करना नहीं चाहिये, परंतु दूसरे प्रकार करनेमें कोई दोष नहीं है। तथापि गर्भवती होनेके चार मासके पश्चात् न करना अच्छा है।

(१०) उत्तानपादासन ।



जमीन पर लेट जाइये । सब स्नायु ढीले कीजिये । और अत्यंत मंद वेगसे दोनों पावों को ऊपर उठाइये । जितने मंद वेगसे पावों को ऊपर करें गे, उतना अधिक इष्ट परिणाम पेट के स्नायुओं और आंतों पर होगा । पावों को शीघ्रतासे ऊपर करना सुगम है, परंतु अतिमंद वेगसे ऊपर करने में अत्यंत परिश्रम होते है, और अति मंद वेगसे करने पर ही इससे अत्यंत लाभ होता है । भूमीके एक हाथ ऊपर पांव आगय, तो वहां ही उनको स्थिर कीजिये । जितनी देर वहां रख सकेंगे, उतनी देर रखिये, और फिर अति मंद वेगसे पुनः नीचे भूमि की ओर ले जाइये ।

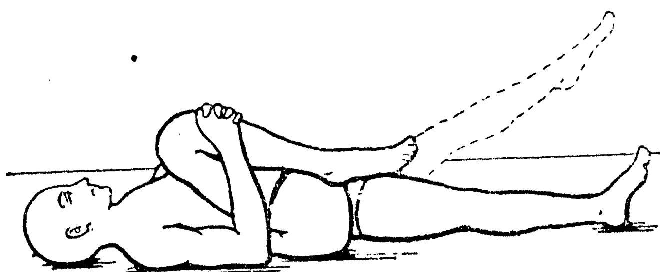
इस आसनसे क्षुधा प्रदीप्त होती है, शौच शुद्धि होती है और पेटके स्नायुओंमें बडा बल आता है । इस आसनका अभ्यास करनेवालेका पेट कद्दू के समान बडा नहीं हो सकता, और स्वाभाविक अवस्थामें ही रहता है ।

यह आसन बिस्तरे में भी उत्तम प्रकार से किया जा सकता है । जाग आते ही कुछ देर इस को करनेसे शौच शुद्धि होने में सहायता होती है । एक पांव को नीचे रख कर दूसरे को ऊपर उठाने से "अर्ध उत्तान पादासन" हो जाता है इससे पूर्वकी अपेक्षा कुछ न्यून लाभ होते हैं, परंतु उससे यह सुगम है ।

कमर के ऊपर का भाग छाति और सिर के समेत भी इसी प्रकार ऊपर उठाया जा सकता है । इससे भी पेटपर बडा अच्छा परिणाम होता है । यह आसन स्त्रियां कर सकतीं है ।

---

(११) पवनमुक्तासन ।



भूमिपर लेट जाइये और एक पांवको घुटनेमें मोडकर पेटके ऊपर अच्छी प्रकार दबाइये । फिर उसको सीधा जमीनपर

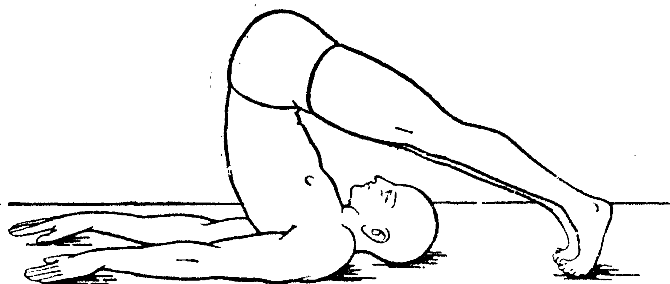
अथवा ऊपर सीधा रखकर दूसरे पांवको पेटके संग दबाइये। पेटके संग दबाकर थोडी देर ठहरना चाहिये, तब इसका परिणाम पेटपर तथा विशेषतः निचली आंतोंपर बडा अच्छा होता है। और शौच शुद्धि होनेमें सहायता होती है। पांव जमीनपर रखने तथा अंतरालमें रखनेसे इस आसनके दो प्रकार होते हैं। पांव अंतरालमें रखनेसे उत्तानपादासन का भी लाभ साथ साथ हो जाता है।

इसका तीसरा प्रकार दोनों पांवोंको इकट्ठा पेटके साथ दबानेसे बनता है। यह भी पूर्ववत्‌ही लाभकारी होता है।

खडा रहकर भी एक एक पांवके साथ यह आसन इसी प्रकार किया जा सकता है। खुर्सी पर बैठ कर भी एक एक पांव के साथ तथा दोनों पांवों के साथ किया जा सकता है। जमीन पर पांवों के तलवों पर बैठकर दोनों पांवों को पेटके साथ दबा कर यह आसन हो सकता है।

पेटक वायु को नाभि के नीचे भेज कर अपान वायु की निम्न गति कराना इस आसन का फल है। थोडा जलपान कर के यह आसन किया जाय, तो शौचशुद्धि होने में बडी सहायता हो जाती है। जाग आने के पश्चात् बिस्तरे पर ही यह आसन कई वार किया जाय, तो शौच साफ होनेमें बडी सहायता होगी। गर्भधारण होने के पूर्व स्त्रियां इसका अभ्यास करें, गर्भधारण के पश्चात् कदापि न करें।

(१२) हलासन ।



इसको कई सर्वांगासन भी कहते हैं ।

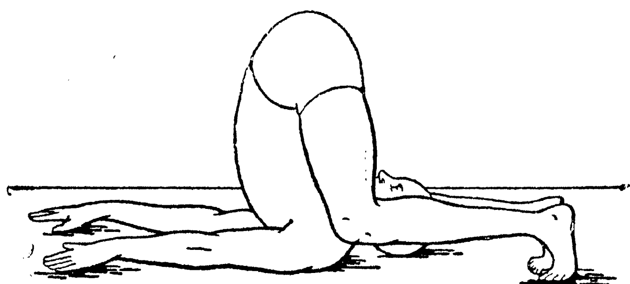
प्रथम भूमिपर लेट जाइये । पश्चात् पावोंको उठाकर अपने सिरके पीछे जमीनपर लगाईये, केवल पांवके अंगुठे और अंगुलियांही भूमिको स्पर्श करें और घुटनों समेत पांव सीधे सरल समसूत्रमें रहें । हाथ चाहे भूमिपर ही रखिये, चाहे सहारेके लिये कमरपर रखिये । हाथ भूमिपर रखकर सहारेके विनाही करेंगे तो अच्छा है, परंतु प्रारंभमें कमरको हाथोंका सहारा देनेसे सुगमतया यह आसन होता है ।

रस आसनपर जितनी देर आप रह सकते हैं रहिये । इससे क्षुधा प्रदीप्त होती है, पेटके दोष दूर होजाते हैं, यकृत् और प्लीहा निर्दोष होजाती है, अजीर्णके सब ही रोग इससे दूर होजाते हैं । इस समय पेटको अंदर खींचना उत्तम है, परंतु यदि यह प्रारंभमें न हो सका, तो भी कोई पर्वाह नहीं है ।

प्रयत्न करके आप इस आसनपर एक दो मिनिट रहेंगे

तो भी लाभका अनुभव आपको मिलेगा। दस मिनिट तक रहनेका अभ्यास होजाय, तो जठराग्नि अच्छीप्रकार प्रदीप्त होगा। परंतु प्रारंभमें बिलकुल थोडा करके पश्चात् जैसा जैसा अभ्यास बढेगा, वैसा वैसा समय बढानेसे सब प्रकृतिके मनुष्योंको इस से लाभ प्राप्त हो सकता है। स्त्रियां इसे बहुत देरतक न करें तथा गर्भ के चार मासके पश्चात् न करें।

(१३) कर्णपिडनासन।

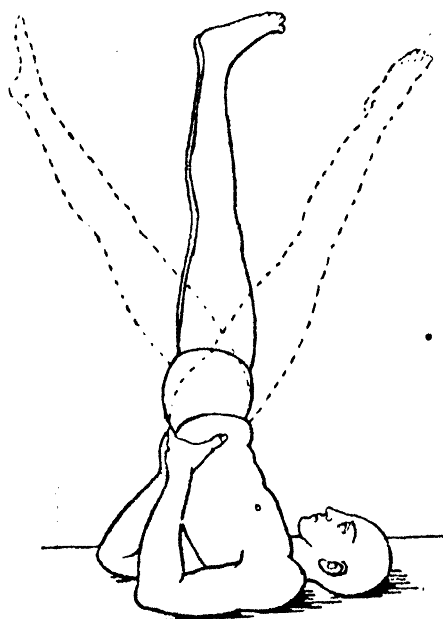


पूर्ववत् हलासन करके घुटने मोडकर कानों को लगानेसे कर्णपीडनासन बनता है। चाहे पहिले कमर पर दोनों हाथों का सहारा दीजिये, परंतु सहारे के विना करना अधिक लाभदायक है। इससे वेही लाभ होते हैं कि, जो पूर्व आसन में वर्णन किये हैं, परंतु उससे थोडे गुण अधिक हैं।

प्रारंभ में थोडी देर इस आसन पर ठहरना चाहिये और जैसा जैसा अभ्यास होगा वैसा समय बढानेसे बडा लाभ होता है।

---

(१४) ऊर्ध्व सर्वांगासन।



पूर्ववत् सर्वांगासन कर के युक्तिसे पावों को छत की ओर सीधे खडे करनेसे यह आसन बनता है। पूर्ववत् सर्वांगासन पहिले न करते हुए भी यह बन सकता है। नीचे लेट कर चूतड तक भूमिपर ही रखके केवल दोनों पांवों को जोड के ऊंचा करना, पश्चात् युक्तिसे केवल कंधा और माथा इन्हीपर सब शरीर कों तान के खडा करनेसे यह आसन सिद्ध होता है। इस समय प्रारंभमें कमर को हाथों का सहारा दीजिये,

परंतु पीछेसे हाथोंके सहारे के विना ही करना उत्तम है। कई लोग इसको "विपरीतासन" अथवा "विपरीत करणी" अथवा केवल "सर्वांगासन" भी कहते है।

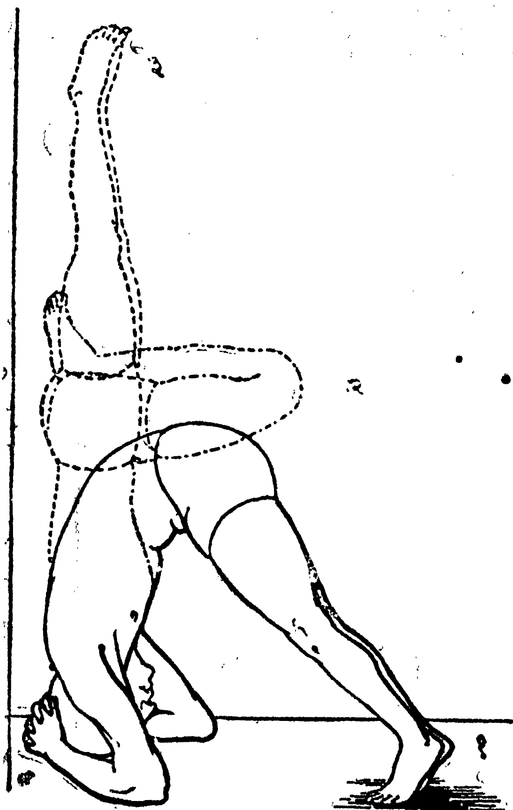
एक पांव को आगे और दूसरे को पीछे करनेसे इसके विविध प्रकार हो जाते हैं। तथा एक पांव सिर के पीछे भूमि-पर लगानेसे एक पांव का सर्वांगासन होता है और साथ साथ दूसरे पांव को ऊपर खडा रखनेसे ऊर्ध्व सर्वांगासन भी हो जाता है। इसी प्रकार एक पांव से कर्णपीडनासन कर के दूसरे पांव से ऊर्ध्व सर्वांगासन किया जासकता है। इस प्रकार हेर फेर से विविध आसनों को साथ करना उत्तम है।

इससे हृदय को विश्राम मिलता है, सब रक्त हृदय और फेंफडों में उतरनेसे रक्त शुद्धि होती है, रक्त सिर में उतर कर वहां की शुद्धता करता है और दोषों को धो देता है इस लिये सिर दर्द इससे हट जाता है। आंख निर्दोष होते हैं, तथा गलेमें कफ का विकार न्यून हो जाता है। भूख बढ जाती है और पेटके विकार कम होते हैं। इस के विशेष लाभ शीर्षासन के समानही हैं।

इस समय ठोढी कंठमूलमें डंटकर लगानेसे कंठ भागें स्थित निकंठमणिकी शुद्धिद्वारा रक्तशुद्धिके केंद्र कार्यक्षम होते हैं। और इसके अभ्याससे सब रक्तदोष दूर हो जाते हैं। इस कारण इसके अभ्यास से अपूर्व आरोग्य प्राप्त होता है।

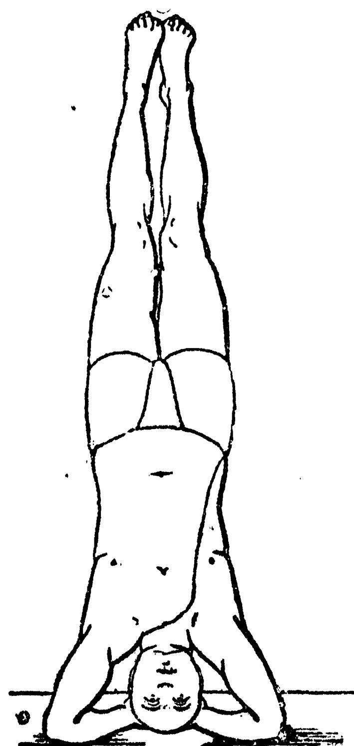
---

(१५) शीर्षासन ।



सिर पर खडा रहनेको "शीर्षासन" कहते हैं। इसीको योग शास्त्रमें (१) कपालासन, (२) विपरीतकरणी, (३) वृक्षासन भी कहते हैं। सिर (शीर्ष) पर खडा रहनेके कारण; शीर्षासन; (कपाल) मस्तकपर खडा रहनेके कारण कपालासन

वृक्षकी जडें जमीनमें जातीं हैं, उनके स्थान पर केश समझो और दो पावोंको इस अश्वत्थ वृक्षकी दो शाखायें समझेंगे तो इस आसनमें वृक्षत्वकी कल्पना होगी; इसीको विपरीत करणी इस लिये कहा जाता है कि इसमें (विपरीत) उलटा खडा होना होता है। इस प्रकार इसके नामोंका विचार है।



प्रारंभमें यह आसन दिवारके साथ साथ करना अच्छा है, दिवारके साथ करनेसे पीछे झुके जाने और पीछे गिरनेका डर नहीं होता। तथा प्रारंभमें अकेलेही करनेका साहस करनेकी अपेक्षा एक दो मित्रोंको सहायताके लिये लिया जाय तो बडा अच्छा है। पांच चार दिनोंमें स्वयं ही किसी दूसरेकी सहायताके विनाही करनेका अभ्यास हो जाता है। और महिनेके अंदरही दिवारके आधारके सिवाय कमरेके मध्यमें ही यह आसन किया जा सकता है।

इस आसनमें सिर पर खडा रहना होता है, इस लिये सिरके नीचे अच्छा नर्म-मृदु-गदेला रखना आवश्यक है।

अथवा धोती किंवा अंगोछेकी गिंडुरी बनाकर उसपर सिर रखनेसे भी अच्छी प्रकार कार्य चल सकता है। तात्पर्य यह कि सिरके नीचे सख्त जमीन न हो, नहीं तो मस्तिष्कपर उसका बहुत बुरा परिणाम होगा।

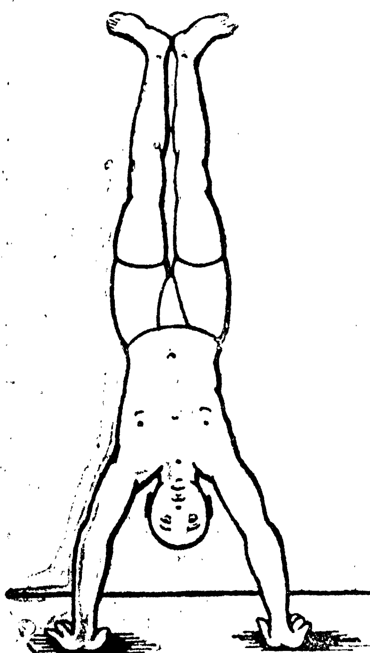
(१) शीर्षासनकी पहिली रीति—गदेलेपर अथवा अंगोछे की गिंडुरीपर सिर रखके दोनों हाथ सिरके दोनों ओर रखने, फिर पांव ठीक सिरके ऊपर हों ऐसे लंबे करने। ऊपर तूंदी और नीचे तालु करनेसे शीर्षासन बन जाता है।

(२) शीर्षासनकी दूसरी रीति—दोनों हाथोंकी अंगुलियें एकमें एक डालके उस दोनों हाथोंके ऊपर सिर रखके पूर्ववत् पांव ऊंचे तानके स्थिर होना। इसका भी नाम पूर्ववत् कपालासन आदि है।

इस आसनमें सब शरीरका बोझ गला (गर्दन), हाथ, सिर आदिपर ही होता है। इस लिये इन अवयवोंमें बोझ सहन करनेका सामर्थ्य इस आसनके अभ्याससे आता है। वृद्ध आयुमें सिरके बोझसे गर्दन कांपने लगती है, परंतु जो लोग इस आसनका अभ्यास करेंगे, उनकी गर्दन कंपायमान नहीं होगी।

(३) शीर्षासनकी तीसरी रीति—पूर्व दोनों पद्धतियोंमें सिर अपने हाथोंके साथ लगा हुआ होता है। इस तीसरी पद्धतिका आसन करनेके लिये हाथोंके बीचमेंसे सिर अलग करके उस सिरको ऊपर उठानेसे यह तीसरे प्रकारका शीर्षासन सिद्ध होता है। पहिले प्रथम वा दूसरी रीतिका आसन

करके पश्चात् सिरको ऊपर उठा कर जितनी देर ऊपरही रख सकते हैं उतनी देर ऊपरही रखना। इस समय हाथके तळवे और सिरके बीचमें जितना अधिक अंतर हो, उतना अच्छा है। शीर्षासनके अन्य गुण इस रीतिमें प्राप्त होतेही हैं, और साथ साथ भुजाओंमें बहुत बळ प्राप्त होता है। परंतु कंठ–गरदन–की भार सहन करनेकी शक्ति इससे नहीं प्राप्त होती, क्यों कि इसमें सब भार भुजाओंपर ही होता है।



मुक्तहस्त वृक्षासन।

(४) शीर्षासनकी चौथी रीति—कोहनीसे अंगुलियोंके अंततक हाथ भूमिपर अलग अलग रखकर सिरको भूमिसे अलग ऊपर करके भुजाओंके सहारे पूर्ववत् शीर्षासन करनेसे यह रीति सिद्ध होती है। इसमें भी भुजाओंमें बडा बल आता है, परंतु गरदनका बळ बढता नहीं। जैसा पावोंपर खडा होते हैं, उसी प्रकार हाथोंपर खडा होनेसे भी एक प्रकारका आसन बन जाता है। इसका नाम "मुक्तहस्त वृक्षासन" है।

(५) शीर्षासनकी पांचवी रीति—केवल सिरपर ही खडा रहनेसे यह पंचम पद्धतिका शीर्षासन सिद्ध होता है। सिरके सिवाय और कोई भाग इस आसनमें जमीनको नहीं लगता। हाथ भी इस आसनमें जमीनको लगाने नहीं हैं जहां चाहे वहां ऊपरही रख सकते हैं। इस आसनसे कंठ-गरदनमें बडा बल प्राप्त होता है, क्यों कि केवल गर्दनकोही सब शरीरका बोज सहनेका अभ्यास होता है। इसको "कपालासन" भी कहते हैं।

(६) शीर्षासनकी छठी रीति—पांचवी रीतिके अनुसारही सिरपर खडा होना और दांई हथेली दांई ओर तथा बांई हथेली बांई ओर सिरसे थोडी दूर जमीन पर सहारेके लिये लगा सकते हैं।

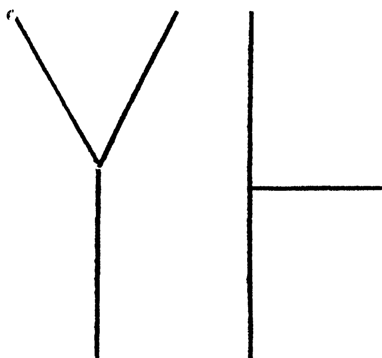
(७) शीर्षासनकी सातवी रीति—पूर्वोक्त छः प्रकारोंमेंसे किसी प्रकारका शीर्षासन करके दोनों पावोंकी दोनों एडियां चूतरोंको लगा देनेसे यह रीति सिद्ध होती है। इसको "अर्ध वृक्षासन" भी कहते हैं।

(८) शीर्षासनकी आठवी रीति—सप्तम रीतिके अनुसारही यह करना होता है, परन्तु पांवोंके हेर फेरसे यह आसन किया जाता है। अर्थात् एक पांव सीधा ऊपर रखकर दूसरे पांवकी एडी चूतरको लगानी तथा दूसरी बार इसको सीधा करके पहिले पांवकी एडी चूतरको लगानी।

(९) शीर्षासनकी नवम रीति—पूर्वोक्त प्रकार आसन करके दोनों पावोंसे पद्मासन करना अथवा पहिले

जमीनपर पद्मासन करके पीछेसे उस पद्मासनके साथ जो चाहिये सो शीर्षासन करना।

(१०) शीर्षासनकी दसवी रीति—पूर्वोक्त प्रकार अपनी इच्छानुसार शीर्षासन करके पश्चात् सब पांव भूमिके साथ समांतर रेखामें धरनेसे यह रीति सिद्ध होती है। इसमें भी एक पांव ऊपर और दूसरा समरेखामें रखनेसे कई भेद हो सकते हैं। पाठक युक्तिसे सोच सकते हैं। और अनेक नवीन प्रकार स्वयं कर सकते हैं। इसमें निम्न प्रकार पावोंको आगे पीछे किया जा सकता है—



शीर्षासनके विषयमें सावधानीकी सूचना।

शक्ति होनेपरभी यह शीर्षासन प्रारंभमें थोडी देरही करना उचित है। सिरमें रक्तका प्रवाह अधिक जानेके कारण जिनका मस्तिष्क इतना रक्तका प्रवाह सह नहीं सकता, उनको किंचित कष्ट होंगे। इस लिये इस आसनकी अवधि निम्न लिखित प्रकार नियत करनी योग्य है—

(१) पहिले चार दिन १५ निमेषोंसे ३० निमेष(सेकंद) तक अर्थात् अधिकसे अधिक आधे मिनिट तक किया जावे। (२) चार दिनके पश्चात् दो मिनिट करनेमें कोई हानि नहीं है। (३)आठ दिनके अभ्यासके पश्चात् पांच मिनिट करना योग्य है। (४) एक मासके पश्चात् दस मिनिट तक अच्छी प्रकार हो सकता है। (५) तीन अथवा छः मासके पश्चात् आधा घंटा करनेमें कोई हानि नहीं है। इस अवधिमें अपनी प्रकृतिके अनुसार न्यूनाधिक भी हो सकता है।

शीर्षासन करनेके पूर्व दो चार प्राणायाम और शीर्षासन करनेके पश्चात् भी चार पांच प्राणायाम करनेसे बहुत लाभ होते हैं। शीर्षासनके समय श्वास सम प्रमाणमें शांतिके साथ चलना चाहिये। प्रारंभमें थोडी देर भस्त्रा प्राणायाम करनेकी भी कईयोंकी पद्धति है। श्वास और उच्छ्वास ठीक प्रकार और शांतिके साथ करना आवश्यक है, शीघ्रतासे नहीं, यह भस्त्रा सेकंदमें एक होती है। शीर्षासनके समय भस्त्रा १५।२० बारसे अधिक करनेकी कोई आवश्यकता नहीं है। परंतु प्रथम अवस्थामें शीर्षासनके साथ प्राणायामका विचार न किया जाय तोही अच्छा है।

शीर्षासन करनेके समय शरीरके किसी भाग पर धोती या लंगोटका सख्त बंधन नहीं होना चाहिये। सब नसनाडि-योंमें रुधिर प्रवाह पूर्ण प्रमाणमें चलता रहने योग्य सब शरीर खुला चाहिये। लज्जा निवारणार्थ लंगोट रहे, तथा लंगोटके

और भी बहुत लाभ हैं, परंतु उनका बंधन इस समय थोडासा ढीला रहे ।

शीर्षासनसे लाभ ।

शीर्षासन यथाविधि नियमपूर्वक करनेसे निम्न लिखित लाभ हुए हैं—

(१) शीर्षासन करनेके पूर्व आप अपने पांवका रंग देख कर ठीक ध्यानमें रखिये । पश्चात् शीर्षासन कीजिये, ५।६ मिनिट तक शीर्षासन करने पर आप जब शीर्षासन छोड कर पांव पर खडे रहेंगे, तो उसी समय आपके ध्यानमें आजा-यगा कि, अपने पांवका रंग पहिलेकी अपेक्षा बहुत सफेद हुआ है । शीर्षासन करनेसे पांवका रक्त नीचे उतरनेके कारण पांव रक्त हीन हो गये थे, इस लिये वे श्वेत दीखने लगे हैं । परंतु आधे मिनिटमेंही, पांवपर खडा हो जाने पर, पांवमें नये रक्तका संचार होने लगता है, और एक मिनिटके अंदर पांवमें नया रक्त पहुंचता है; इस समय पांवोंका रंग शीर्षासन करनेके पूर्वकी अपेक्षा बहुत ही लाल हुआ प्रतीत होता है । दस पंद्रह मिनिट तक शीर्षासन करनेवालोंको यह अनुभव बहुतही स्पष्टताके साथ आसकता है । शुद्ध रक्तका रंग अत्यंत लाल होता है और अशुद्ध रक्त उतना लाल नहीं होता । पहिलेकी अपेक्षा पांवका रंग अधिक लाल होना सिद्ध करता है, कि पांवमें अधिक शुद्ध रक्त पहुंचा है, जो पहिले नहीं पहुंचता था । शुद्ध रक्तसे आरोग्य और अशुद्ध रक्तसे रोग

होता है । इससे निश्चय हो जाता है कि, पांवमें शुद्ध रक्त पहुंचनेके कारण पांवका आरोग्य बढ सकता है । और सब शरीरमें शुद्ध रक्त पहुंचनेके कारण सब शरीर अधिक आरोग्य पूर्ण होना भी संभवनीय है ।

(२) जब शीर्षासन किया जाता है तब पांवका रक्त नीचे पेटकी तर्फ उतरनेका भान सूक्ष्म रीतिसे होने लगता है, परंतु शीर्षासन छोडकर पांवपर खडा होतेही पांवमें शुद्ध रक्तका संचार होनेका भान अधिक स्पष्टताके साथ होता है; इतना ही नहीं, परंतु सूक्ष्म विचारसे देखा जाय, तो पांवमें अधिक उष्णता प्राप्त होनेका भी स्पष्ट अनुभव हो जाता है । शुद्ध रक्त जहां पहुंचता है वहांकी सर्दी हट जाती है, और नैसर्गिक उष्णता वहां आजाती है । हाथ पांव सुन होनेकी बीमारी जिनको है, उनको दिनमें ३।४ वार थोडी थोडी देर शीर्षासन करनेसे उक्त कारणही बडा लाभ पहुंचता है ।

(३) जब मनुष्य पांवपर खडा रहता है, तब पांवकी ओर रक्तकी अधिक गति होती है, इसी प्रकार सिरपर खडा होनेसे शीर्षसनके समय सिरमें तथा छातिमें रक्त अधिक आजाता है । शीर्षासन करनेके समय सिर, मुख और छातीका रंग अधिक लाल होता है और वह भाग अधिक पुष्ट भी दिखाई देता है, आंखमें भी अधिक रक्त पहुंचता है । इन भागोंमें अधिक रक्त पहुंचनेसे इनकी अधिक पवित्रता और अधिक पुष्टि हो जाती है । उक्त स्थानोंकी बीमारियां हट जाती

हैं। सिरका दर्द हट जानेका अनुभव कईयोंको हुआ है तथा छातिकी कमजोरी भी हट जाती है। आंख और कानके बहुतसे दोष न्यून हो जाते हैं। तथा मस्तिष्कमें रक्त पहुंचनेसे वहांका कार्य भी ठीक प्रकार होता है। बुद्धि और स्मरण शक्ति बढनेका भी अनुभव है।

(४) बोतल साफ करनेके लिये उसमें पानी रखकर उसको उलटा और सीधा किया जाता है, इससे बोतल साफ हो जाती है। इसी प्रकार शरीरमें जो रक्त है वह सब शरीर भर अच्छी प्रकार पहुंचनेसे सब शरीर शुद्ध और आरोग्य-पूर्ण हो जाता है। मनुष्य सदा पांवपर खडा होनेके कारण रक्तकी गति पांवकी ओर स्वभावतः अधिक होती है। हृदय रक्तको ऊपर खींचता है और सब शरीरमें पहुंचाता है। इसी हृदयकी यह दधुक हृदय स्थानमें हो रही है। रात दिन इस हृदयको पांवोंसे सब रक्त ऊपर खींचनेकी बडी मेहनत होती है। शीर्षासन करनेके समय हृदयको उक्त कारणही विश्राम मिलता है अर्थात् रक्त खींचनेका कार्य करनेकी आवश्यकता नहीं होती; स्वयं स्वभावतः ही सब शरीरसे रक्त हृदय तक आता रहता है। हृदयको इस प्रकार विश्राम मिलनेसे हृदयकी शक्ति बढती है और हृदयकी शक्ति बढनेका तात्पर्य आयुष्य बढनाही है। इसका अर्थ यह नहीं है कि कोई मनुष्य दिनमें घंटेसे अधिक शीर्षासन करे। दिनमें घंटा भर करना पर्याप्त है। हृदयके विकारसे जो बीमार हैं उनके लिये अधिक करनेसे हानिकी संभावना है।

(५) शीर्षासनके समय पांवका रक्त—सिर और छातिमें उतर जानेसे और फिर खडा होनेपर पांवोंमें वेगसे रक्त उतरनेसे सब शरीरकी नसनाडीमें रक्त पहुंचता है और इस कारण सब शरीर शुद्ध हो जाता है। प्रतिदिन यह आसन आधा घंटा करनेसे, प्रतिदिन बोतल अंदरसे धोनेके समान, शरीर अंदरसे मानो, धोया जाता है।

(६) हृदय सब शरीरसे अशुद्ध रक्त खींचकर अपने अंदर लाता है और पश्चात् हृदयसे वह अशुद्ध रक्त फेंफडोंमें जाकर वहां शुद्ध प्राणवायुके साथ मिलने और संयुक्त होनेके कारण शुद्ध बनता है। पश्चात् वहांसे शुद्ध रक्त फिर हृदयमें आकर वहांसे सब शरीरमें भेजा जाता है। यह कार्य सदा चल रहा है और इसी कार्य पर मनुष्यका जीवन अवलंबित है। जिसका हृदय बलवान होता है, उसके शरीरका सब अशुद्ध रक्त, हृदयकी पूर्वोक्त क्रिया ठीक होनेके कारण, सर्वदा ठीक शुद्ध होता है। परंतु जिसका हृदय किंचित् कम जोर होगा, उसके हृदयसे सब शरीरसे संपूर्ण रक्त ऊपर खींचनेका कार्य यथावत् नहीं होता है, इसी कारण उसका रक्त अशुद्ध रहता है और वह नाना प्रकारकी बीमारियोंका शिकार बनता है। शीर्षासन करनेसे उसके हृदयमें सब रक्त विना मेहेनत पहुंचनेसे रक्त शुद्ध होनेके कार्यमें बडी सहायता होती है। आजकलके दिनोंमें जहां चा, सिगरेट, मद्य, काफी, आदि घातक पदार्थ सर्वत्र फैले हैं, चिंता बढ गई है और शांति कम हो रही है, उस समय प्रायः सर्वत्र हृदयकी कमजोरी चारों

ओर दिखाई देती है। ऐसी अवस्थामें योग्य प्रमाणमें शीर्षासन करनेसे बडे लाभ हो सकते हैं।

(७) पेटके आंतोंका बोझ पेटके बाह्य स्नायुओंपर पडता है और कईयोंका पेट कद्दुक समान अथवा घडेके समान दिखाई देता है। शीर्षासन करनेके समय ही ऐसा प्रतीत होता है कि, नाभिके निचले स्नायुओंपरका अंदरका बोझ हट गया है और उनको मूलरूपमें आनेके लिये विश्राम मिल रहा है। नाभिके निचला पेट भी अंदरसे खाली होनेके समान हलका प्रतीत होता है और इस कारण आंतोंमें अनुकूल गति होनेको अवसर मिलता है। आंतोंमें किसी स्थान पर अपानवायु रुका हो, तो इस समय वह अपने मार्गसे चला जाता है, और पेटको आराम प्राप्त होता है। इसी प्रकार शीर्षासन छोडकर पुनः पूर्ववत् खडा होनेपर ढकार आकर कोष्ठगत वायुका बाहिर निःसरण होकर स्वस्थता प्राप्त होती है।

(८) पीठकी रीढमें मेरुदंडके भीतर सुषुम्ना प्रवाह है। वह सदा मस्तिष्कसे नीचेकी ओर बहता रहता है। शीर्षासनमें सिरपर उलटा खडा होनेके समय वही प्रवाह सिरकी ओर होता है। इसीसे बुद्धि स्मरणशक्ति आदि बढनेका संभव होता है।

(९) वीर्य जलरूप होनेसे उसका प्रवाह निम्न गतिसे होता है, इस लिये वीर्यकी सब नाडियां निम्न गतिसे प्रवाहित होतीं हैं। शीर्षासनमें उनकी ऊर्ध्वगति होनेके कारण इस आसनसे वीर्य दोष हटनेका अनुभव आता है। जिनको वीर्य

पतन होनेकी बुरी आदत है उनको अन्य उपायोंके साथ इस आसन करनेसे बहुतही लाभ होंगे। एक मासमें वीर्य स्थिर होनेका अनुभव आता है। सेंकडों तरुणोंके अनुभवकी यह बात है और इसमें कोई अत्युक्ति नहीं है, शरीर भेदके अनुसार न्यूनाधिक समयमें लाभ होनेका अनुभव होगा। परंतु लाभ होता है इसमें कोई शंका नहीं है।

(१०) शीर्षासन नियमपूर्वक योग्य रीतिसे करनेपर दो, मासोंमें जठराग्नि प्रदीप्त होता है, भूख बढने लगती है। भूखके अनुसार योग्य सात्विक पदार्थ परिमित प्रमाणमें खानेसे शरीरकी पुष्टि होती है। भूख लगनेपर योग्य भोजन न खानेसे शरीर कृश होने लगता है। इस समय गायका दूध, घी, मक्खन आदि योग्य प्रमाणमें सेवन करनेसे शरीर का स्वास्थ्य अच्छा होता है।

(११) एक वर्ष नियम पूर्वक विधियुक्त शीर्षासन करनेसे सिरके श्वेत बालभी काले होने लगते हैं।

(१२) छः मास तक नियम पूर्वक ठीक प्रकार शीर्षासन करनेसे चमडेका सिकुडना, जो वृद्धापकालका चिन्ह है, दूर हो जाता है, और अधिक अभ्यास करनेपर वृद्धावस्थामें भी जवानीका अंगचापल्य प्राप्त होता है।

(१३) शीर्षासनके समय नेत्रकी पुतली ऊपर नीचे, दाईं ओर तथा बाईं ओर करनेसे, गोल आकारमें घुमानेसे, तथा नासाग्रपर अथवा भ्रूमध्यमें दृष्टि रखने और किंचित् काल दूरके पदार्थपर दृष्टि रखनेसे दृष्टिदोष दूर होते हैं। आयनक

लगानेवालोंको वारंवार आयनकका नंबर बदलना नहीं पडता और न लगानेवालोंको लगानेकी आवश्यकता नहीं होती।

(१४) मुखकी अरुची, कंठदोष, गल पडने, छातीकी कमजोरी, पेटका अस्वास्थ्य, यकृत और प्लीहाकी शिकायत आदि सब इस आसनसे दूर होता है। परंतु गुणका अनुभव होनेके लिये देरी लगती है क्यों कि रक्तशुद्धिद्वारा उक्त अपाय दूर होते हैं, इस लिये शनैः शनैः आराम होता है।

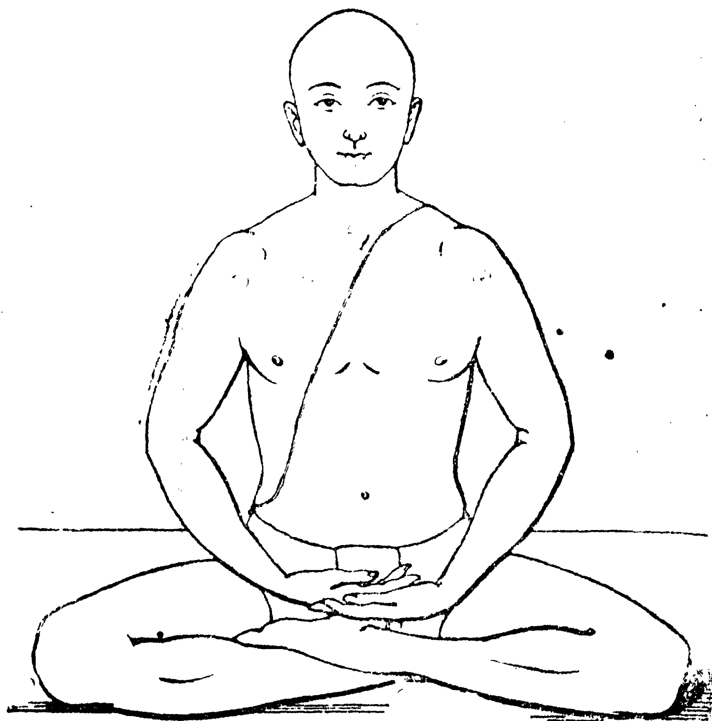
(१५) छः वर्षोंकी ऊमरके बच्चेसे लेकर ७० वर्षके वृद्ध मनुष्य तक विविध ऊमरवाले मनुष्योंपर इस आसनके इष्ट परिणाम हमने देखे हैं। सर्वत्र योजना पूर्वक अपनी शक्तिके अनुसार अभ्यास करनेसे लाभ हुआ है। प्रतिदिन थोडी देर शीर्षासन करनेसे मिर्गीका बीमार भी दो तीन मासमें ठीक हुआ था। परंतु इस विषयमें अधिक अनुभव नहीं है।

अंतमें इतनाही कहना है कि इस विषयका अनुभव डाक्टर और वैद्य लेंगे तो बहुत अच्छा होगा, क्यों कि उनको शारीर शास्त्रका अच्छा ज्ञान होता है और विचार करके उनकोही ठीक प्रकार पता लग सकता है कि, कौनसा रोग किस प्रकार और किस अवस्थामें ठीक होना संभव है और कौनसा ठीक नहीं हो सकता।

साधारण दृष्टिसे जो अनुभव हैं, ऊपर दिये हैं, आगेका कार्य सुविचारी डाक्टरोंका और शारीर शास्त्रके ज्ञानियोंका है। आशा है कि वे आपनी संमति अनुभवके साथ प्रसिद्ध करेंगे।

यह आसन योग्य प्रमाणमें स्त्रीपुरुषोंको करने योग्य है।

(१७) सिद्धासन।



बाये पांवकी एडी गुदा और अंडकोशके बीचमें दृढतासे लगाईये; और दाहिने पांवकी एडी इंद्रियके ऊपरके भागमें दृढ लगाइये। ठोढ़ी हृदयमें कंठमूलसे थोडी दूर हृदयपर लगाकर स्थिर और सीधा शरीर करके पलकों और आंखोंको

न हिलाते हुए भौंहोंके बीचमें दृष्टिको स्थिर कीजिये। हाथ चाहे घुटनोंपर रखिये चाहे मध्यमें रखिये। दोनों पांव एक दूसरेपर ऐसे आजांय कि दोनोंकी संधिस्थानकी हड्डी एक दूसरेपर आजाय। इस आसनके अभ्याससे कामवासना कम होती है और अखंड ब्रह्मचर्य सिद्ध होता है, इस कारण यह आसन गृहस्थियोंको थोडा और अन्य आश्रमवासियोंको अधिक करना उचित है। इसके फल निम्न प्रकार हैं—

(१) भौंहोंके बीचमें दृष्टि स्थिर रहनेसे मनकी एकाग्रता हो जाती है और प्रकाशदर्शन होता है। नासिकाके अग्रभाग पर दृष्टि स्थिर करनेसेभी उक्त सिद्धि थोडी देरीसे हो जाती है। जो अपनी दृष्टिको भ्रूमध्यमें अथवा नासिकाग्रपर स्थिर नहीं कर सकते, वे किसी बाह्य बिंदुपर भी स्थिर कर सकते हैं। इससे सिद्धिमें थोडी देरी लगेगी।

(२) सबसे प्रथम इस आसनपर केवल बैठनेका अभ्यास करना उचित है। कोई शरीरका भाग बिलकुल न हिलाते हुए जितनी देर बैठनेका अभ्यास होगा उतना मन एकाग्र करनेके लिये अधिक सहाय्यता होगी। सब शरीर और सब इंद्रिय यदि एक घंटाभर स्थिर रहेंगे और इस समय मनके व्यापारभी थोडी देर स्तब्ध किये जांयगे, तो आत्मशक्तिका स्फुरण होनेके आनंदका अनुभव आता है। यह अभ्यास गाढ अंध-कारमें करने तथा अत्यंत शांतिके समय करनेसे अनुभव

जलदी आता है। इस समय आंखके सन्मुख जो प्रकाश दीखते हैं उनमें मन स्थिर करना योग्य है।

(३) गुदा, शिस्न और आसपासकी सब नसनाडी ऊपर आकर्षित करनेसे वीर्य स्थिर हो जाता है। गुदाको मनसेही अंदर आकर्षित कीजिये तथा शिस्नके समेत सब मूलस्थानको ऊपर खींचनेका अभ्यास कीजिये। यह अभ्यास, प्राणको स्तब्ध करके अथवा प्राणकी गतिको न रोकते हुए परंतु अत्यंत शांतिके साथ प्राणको चलाते हुए किया जा सकता है। वीर्यकी गतिको अपने आधीन करनेके लिये यह अभ्यास अत्यंत उपयोगी है। एक मासके अंदर वीर्य स्थिर होनेका अनुभव होता है। सिद्धासन के विनाभी यह अभ्यास किया जा सकता है और उससे हरएकको निःसंदेह लाभ होता है।

(४) पृष्ठवंशको सीधा रखकर ठोढीको कंठमूलमें लगानेके अभ्याससे मस्तिष्ककी शक्ति बढती है, परंतु इसका लाभ सालभरके पश्चात् अनुभवमें आता है।

(५) सिद्धासन लगाकर नाभिके समेत सब पेटको तथा गुदा समेत शिस्नको भी ऊपर आकर्षित कीजिये। अच्छी प्रकार करनेसे पेट पसलियोंमें चला जायगा और पेटका स्थान खाली होगा। जितनी देर इस प्रकार आप बैठ सकेंगे उतना लाभ

होगा। प्राणकी गति बंद करकेही ऐसा बैठना होता है, इसलिये स्तब्धवृत्ति प्राणायाम जितनी देर होता होगा उतनी देर ही इस प्रकार बैठना संभव है। घडी लगाकर एक या आधा मिनिट बैठ जाइये और इसप्रकार दस पांच बार कीजिये। भूख बढ जायगी, हाजमेका दोष दूर होगा, और पेटकी शिकायतें नष्ट हो जायंगी।

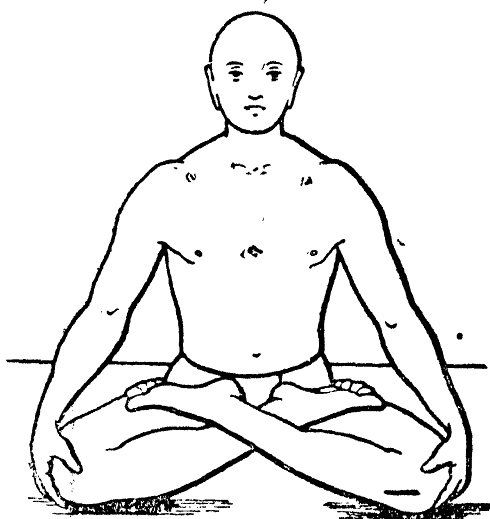
(६) प्राणायाम करनेके समय निम्न बातोंका अवश्य ख्याल करना चाहिये। पूरकके समय मूल स्थानकी नस नाडिया ऊपर आकर्षित करनी चाहिये, कुंभकके समय ठोढीको कंठमूलमें लगाना चाहिये, रेचकके समय नाभिके समेत सब पेटको अंदर आकर्षित करना चाहिये और बाह्य कुंभक करना हो तो उस समयमें भी पेटको अंदर ही खींचना चाहिये। यदि कीसीको इतना करना कठिण प्रतीत होता हो, तो वह थोडा थोडा अभ्यास बढावे; इस अभ्याससे प्राणकी स्वाधीनता होती है।

अभ्यासके दिनोंमें सात्विक भोजन तथा अन्य पथ्य रखने चाहिये। भूख अधिक लगनेपर गायका दूध पीना लाभदायक है, पकोडे आदि चटपटे पदार्थ हानिकारक हैं।

स्त्रियोंके लिये यह आसन करना उचित नहीं परंतु जो ब्रह्मचर्यसे आयु व्यतीत करना चाहती हैं उनके लिये मना नहीं है। पुरुष अपने लिये योग्य प्रमाणमें कर सकते हैं।

---

(१८) पद्मासन ।



दाहिना पांव बाई जंघापर और बायां पाव दाहिनी जंघापर रखिये । दोनों पांव दोनों जंघाओंपर ठीक प्रकार आजांय । पश्चात् बायां हाथ बांये घुटनेपर और दांयां हाथ दांये घुटनेपर रखिये । पीठ, कमर, गला, सिर, पृष्ठवंश सीधा समरेखामें रखिये, चाहे अपनी दृष्टि भ्रूमध्यपर अथवा नासिकाके अग्रपर रखिये, किंवा किसी बाह्य बिंदुपर भी रख सकते हैं । इसको पद्मासन किंवा कमलासन कहते हैं ।

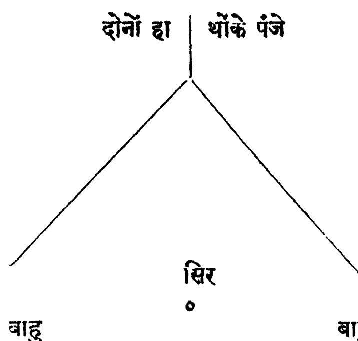
कईयोंकी जंघायें इतनी मोटी होती हैं कि, उनके दोनों पांव दोनों जंघाओंपर किसी रीतिसे भी आ नहीं सकते ।

ऐसे लोग आरंभमें इस आसनको कर नहीं सकते। इनको उचित है कि, वे निम्न रीतिसे "अर्ध-पद्मासन" ही करें और पश्चात् पद्मासन करनेका यत्न करें।

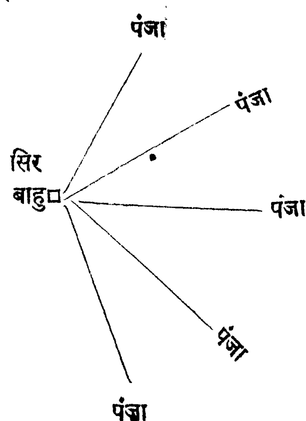
एकही पांव दूसरे पांवकी जंघापर रखनेसे अर्धपद्मासन होता है। इसमें दूसरे पांवकी एडी गुदा और अंडकोशके बीचमें लगाना अच्छा है। पांवोंके हेरफेरसे दोनों ओरके आसन उक्त प्रकारही बन सकते हैं। इस आसनसे अर्थात् पूर्ण पद्मासनसे पांवोंकी नसनाडियां शुद्ध होतीं हैं, और ध्यानादि के लिये एकही आसनपर अधिक देर तक बैठना सुगम होता है। पद्मासनमें बैठकर पेटको पसलियोंमें ऊपर खींचनेसे और कुछ देर वहा ऊपर ही रखनेसे पचनशक्ति बढ जाती है और पेटके दोष दूर होते हैं। इस प्रकार पांच मिनिटतक करनेसे भूख अच्छी लगती है और पेटका आम-वायु दूर होता है। पद्मासनमें बैठकर कंठमूलमें ठोढी लगा-नेसे और पृष्ठवंश सीधा रखनेसे मस्तिष्कका मज्जाप्रवाह ठीक होनेमें सहायता होती है, इसी कारण इससे विचार शक्ति बढती है।

कई लोग इस पद्मासनको करनेके समय हाथ बीचमें भी रखते हैं, और कई अपनी छातिके साथ भी रखते हैं। कई तीसरे अपने हाथोंको ऊपर करके सिरके सीधे ऊपर लेजाकर ऊपर एक दूसरेसे मिलाकर हाथ जोडकर नमस्कार करते हैं, और हाथ वैसेही वहां रखते हैं। इसको "पर्वतासन" कहते हैं। इससे पेट और छातिके स्नायुओंमें अच्छी प्रकार

ऊपरका खिंचाव आता है, और उक्त स्नायुओंको लाभ पहुं-
चता है। इसको पर्वतासन इसलिये कहते हैं कि इसकी शकल



पर्वत जैसी बनती है। दो चार मिनिट इस आसनमें बैठ जानेसे छाती और पेटके स्नायुओंमें अच्छी प्रकार खिंचाव होनेसे वहांका आरोग्य प्राप्त होता है। इससे अधिक लाभ प्राप्त होनेके लिये उक्त स्नायुओंमें मनसेभी अधिक खिंचाव करनेका यत्न करना चाहिये। और कई लोग पद्मासन में बैठकर हाथोंसे "ताडासन" करते हैं। हाथ ऊपर, नीचे, बीचमें और



तिरछा करके सीधा बाहिर खींचते हैं। और ताडासनमें कही रीतिके अनुसार पंजोंको मिटाकर खोलनेका व्यायाम करते हैं। इस रीतिसे पावोंसे पद्मासन होता है और साथ साथ हाथोंसे ताडासनभी होता है। एक ही समयमें विभिन्न आसनोंके भागोंको मिलानेसे बडे लाभ होते हैं। ताडासनके हाथोंका खिंचाव दोनोंका तथा एक एकका भी हो सकता है।

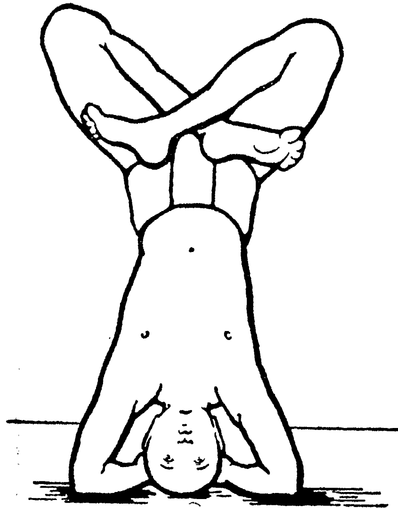
पद्मासन में बैठकर दाया हाथ बांये घुटनेपर रखिये और अपना धड बाईं ओर घुमाइये, चाहे बायां हाथ जमीनपर सहारेके लिये रखकर अपनी छाती जितनी पीठकी ओर जा सकती है उतनी घुमाइये। ऐसा करनेसे कमर और पेटके स्नायुओंपर अच्छीप्रकार खिंचाव आजायगा। छाति जितनी पीछेकी ओर जाना संभव है, उतनी जानेके पश्चात् आप वहांही ठहर जाइये। यहां स्मरण रखिये कि पद्मासनके पांव जहांके वहांही स्थिर रहने चाहिये और कमरके ऊपरकाही भाग घुमाना चाहिये। इसी प्रकार आप दूसरी ओर भी घुमा सकते हैं। गर्दन भी पीठकी ओर जितनी अधिक घुमाई जा सकती है उतनी अधिक घुमानी चाहिये। पेटको ठीक करनेके लिये यह आसन अत्यंत सुगम है और अति लाभदायक है। धड घूमाने अर्थात् धडका भ्रमण करने के कारण इसको "भ्रमरासन" कहते हैं। इसके करनेसे पेटके बहुतसे दोष दूर होते हैं।

पद्मासन के समय मूलस्थान अर्थात् गुदा और शिस्नके आसपास की नस नाडियोंको ऊपर खींचनेसे वीर्यदोष दूर हो जाते हैं। पर्वतासन और भ्रमरासन करनेके समयमें भी यह ऊर्ध्व आकर्षण विधि करनेसे उक्त लाभ होते हैं। यद्यपि यह आसन सुगम है तथापि इसका अत्यंत महत्व है और यह अत्यंत लाभदायक भी है।

इस आसनमें ठोढी कंठमूलमें डंट कर लगानेसे बहुत आरोग्य मिलता है। इससे स्त्री पुरुष अपना आरोग्य बढा सकते हैं।

---

(१९) ऊर्ध्व पद्मासन ।



पूर्वोक्तप्रकार शीर्षासन करके पावोंसे पद्मासन ऊपर ही ऊपर करनेसे " ऊर्ध्व पद्मासन " हो जाता है । इसका फल शीर्षासनके समान ही है। पांवोंके हेरफेरसे इसके दो भेद होते हैं। तथा शीर्षासनके प्रत्येक भेदके साथ भी यह किया जाता है, इस कारण इसके विविध भेद होते हैं, जो पाठक स्वयं कर सकते हैं। ऊर्ध्व पद्मासन करके पश्चात् वही पद्मासनके पांव जैसे के वैसे शनैः शनैः नीचे लाकर भूमिको घुटनोंका स्पर्श करें और पश्चात् उनको ऊपर उठाकर पूर्ववत् ऊर्ध्व पद्मासन करें। इस अभ्याससे शरीरका बल बहुत बढ सकता है। इसमें पद्मासन खोलना नहीं है। पद्मासनके साथही करना।

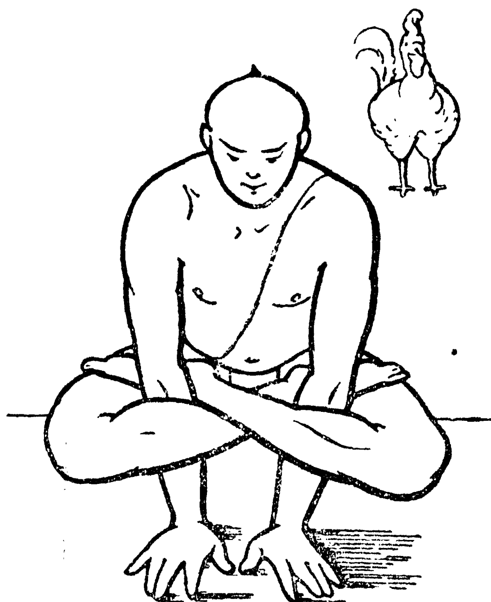
---

२० उत्थित पद्मासन ।



पूर्वोक्तप्रकार पद्मासन करके दोनों हाथ दोनों ओर भूमिपर रख कर सब आसनको भूमिसे ऊपर उठानेसे यह आसन बनता है। जितना ऊपर उठाया जाय उतना अधिक लाभ होता है। इसमें पूर्वोक्त पद्मासनके सब लाभ होते ही हैं और साथ साथ हाथों का बल बढ जाता है। इसलिये यह आसन निर्दोषता कारक और बलवर्धक भी है। इसको " दोलासन, अथवा लोलासन " भी कहते हैं।

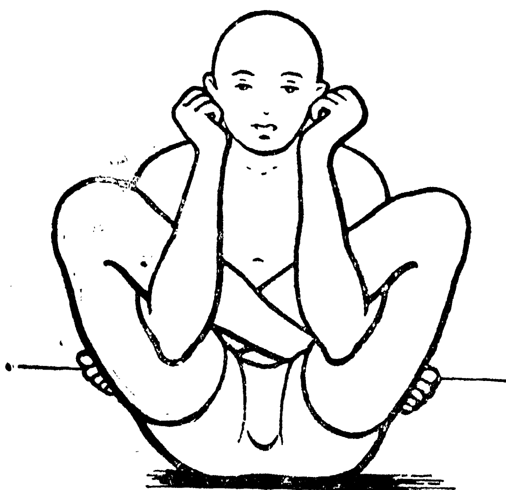
(२१) कुक्कुटासन।



पूर्वोक्त प्रकार पद्मासन करके दोनों पांवोंके पंजे भीतर रहें ऐसे दोनों जांघ और पिंडरियोंके बीचमेंसे दोनों हाथ कोहनींतक नीचे निकालके, पंजे भूमिपर टिकाके, उनपर सब शरीर तोलके रखना, इसको " कुक्कुटासन " कहते हैं।

पद्मासन और उत्थित पद्मासनके सब लाभ इससे सिद्ध होते हैं। जठराग्नि प्रदीप्त होता है, आलस्य दूर होकर शरीरमें फूर्ति आती है और नाडीशुद्धि होनेमें सहायता होती है।

(२२) गर्भासन।

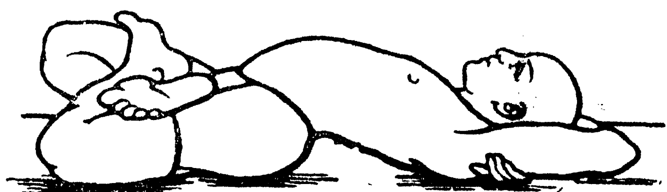


प्रथम कुक्कुटासन करके तत्पश्चात् अपने हाथोंकी अंगुलि-योंसे अपने कान पकडनेसे गर्भासन होता है।

तथा अपने कानोंको न पकडते हुए अपने हाथोंकी अंगु-लियां एक दुसरेके साथ मिलाकर अपना गला पीछेसे पकडनेसे "उत्तान कूर्मासन" बनता है।

दोनों आसनोंका फल आंतोंके विकार दूर करके पेटकी शुद्धता करना है। इससे शौचशुद्धि और क्षुधा प्रदीपन होता है।

(२३) मत्स्यासन।



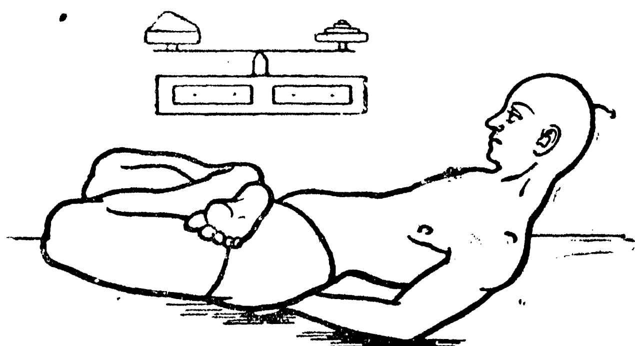
पूर्वोक्तप्रकार पद्मासन करके पालथी जैसी की वैसी रखके चित्त होकर सो जाना, फिर दोनों हाथ माथेपरसे लेकर बाये हाथसे दाहिना और दाहिने हाथसे बाया भुजदंड अथवा बाहु पकडना, इसको "मत्स्यासन" कहते हैं। इसमें कमरका भाग जमीनपर लगना नहीं चाहिये, इस हेतु पेटको ऊपर उठाना और कमरके नीचे जमीन तक जितना अधिक अंतर रखा जाय उतना रखना चाहिये। इस समय ठोढी कंठमूल में डंटकर लगानेसे रक्त शुद्धि होकर शरीरका बडा आरोग्य सिद्ध हो सकता है। इस लिये अभ्यासी लोग इसे अवश्य करें और लाभ उठावें।

इससे शौचशुद्धि होनेमें सहायता होती है, अपानवायुकी निम्नगति होती है और इस कारण मलावरोध दूर होता है। यह आसन थोडा जलपान करके करनेसे लाभ विशेष होता है। शौचशुद्धि करनेके कारण आंतोंके अनेक रोगोंका नाश इससे होता है।

विशेष लाभके लिये दस पंध्रह मिनिटतक इसको करना आवश्यक है। किंचिन्मात्र करनेसे वैसा लाभ होनेकी इच्छा

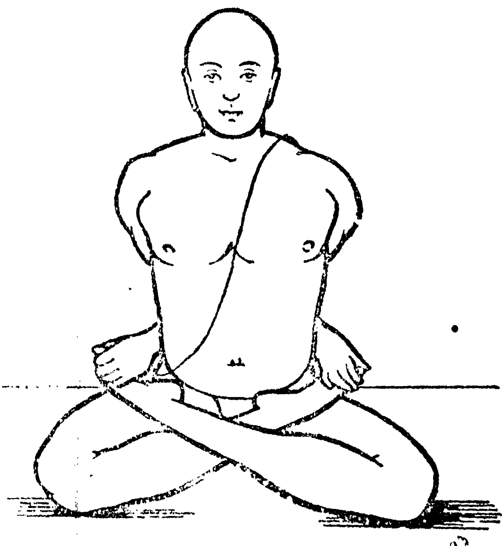
करना व्यर्थ है। इस आसनसे बडी देरतक जलमें रहना संभव होता है, क्योंकि मनुष्य इस आसनमें रहनेतक डूबता नहीं। जिस समय तैर कर मनुष्य थक गया हो, उस समय जलमें ही इस आसनको करके जलपर स्थिर हो जाय, तो १०।१५ मिनिटों में उसको फिर तैरनेका बल आजाताहै। इस लिये इसको मत्स्य का आसन बोलते हैं।

(२४) तोलांगुलासन।



पूर्वोक्त प्रकार पद्मासन करके चूतरोंके नीचे हाथकी मुष्टियां धर कर उन मुष्टियोंपर तराजूके समान सब शरीर का तोल संभालनेसे यह आसन बनता है। इस समय भी ठोढी कंठ मूलमें लगानेसे बडा लाभ हो सकता है।

(२५) बद्ध पद्मासन।



दाहिना पांव बाईं जंघापर और बायां पांव दाहिनी जंघा-पर ऐसी रीतिसे रखना कि उनकी एडियें पेटके नीचेके भागको सटके बैठें। पश्चात् दोनों हाथ पीछे फेरके दाहिने पांवका अंगूठा दाएं हाथके और बाएं पांवका अंगूठा दूसरे हाथके तर्जनी और दो अंगुलियोंकी चुटकीमें पकडना, फिर ठोढी हृदयमें लगाके दबाना, नंतर नासिकाके अग्रभागपर दृष्टि स्थिर करनी, इसको " बद्ध पद्मासन " कहते हैं।

इस आसनसे अनेक व्याधियोंका नाश होता है। विशेषतः पेटके संबंधकी बहुतसी व्याधियां इस आसनके करनेसे दूर होती हैं। पेटका फुलना, बद हजमी, अपचनके अनेक दोष, पेटका दर्द, परिणामशूल, आमवात, कब्जी–बद्धकोष्ठता, खट्टे ढकार आदि सब इसके करने से दूर होते हैं। परंतु केवल मिनिट दो मिनिट करनेसे उक्त लाभ प्राप्त करनेकी इच्छा करना व्यर्थ है। कमसे कम आधा घंटा इस आसनपर स्थिर बैठनेका अभ्यास करना चाहिये। तब गुणका अनुभव होने लगता है। घंटा डेढ घंटातक बैठनेसे और भी अधिक लाभ होते हैं। इस प्रकार प्रतिदिन तीनवार चार छे मास तक अभ्यास करनेसे स्थिर रूपसे आरोग्य प्राप्त होता है।

इस आसनसे कमरके स्नायु, तथा पांवकी नस नाडियां निर्मल हो जातीं हैं, इसलिये वहांका आरोग्य प्राप्त होता है। वारंवार पीठको दबाकर बैठनेके कारण पृष्ठवंशके मेरुदंडमें टेढापन आजाता है, वह इससे दूर हो जाता है और उसमें सरलता अथवा समता आती है। इसलिये पृष्ठवंशका मज्जा-प्रवाह इस आसनके करनेसे ठीक होता है अर्थात् मज्जातंतुके रोग इस आसनसे क्रमशः दूर होते हैं। पृष्ठवंशके टेढेपनके कारण मनुष्यमें असंख्य बीमारियां होतीं हैं। गुदासे लेकर मस्तकतक के विविध भागोंमें इन मज्जातंतुओंके बिगड जानेसे विविध बीमारियां होना संभव होता है। इस लिये

सब अवस्थाओंमें सब आयुवाले लोगोंको यह आसन लाभदायक होता है।

कई मनुष्योंके हाथ पीछेसे पांवके अंगुठोंतक पहुंचतेही नहीं, इसका कारण इतना ही है कि उनकी नस नाडियां अशुद्ध रहतीं हैं। वारंवार प्रयत्न करनेपर एक मासमें पावके अंगुठे पीछेसे हाथमें आने लगते हैं। तब तक उनको एक हाथसेही पीठकी ओरसे एक पांवका अंगूठा पकडनेका यत्न करना चाहिये। एक हाथसे जो अंगूठा पकडना है व दाये हाथसे दाहिने पांवका और बांये हाथसे बांये पांवका ही अंगुठा पीठकी ओर से पकडना चाहिये। इस प्रकार केवल एक हाथसे एक पांवका अंगुठा पीछेसे पकडनेसे "अर्ध-बद्ध पद्मासन" होता है। यद्यपि इससे कुछ विशेष लाभ नहीं होता है, तथापि तैय्यारी की दृष्टिसे इतना करना लाभदायी ही है। अर्ध-बद्ध-पद्मासन करना हो तो क्रमशः दोनों ओरका अवश्य हेरफेरसे करना चाहिये। तथा पूर्णबद्धपद्मासनभी पांवों और हाथोंके हेरफेरसे करना चाहिये। इस प्रकार करनेसेही योग्य लाभ पहुंचता है।

इस आसनमें बैठकर गुदा और शिश्नस्थानकी नस नाडियोंका ऊर्ध्व आकर्षण करनेसे वीर्यदोष दूर हो जाते हैं। श्वास और उच्छ्वास की सम प्रमाणमें परंतु मंद गति करनेसे फेंफडोंका बल बढता है। इस समवृत्ति प्राणायाममें श्वास

और उच्छ्वास दीर्घ, मंद और सम होने चाहिये। इस समय श्वासोच्छ्वासकी गति अंकों या मंत्रोंके जपसे नाप सकते हैं। इस समवृत्ति प्राणायामपर मन स्थिर करनेसे चित्त एकाग्र करना सुगम हो जाता है।

बद्ध पद्मासन के साथ समवृत्ति प्राणायाम करनेसे प्राथमिक अवस्थाका क्षयरोग, पांडुरोग, पेटकी अशक्तता तथा दवाइयोंसे ठीक न होनेवाले नित्याजीर्ण जैसे रोग भी छः मासमें ठीक होते हैं। इस विषयमें कई रोगियोंपर अनुभव लिया है इसलिये निर्भय होकर यहां लिखा है। परंतु जिन रोगियोंपर यह प्रयोग किया वे प्रतिदिन तीन चार वार और प्रतिसमय एक आध घंटा इस आसनका अभ्यास किया करते थे। क्षयरोगीके फेंफडोंमें क्षयके क्रिमी भी डाक्टरी परीक्षासे निश्चित हुए थे, परंतु योग्य पथ्यके साथ उक्त आसन करनेसे प्रथम उनका पेट सुधर गया, और पश्चात् अन्य दोषभी दूर होते गये। शुद्ध वायु सेवन, सात्विक लघुभोजन, तथा अन्य आहार व्यवहार भी योगशास्त्रके अनुसार ही रखा गया था।

बहुत दिनके ज्वरके पश्चात् तिल्ली बढती और यकृत् बिगडता है। इस दोष के लिये यह बद्ध पद्मासन उत्तमोत्तम है। यदि खानपानके पथ्यके साथ ये रोगी इस आसनको करें तो निःसंदेह गुण आवेगा। रोगकी न्यूनाधिक तीव्रताके

अनुसार गुण आनेमें न्यूनाधिक समय लग जाना स्वाभाविक ही है।

भोजन करते ही इस आसनको करना नहीं चाहिये। ऐसा होनेसे पचनके कार्यमें बाधा होती है। खाली पेट रहनेकी अवस्थामें करना ही अच्छा है। भोजनके बाद तीन घंटेके पश्चात् करनेमें कोई दोष नहीं है। विशेषतः रोगीको इस बातका ख्याल अवश्य रखना चाहिये।

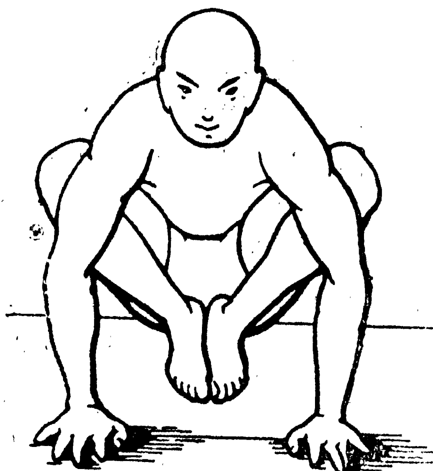
ठोढी कंठमूलमें न लगाते हुए दांई और बांई ओर घुमानेसे गलेकी नस नाडियोंकी शुद्धि हो सकती है। इस समय सब प्रकारके कंठबंध करनेसे कंठस्थानका आरोग्य सिद्ध हो सकता है।

श्वास अंदर ले जानेके समय मूलस्थानकी नाडियोंका ऊर्ध्व आकर्षण करना तथा श्वास बाहिर छोडनेके समय पेटको अंदर ले जाना तथा नाभिस्थानके सूर्य चक्रपर मनका संयम करनेसे पेटका आरोग्य शीघ्र प्राप्त होनेका अनुभव है। नाभिके किंचित् ऊपर सूर्यचक्र है। उच्छ्वासके समय पेट जब अंदर जाता है तब उसपर दबाव आता है और उसकी शक्ति बढ जाती है। मनद्वारा उक्त क्रिया करनेसे अधिक लाभ होता है।

इस समय ठोढी कंठमूलमें दबाकर लगानेसे कंठस्थानके निर्कंठमणिकी शुद्धता होती है और उसके द्वारा रक्तशुद्धि होनेसे अपूर्व आरोग्य मिलता है।

---

(२६) बकासन।



दोनों हाथोंके पंजे जमीनपर रखकर, अपने दोनों घुटनोंको अपने बाहुओंके सहारे ऊपर उठाकर, पांवोंसमेत सब शरीर ऊपर उठाइये। केवल हाथोंके पंजे जमीनपर रहें और शेष शरीर ऊपर अंतरालमें रहे। इसको "बकासन" कहते हैं।

घुटनोंको अंदर रखकर भी यही आसन करनेका दूसरा प्रकार है। तथा एक घुटना अंदर और एक बाहिर, इस प्रकार हेर फेरसे भी यह आसन किया जाता है। सब शरीर केवल हाथोंके पंजोंपर रहना चाहिये, यह बात इसमें मुख्य है। इससे हाथोंमें बल आता है।

(२७) लोलासन।



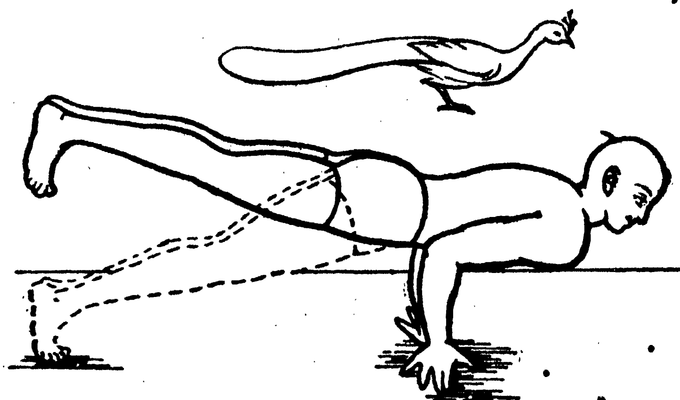
बकासनके अनुसार दोनों पंजोंको जमीनपर रखकर केवल उनपरही सब शरीरको संभालकर ऊपर उठानेसे लोलासन होता है। बकासनमें पांवोंका झुकना पीछे की ओर होता है और इसमें आगेकी ओर होता है। दोनोंका फल समान ही है। इसका दूसरा नाम "तोलासन" भी है।

(२८) मयूरासन।



जिस प्रकार मोर पत्थर पर बैठता और अपनी पुच्छको नीचे करता है, उस प्रकार मेजके सहारे अपने दो हाथ रखिये और कोहनियां नाभिस्थानमें लगाकर उनपर सब शरीरका बोझ संभाल लीजिये। इसको मयूरासन कहते हैं। इससे पचन शक्ति बढती है और हाथोंमें बल आता है मयूरासनका दूसरा प्रकार यह है—

(२९) मयूरासन और (३०) हंसासन ।



अपने दोनों पंजे जमीनपर रखिये और कोहनियाँ नाभिके दोनों ओर आसपास लगाइये और बकासन के समान अपने पांवोंके समेत शरीरको ऊपर अंतरालमें उठाइये । इस प्रकार करके किंचित समय स्थिर रहिये । पश्चात् छाति और मुखको किंचित् आगे झुकाइये, छाति और मुख आगे झुकते ही आपही आप पांव पीछे चले जायंगे। पश्चात् पांवोंको पीछे और सिरको आगे अच्छी प्रकार करके; शरीरको दंडवत् सीधा करके अपने कोहनियोंपरही संभालकर रहिये इसको मयूरासन कहते हैं ।

पांव जमीनको लगे रहनेसे हंसासन बनता है । हंसासनकी अपेक्षा मयूरासन का फल अधिक है ।

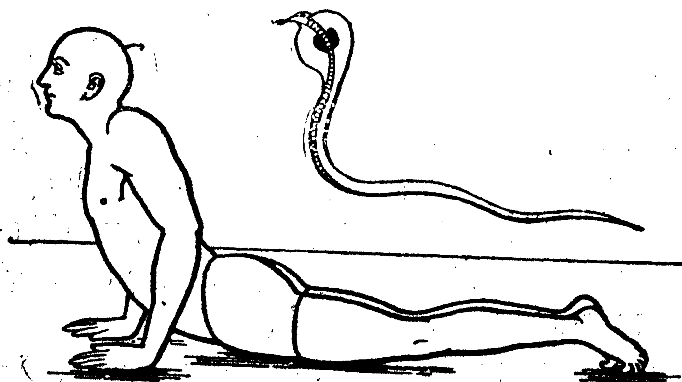
इससे जठराग्नि प्रदीप्त होता है, भूख बहुत लगती है, शौच शुद्धि होती है । बस्तिविधि करनेके बाद यह आसन करनेसे उत्तम परिणाम होते हैं । गुल्म, उदर आदि रोगोंको दूर

करनेके लिये यह बडा उपयोगी है। वात पित्त आदिकोंके दोषोंका शमन इससे होता है। अति भोजन, बुरा अन्न, अथवा कदन्न भी खाया हो तो इससे भस्म हो जाता है। तात्पर्य यह उदरसंबंधी रोगोंको दूर करता है। तथापि भोजन विषयक अपथ्य न करना ही उत्तम है। यह आसन शरीरके आरोग्यके लिये अति उत्तम है। अभ्यास अधिक करनेसे अच्छा लाभ होता है।

---

(३१) सर्पासन।

पट सोके कमरसे नीचेका भाग पांव समेत भूमिपर टिकाके तूंदीके पास दोनों हाथोंके तलवे भूमिपर टिका देने, फिर छातीसे माथेतकका भाग सांपके फनके जैसा ऊपर उठा रक्खें। इसको " सर्पासन, भुजंगासन अथवा नागासन "



कहते हैं। इससे भूख बढती है, जठराग्निकी तीव्रता होती है, मंदाग्निसे होनेवाले सब रोग इसके अभ्याससे दूर होते हैं।

वीर्य रक्षाके लिये।

भुजङ्गासन (सर्पासन)।

(ले०—श्री. पं. प्रियरत्न विद्यार्थी)

यह सर्पासन चिकित्सा सम्बन्धी आसनों में वीर्यरक्षण के लिये एक मुख्य आसन है अर्थात् यदि मेरे बताए एकेले इस सर्पासन को ही निरन्तर दोनों समय करें तो 'स्वप्नदोष' रोग सर्वथा नष्ट हो जावे। विधि यह है कि भूमिपर ओन्धा लेट जावे और दोनों हाथ, हनु [ठोडी], छाती, उपस्थेन्द्रिय, दोनों जानु [घुटने,] दोनों पैरों के पंजे भूमिको स्पर्श करें या यों समझिये कि शरीर का भार इन नव अङ्गोंपर होना चाहिये "एडी मिली हों हाथ स्कन्धों के पास रखे हों फिर ठोडी को भूमिसे ऊपर उठावे और शनैः शनैः जहां तक आगे के अङ्गों को भूमिसे ऊपर उठा सकें उठावें; प्रत्युत हाथोंपर भार न पडने पावे, ऐसा करते हुए एक आभ्यन्तर वृत्ति प्राणायाम [श्वास को भीतर रोकना] करें यह भुजङ्गासन का प्रथम प्रकार है फिर देखो—

[२] इसके अनन्तर पूर्ववत् नवाङ्ग लेटे हुए दोनों हाथ पृष्ठ के ऊपर मिलाकर रखें एवं पूर्ववत् आभ्यन्तर प्राणायाम करें और हनुसे लेकर अङ्गको जितना ऊपर उठा सकें शनैः

शनैः उठावें, प्रथम प्रकारमें और इस में भेद इतना ही है कि हाथों को पृष्ठ के ऊपर मिलाकर रखना और सब पूर्व के समान है ॥

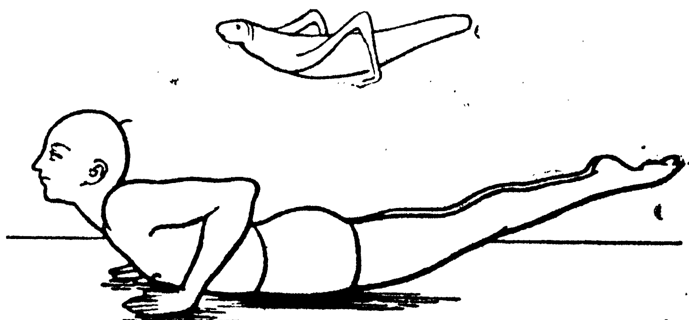
[३] इसके पश्चात् प्रथम प्रकार का भुजङ्गासन करके दोनों जानु (घुटने) भी ऊपर उठा लेवें फिर प्रथम प्रकार के समान सब कुछ करें प्रथम और इस तृतीय प्रकार में भेद इतना ही है कि इस में दोनों जानु ऊपर उठाने होते हैं ॥

(४) तत्पश्चात् द्वितीय प्रकार के समान दोनों हाथ ऊपर उठाकर पृष्ठ पर मिलादें सब तृतीय प्रकार और चतुर्थ प्रकारमें केवल इतनाही अन्तर है और सब समान है ॥

एवं इस प्रकार का भुजङ्गासन जो चार प्राणायामों में होगा जिस में पांच मिनिटके लगभग लगेंगी सायं प्रातः दोनों समय जो कोई इसका अनुष्ठान करेगा, चाहे वह पुरुष अन्य चिकित्सा सम्बन्धी आसनोंको न भी करे पर अति शीघ्र स्वप्नदोष रोगसे मुक्ति पावेगा। कुछ दिवस इसही एकेले को करते हुए अभ्यासानुभव से परीक्षा कर देखें।

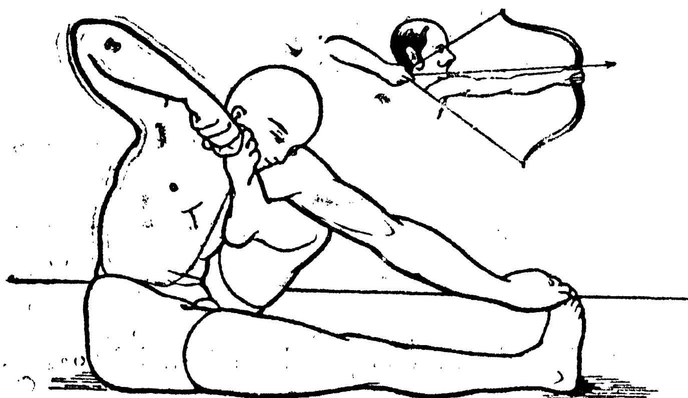
---

(३२) शलभासन ।



शलभ का नाम भाषामें डिड्डो है । इसके आकारके समान अपना आकार बनानेके लिये जमीनपर पेटके बल सोकर नाभिके दोनों ओर दोनों हाथ रखिये और नाभिके चारों ओरका चार अंगुलका भाग भूमिपर रखकर शेष शरीर अर्थात् छाति सिर और पांव ऊपर उठाइये । शलभ जैसा आकार बन जायगा । इसीका नाम "शलभासन" है । इससे जंघा, पेट, बाहु आदि भागों को लाभ पहुंचता है ।

(३३) आकर्णधनुषासन ।



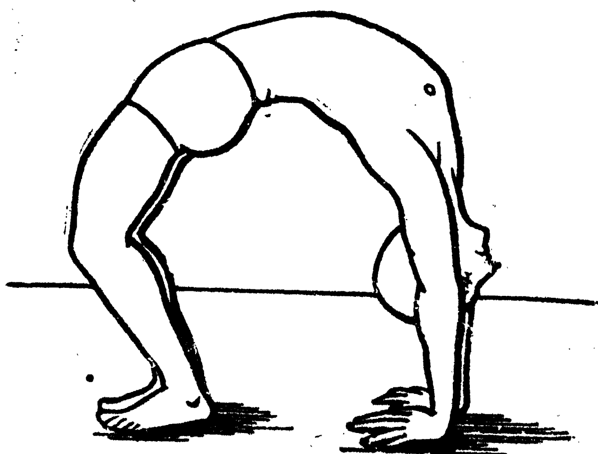
दोनों पांव एक दूसरेके साथ सीधे जमीनपर फैलाकर बैठ जाइये ; दोनों हाथोंकी । अंगुलियोंसे दोनों पांवोंके अंगूठे पकड लीजिये । पश्चात् एक पांव सीधाही रखकर दूसरे पांव को उठाकर दूसरी ओरके कानको लगाइये । जिस प्रकार धनुष्यपर बाण चढाकर आकर्ण खींचा जाता है, उसी प्रकार इस आसनमें होता है इसलिये इसको " आकर्ण धनुषासन " कहते हैं ।

दूसरी ओर भी इसी प्रकार करना चाहिये । हाथों और पांवोंके हेरफेरसे यह आसन चार प्रकार से किया जा सकता है ।

(१) दाहिने हाथसे दाहिने पांव का अंगूठा पकडकर, बांये पांवका अंगूठा बांए हाथसे खींचकर बांए कान को लगाना, (२) बांए हाथसे बांए पांवका अंगूठा पकडकर दाहिने पावका अंगूठा दाहिने हाथसे खींचकर दाहिने कानको लगाना, (३) दाहिने हाथसे बांये पांव का अंगूठा पकडकर दाहिने पांवका अंगूठा बाएं हाथसे खींचकर बाएं कानको लगाना, (४) बाएं हाथसे दाहिने पांवका अंगूठा पकडकर बांये पांवका अंगूठा दाहिने हाथसे खींचकर दाहिने कानको लगाना ये चार प्रकार हैं। इनसे बाहु, पांव घुटने, जंघा आदि अवयवोंको लाभ पहुंचता है।

---

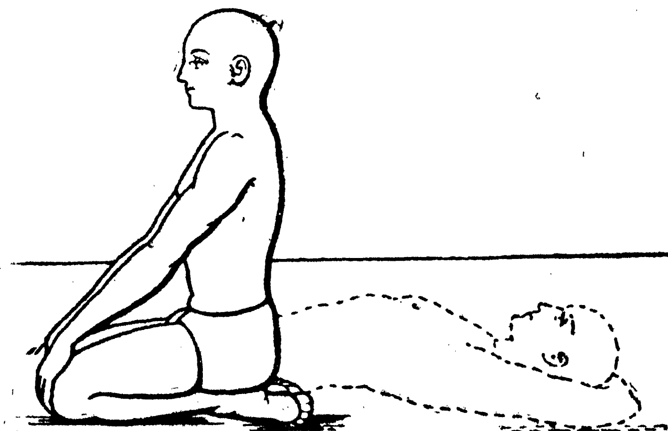
(३४) चक्रासन ।



पीठके ऊपर भूमिपर सो जाइये। पश्चात् हाथों और पांवोंके पंजे भूमिपर लगाकर कमरका भाग ऊपर उठाइये। और हाथों और पांवोंके पंजे जितने पास पास आसकेंगे, उतने पास करनेका यत्न कीजिये। सब शरीर चक्रके समान बनता है इस कारण इसको "चक्रासन" कहते हैं। यह आसन खडा रहकर पीछेसे अपने हाथोंको जमीनपर रखनेसे भी होता है। इसको भाषामें "कमान करना" बोलते हैं। इससे पेट और कमरके स्थानोंको बडा लाभ पहुंचता है। पृष्ठवंश हमेशा आगेकी ओर झुकता है, उसका दोष इस आसनद्वारा विरुद्ध झुकाव होनेसे दूर होता है।

---

(३५) वज्रासन और (३६) सुप्तवज्रासन ।



दोनों जांघें और दोनों पींडरीयां इनको ऊपर नीचे बराबर करके दोनों पांवोंके तळवोंको गुदाके दोनों ओर बराबर बैठाकर बैठना, इसका नाम " वज्रासन " है।

घुटनेके निचले भागसे पांवकी अंगुलियोंतक का भाग भूमिको लगाना चाहिये। इसका दूसरा प्रकार यह है कि अंगुलियां भूमिपर टिकाके एडियोंपर चूतर रखकर बैठना, परंतु इससे वह इष्ट कार्य नहीं होता है कि, जो पूर्व लिखे प्रकारसे होता है। इसलिये घुटनेसे अंगुलियोंतकका पांवका भाग जमीनको लगाकर बैठनाही उत्तम है।

इसका तीसरा प्रकार यह है कि, एडियां अलग करके चूतर जमीन को लगाकर बैठना।

किसी प्रकार वज्रासन लगाकर पश्चात् उसी वज्रासनके साथ पीठपर सोना, और अपने हाथोंसे एकसे दूसरे हाथका बाहु पकड कर हाथोंके ऊपर सिर रखना, इसको " सुप्तवज्रासन " कहते हैं।

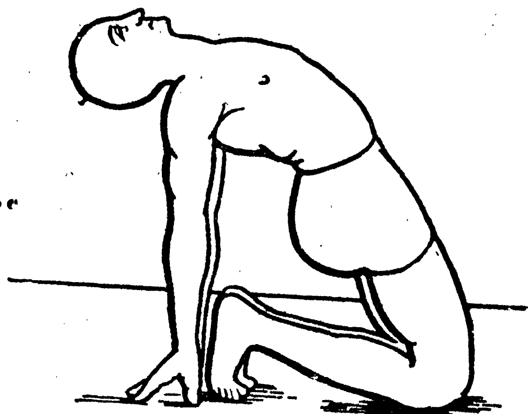
पांवों और पेटपर इसका अच्छा परिणाम होता है। इस समय ठोढी कंठमूलमें दंटके लगानेसे बहुत ही लाभ होता है। इस आसनके करनेके समय इस बातको कोई न भूलें।

---

(३७) उष्ट्रासन।

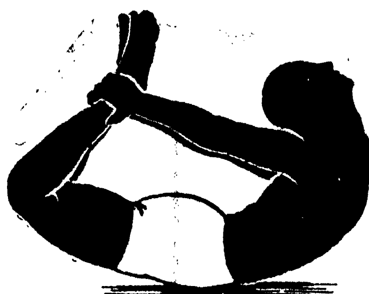
पूर्वोक्त वज्रासन के द्वितीय प्रकार के समान एडियोंपर चूतर लगाकर बैठिये। पश्चात् हाथ पावोंके साथ साथ अथवा

पावोंकी एडियोंपर रखकर एडियोंपरसे चूतरोंको उठाकर आगे कीजिये और सिरको पीछे और नीचे झुकाइये। इस समय एडी और चूतरोंके बीचमें जितना अधिक अंतर होसके उतना उत्तम है। इस आसनसे पेटको बहुत लाभ पहुँचता है।



पेट जमीनको लगाकर भूमिपर सीधा सोकर पीछेसे अपने हाथोंसे पावोंको–एडीके नीचे–पकड लीजिये। अब नाभिके आसपासका चार अंगुलतक का पेटका भागही केवल भूमि-पर रखकर, सब शरीरको ऊपर कीजिये। हाथोंसे पांवोंको अपनी ओर अच्छी प्रकार खींच लीजिये और पांवोंसे हाथोंको अच्छी प्रकार खींच लीजिये। इस प्रकार दोनों ओरका खिंचाव होनेसे " सुप्त उष्ट्रासन " बनता है। इसको " धनुरासन " भी कहते हैं।

पूर्वोक्त उष्ट्रासनमें घुटने और पांवकी अंगुलियां जमीनपर स्पर्श कर रहींथीं, तथा हाथका भी एक रीतिसे भूमिको स्पर्श हो रहा था। परंतु इस सुप्त उष्ट्रासनमें केवल नाभिका थोडासा भागही भूमिको स्पर्श करता है और शेष सब शरीर ऊपर खिंचा होता है। दोनोंका आकार एक जैसाही होता है, एकमें ऊंट बैठनेका भास होता है और दूसरेमें सोनेका भास होता है। दोनोंका फल एकसाही है।

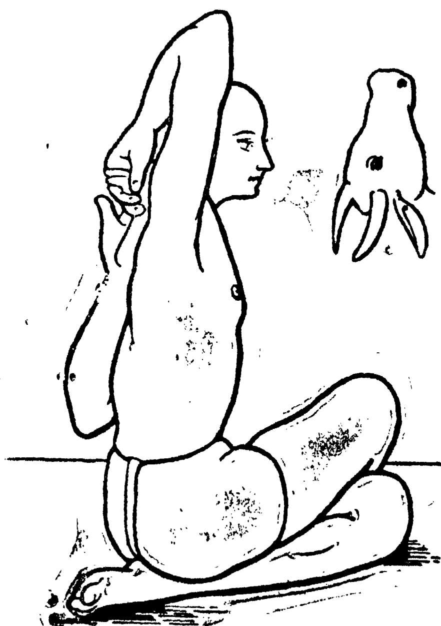


इसके अभ्याससे यकृत और प्लीहाके दोष दूर होते हैं, आमवातके सब रोग चले जाते हैं। तात्पर्य पेटके आरोग्यके लिये यह अति उपयोगी आसन है।

उष्ट्रासनका और एक प्रकार—पेट पर सोके दोनों पांव घुटनोंसे उलटके पीठकी ओर लाने, दोनों हाथोंसे दोनों पांवोंके अंगूठे पकडने और कंधे भूमिपर लगाके माथा ऊपर करना, इसको भी उष्ट्रासन कहते हैं।

---

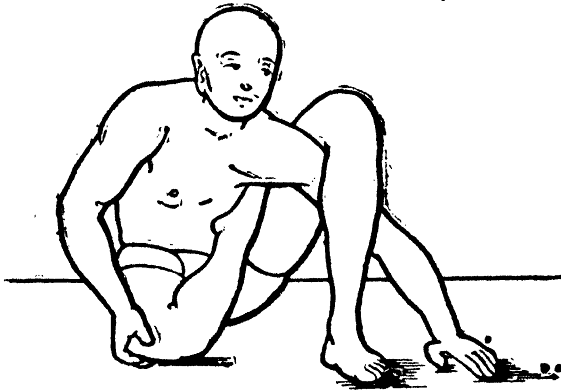
(३८) गोमुखासन.



दाहिने पांवकी गांठ बाएं चूतर के नीचे और बाएं पांवकी गांठ दाहिने चूतरके नीचे रखके तनके बैठना, और बायां हाथ पीछे फेरके ऊंचा उठाना, तथा दाहिने हाथकी कोहनी ऊंची करके हाथ नीचे झुकाना। तत्पश्चात् दाहिनी तर्जनीमें बायें हाथ की तर्जनी दृढ पकडनी।

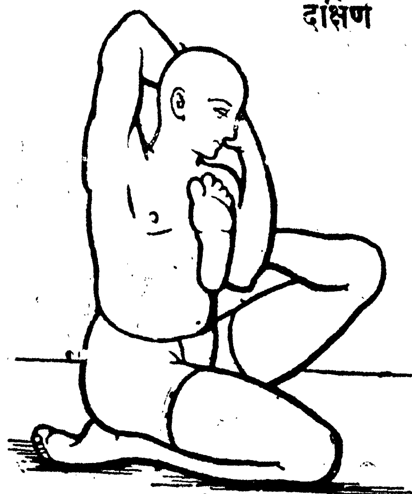
इसको गोमुखासन कहते हैं। हाथोंके तथा पांवोंको हेर फेरसे यह आसन दोनों ओर करना उत्तम है। इससे हाथों और छातीको लाभ पहुंचता है। यह आसन खडा होकर भी केवल हाथोंद्वारा हो सकता है।

(३९) प्राणासन।



दाहिने पांवकी अंगुलियाँ बायी जंघा और बगलमें दबा कर बैठिये और बाये घुटनेके नीचे बायां बाहु रखकर बायां हाथ और पांव जमीनपर बलसे रखिये। इस समय बाहुसे घुटने को ऊपर खींचना और घुटनेसे बाहुको नीचे दबाना चाहिये। इस प्रकार करनेसे हाथ और पांवका बल बढता है। फेंफडोंमें खिंचाव होने के कारण प्राणका भी बल बढ जाता है। हाथ पांवके हेरफेरसे यह आसन दांई बांई ओर दो प्रकार से किया जा सकता है।

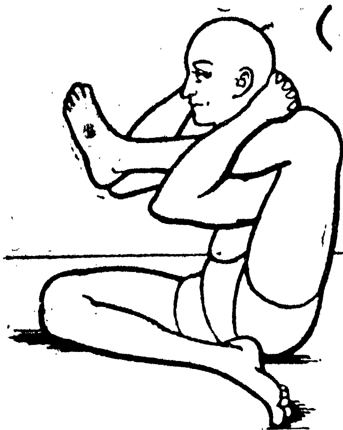
(४०) चतुरकोणासन।



दक्षिण पादको घुटनेमें मोडके बैठना और पश्चात् बांहे पांवके पंझेको बांहे हाथकी ठेऊनीमें धरके ऊपर उठाना, पश्चात् सिर परसे दोनों हाथोंकी अंगुलियां परस्पर मिलाकर पांव को सिरके बल ऊपर उठानेसे "चतुरकोणासन" बनता है। यह दूसरी ओर भी करना चाहिये।

इससे पांव के स्नायु ठीक होजाते हैं तथा हाथ और गलेके स्नायुओंको भी अच्छा खिंचाव होनेके कारण निर्मलता प्राप्त होती है।

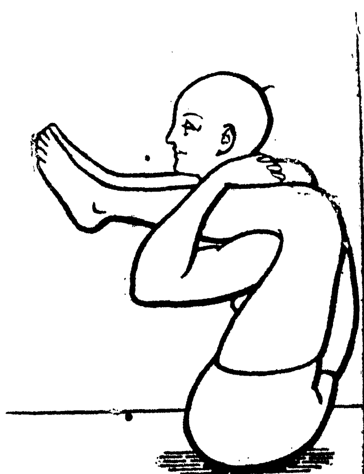
(४१) एकहस्तभुजासन।



दाहिना पांव दांये कंधेपर अथवा बायां पांव बांये कंधेपर रखिये और दोनों हाथ गलेके पीछे परस्पर अंगुलियां मिलाकर रखिये और बाहुके सहारेसे पांवको ऊपरही पकड रखिये। इसको "एकहस्तभुजासन" बोलते हैं।

---

[४२] द्विहस्तभुजासन।

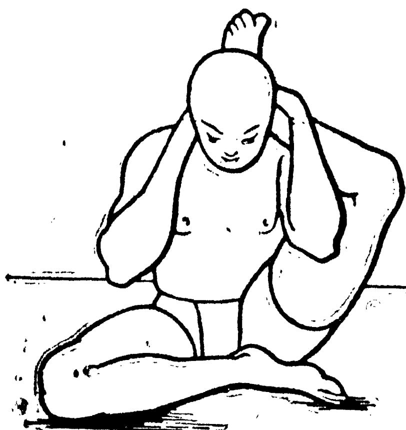


पूर्वोक्त प्रकार दोनों पांवोंको दोनों बाहुओंपर रखना और पूर्वोक्त रीतिसे हाथोंद्वारा उनको ऊपरही धरदेना इस आसन में होता है। पूर्व आसन अच्छीप्रकार होनेलगेगा तो यह बननेमें देर नहीं लगती। तबतक इसका यत्न भी करना नहीं चाहिये।

ये दोनों आसन स्त्रियोंको करने नहीं चाहिये।

---

(४३) एकपादशिरासन ।



प्रथम चौकी लगाकर बैठिये। पश्चात् एक पांव को खोलकर उसके पंजेको दोनों अथवा एक हाथसे पकड कर शनैः शनैः मंद् वेगसे सिरके पीछे गलेके पृष्ठ भागपर चढाइये इससे पांव और जंघा आदि स्थानकी नस नाडीकी निर्मलता होती है।

परंतु यह आसन पहिले दिन होना कठिन है। इसलिये बलसे जबरदस्ती करना उचित नहीं। क्रमपूर्वक पांव ऊपर चढते चढते एक मासमें होने लगेगा। शीघ्रता करना अयोग्य है। यह आसन स्त्रियोंको करना नहीं चाहिये।

(४४) द्विपाद शिरासन।

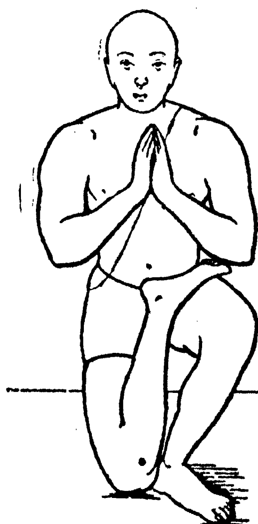


पूर्वोक्त प्रकार दोनों पांवोंको गलेके पृष्ठ भाग पर एक समय रखनेसे यह आसन बनता है।

ये दोनों आसन स्त्रियोंको करने नहीं चाहिये। इसका फल पूर्वोक्त प्रकार ही है।

---

(४५) वातायनासन।



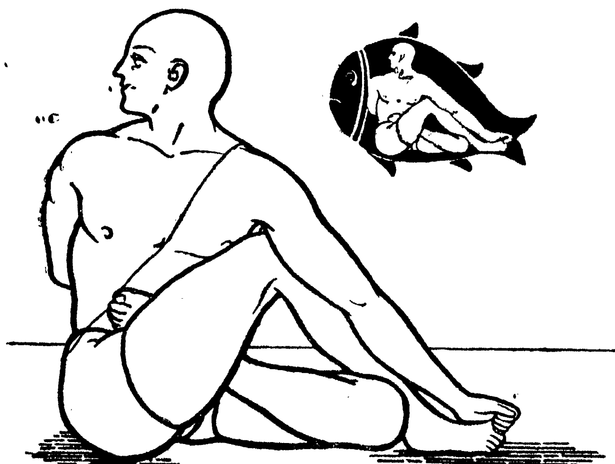
खडे रहकर एक पांवकी एडी दूसरे पांवकी जंघाके मूलमें लगाइये। किंचित् समय इस प्रकार एक पांवपरही खडा रहकर, पश्चात् शनैः शनैः इस मोडे हुए पांवका घुटना दूसरे पांवकी एडीके साथ जमीन को लगाकर खडा रहिये। यह "वातायनासन" होता है। फिर उठनेके समय शनैः शनैः उठना चाहिये। पांवोंके हेर फेरसे इसके दो भेद होते हैं। इससे भी

पांवकी शक्ति बढ जाती है । अपनी शक्तिके अनुकूल इस आसनपर न्यून वा अधिक समय खडा रहनेसे उचित लाभ होता है ।

यह आसन स्त्रियां न करें ।

---

(४६) मत्स्येंद्रासन ।



बाएं पांवका पंजा दाहिने पांवके मूलमें ऐसा रखना कि उसकी एडी तूंदीमें लगे और अंगुलियें पालथीके बाहिर न हों । फिर दायां पांव बाएं घुटनेके पास पंजा भूमिपर लगाके रखना । फिर बायां हाथ दायें घुटनेके बाहिरसे पिच्छ डालके उसकी चुटकीमें दांये पांवका अंगूठा पकडके, उस दायें पांवके

पंजेको बायें घुटनेके बाहर सटाके रखना। फिर दाहिना हाथ पीठकी ओर से फिराके उससे बायें पांवकी एंडी पकड रखनी और अपना मुख तथा अंग पीछेकी ओर फेर के नासाग्रमें दृष्टि करनी। इसको " मत्स्येंद्रासन " कहते हैं।

हाथ और पांवोंके हेरफेरसे यह आसन दोनों ओर करना चाहिए। यह आसन प्रारंभमें करना कठिन होता है, इसलिये प्रथमतः " मत्स्येंद्रासन " करना और जब इसका अच्छा अभ्यास हो जाय तो पश्चात् मत्स्येंद्रासन का यत्न करना उत्तम है।

बाएं पांवकी एडी गुदा और अंडकोशके बीचमें लगानी और दांयां पांव पूर्ववत् बाएं घुटनेके पास पंजा भूमिपर लगाके रखना। फिर बायां हाथ दांये घुटनेके बाहिरसे चित्त डालकर उसकी चुटकीमें दांये पांव का अंगूठा पकडके, उस दांये पंजेको बाये घुटनेके बाहिर सटाके रखना। फिर दाहिना हाथ पीठकी ओरसे फिराके उससे दाईं जंघा पकडनी और अपना मुख तथा अंग पूर्ववत् घुमाके नासाग्रदृष्टि करनी। इसको अर्ध मत्स्येंद्रासन कहते हैं। पूर्ण मत्स्यंद्रासनसे यह सुगम है। और जिनका शरीर स्थूल होता है वे भी इसको थोडे प्रयत्नसे कर सकते हैं।

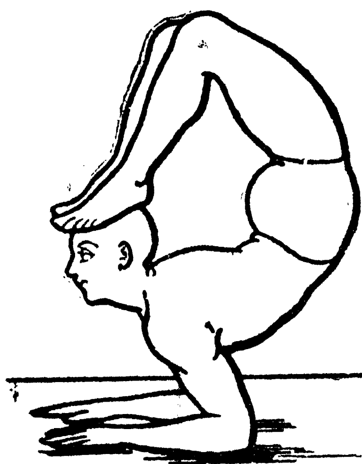
इससे भी सुगम और एक तीसरा प्रकार है। उसमें भेद इतनाही है कि जो हाथ पीठकी ओर घुमानेका होता है वह

अपनी सुलभताके अनुसार भूमिपर ही रखना और जहांतक हों सके वहांतक छाति और मुख पीठकी ओर घुमाना। इसको " पाद मत्स्येंद्रासन " कहते हैं।

जितनी अधिक सुगमता होती है, उतना लाभ भी कम होता है। इसलिये सुगम प्रकार थोडा अभ्यास होनेतक करके पश्चात् पूर्ण मत्स्येंद्रासनके लिये ही यत्न करना चाहिये।

इस एक आसनसेही पीठ, पेटके नल, पांव, गला, बाहु, कमर, नाभिके निचला भाग और छातीके स्नायुओंका अच्छा खिंचाव होता है। इसलिये इतने भागोंमें इसके अभ्याससे सुपरिणाम होता है। मत्स्येंद्रासनसे जाठराग्नि बढता है, पेटके अनेक रोगोंका समूल नाश होता है, पेटका दर्द, आमवात, परिणामशूल, आंतोंके रोग आदिका नाश इससे होता है। इसलिये स्वास्थ्यके इच्छुक लोगोंको इसका उत्तम अभ्यास करना चाहिये।

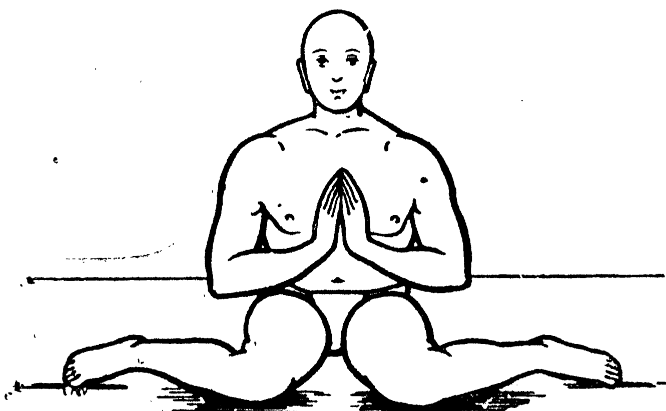
(४७) वृश्चिकासन।



कोहनीसे पंजेतकका हाथोंका भाग भूमिपर रख कर, उसके सहारे सब शरीरको संभाल-कर, दिवारके सहारे पांव ऊपर ले जाइये। पश्चात्-पांवोंको घुटनोंमें मोड-कर सिरके ऊपर ले आइये। इसको वृश्चि-कासन कहते हैं। इससे हाथों और बाहुओंमें बल बढता है और पेट तथा आंतोंका भाग निर्दोष बनता है। तथा शरीर फुर्तिला और हलका होनेके कारण इससे सब शरीरको बडा लाभ पहुंचता है। जितना समय इस आसनमें आसानीसे रहा जा सकेगा, उतनाही रहना उचित है, उससे अधिक नहीं।

कई लोग केवल पंजोंके ऊपरही सब शरीर संभालकर यह आसन करते हैं। यह दूसरा प्रकार है। किसी प्रकार करना हो तो प्रारंभमें दिवारका सहारा तथा मित्रोंकी सहायता लेना योग्य है। जब शरीर पूर्ण स्वाधीन हो जाय, तब स्वयं अकेला ही करनेमें कोई हानि नहीं है।

(४८) त्रिकोणासन।



वज्रासनमें लिखी रीतिके अनुसार चूतर भूमिपर रखकर, दोनों पांव दोनों चूतरोंके दोनों ओर रखकर बैठ जाइये। पश्चात् एक पांवको घुटनेकी समरेखामें ले आइये। पश्चात् दूसराभी पांव वैसाही उसकी विरुद्ध दिशामें घुटनेकी समरेखा में ले जाइये। ऐसा होनेसे "त्रिकोणासन" बनता है। इससे घुटनेके दोष दूर होते हैं। घुटनोंका दर्द, संधिवात आदि बीमारी इस आसनके अभ्यासी को नहीं होगी। और यदि हुई तो इसके अभ्याससे दूर हो जाती है।

यह आसन बहुत कठिन है। इसलिये प्रारंभमें "अर्धत्रि-कोणासन" का अभ्यास करना उचित ह। एक पांव का ही आसन बनाने का नाम अर्ध त्रिकोणासन है। जब यह सिद्ध होगा तब, दोनों पांवोंका आसन करनेका यत्न करना योग्य है। बलके साथ जबरदस्ती करनेसे हानि होगी।

(४९) कंदपीडनासन ।



चौकी खोलकर जमीनपर बैठ जाइये । पश्चात् एक पांवका पंजा दोनों हाथोंके सहारेसे शनैः शनैः घुमाकर और ऊपर उठाकर पेटके ऊपर ले आइये । इसको "अर्ध—कंद—पीड-नासन" कहते हैं इसीप्रकार दूसरे पांवका पंजा ऊपर पेट-पर ले आइये । जब अलग अलग पांवसे आसानीसे अर्ध कंद पीडनासन बन जायगा, तब दोनों पांवोंका कंद पीडना-सन करनेका यत्न कीजिये । यह आसन अत्यंत सावधा-नीसे और थोडाथोडा करना चाहिये । शीघ्रता और जबरद-स्तीका प्रयत्न करनेसे कष्ट होंगे । इससे घुटनोंके दोष दूर होजाते हैं । और मज्जाग्रंथियोंकी शुद्धता होती है ।

शांतिका अनुभव।

हरएक मनुष्यको अनुभव है कि, "अशांत रहनेसे कष्ट और शांति मिलनेसे सुख होता है।" यह शांति कैसी प्राप्त की जा सकती है, इसका विचार हरएक मनुष्यको अपनी परिस्थितीके अनुसार करना आवश्यक है, तथापि शांतिके सर्वमान्य तत्वोंका विचार यहां करता हूं।

कई मनुष्योंका स्वभाव बडा चिडचिडा होता है। हर समय चिडजाने, अशांत होने और मनमाने शब्द बोलने में ये मनुष्य बडे प्रसिद्ध होते हैं। इनको किसी प्रकार भी स्वास्थ्य, शांति और समाधान हो ही नहीं सकता। इस लिय यदि ऐसा दोष हुआ, तो उसको दूर करनेका यत्न हरएक को करना अत्यंत आवश्यक है, क्यों कि इस स्वभाव के कारण उनकी आत्मिक उन्नति होनी असंभव है। ये मनुष्य प्रायः क्रोधी होते हैं। इस क्रोधको इसी लिये जीतना चाहिये कि, इससे खूनकी खराबी होती है। जिस समय क्रोध आता है, अपने ही खूनके जीवन अणुओंकों मार देता है। क्रोधसे दूसरेकी हानि होगी या न होगी इसका विचार स्वतंत्र है, परंतु क्रोधके कारण क्रोधी मनुष्यके जीवनयुक्त कीटाणुओंका नाश होता है, यह बात सत्य है। इससे स्पष्ट है कि, जिसके ऊपर यह क्रोध

करता है, उसका नाश होनेके पूर्व इसी क्रोधीका नाश होता है। इसी लिये कहते हैं कि, क्रोधके कारण आयु घटती है। इतने भयानक शत्रुको अपने पास कौन करेगा? इस कारण भगवद्गीतामें कहा है—

काम एष क्रोध एष रजोगुणसमुद्भवः ॥
महाशनो महापाप्मा विद्ध्येनमिह वैरिणम् ॥ ३७ ॥
धूमेनाव्रियते वह्निर्यथादर्शो मलेन च ॥
यथोल्बेनावृतो गर्भस्तथा तेनेदमावृतम् ॥ ३८ ॥ भ. गी. ३

" यह रजोगुणसे उत्पन्न काम और क्रोध महा भोगी और पापी है यह तेरा शत्रु है जिस प्रकार धूमसे अग्नि, मलसे शीशा और चर्मसे गर्भ आवृत होता है, उसी प्रकार इस काम और क्रोधसे यह सब ढंका है। " अर्थात् काम और क्रोधके कारण सब कामी और क्रोधी अज्ञानसे युक्त होते हैं और उनको कर्तव्य अकर्तव्य का विचार नहीं होता। यह बात हरएक जान सकता है, कि, क्रोधके वशमें होने के कारण मनुष्य समय समयपर कितने अनर्थ करता है, और कैसा गिर जाता है। बाह्य अनर्थ इससे न भी हुए तोभी यह क्रोधके आवेशमें जब होता है, तब बडा अशांत होता है और शांतिसे दूर होता है। इस लिये क्रोधको छोडना चाहिये।

चिडचिडा अथवा क्रोधी मनुष्य अपना मनोरंजन करनेके लिये भी किसी स्थानपर गया, तो उसको वह शांति नहीं

मिलती कि, जो दूसरे शांत और प्रेमी मनुष्यको प्राप्त होती है । इसलिये द्रव्यका व्यय करनेपर भी यह क्रोधी मनोरंजनसे दूरही रहता है । कई समझते हैं कि, यह स्वभावगुण है, और दूर नहीं हो सकता । परंतु हमारा विचार है कि, यह स्वभाव-धर्म होने परभी प्रयत्न करनेपर दूर होता है । हमने कई क्रोधी मनुष्य बडे शांत और प्रेमी बने हुए देखे हैं । इसलिए अपना चिडचिडा स्वभाव दूर करनेका यत्न हरएकको अवश्य करना चाहिये ।

शांति प्राप्त करनेका आसन ।

(५०) शवासन, प्रेतासन, मृतासन ।

भूमिपर दरी या कंबल बिछाकर उसपर दोनों हाथ और दोनों पांवोंको फैलाके आकाश या छत की ओर मुख करके पीठसमेत सब अंग जमीनको लगाकर सोनेका नाम शवासन है । इसको मृतासन तथा प्रेतासन भी कहते हैं । बहुत श्रम होनेकी अवस्थामें यह आसन करनेसे विश्रांति मिलती है और श्रम दूर हो जाते हैं ।

बहुत चलने, घूमने, दौडने अथवा अन्य प्रकार बहुत श्रम करनेपर यह आसन दस पंध्रह मिनिट करनेसे सब श्रम दूर होते हैं और शांति प्राप्त होती है ।

(५१) दंडासन।

शवासनमें हाथ और पांव फैले थे, वैसे न फैलाते हुए एक पांव दूसरे पांवके पास रखिये और एक हाथ दूसरे हाथ के पास रखिये, और सब शरीर पांवसे लेकर हाथ के पंजेतक समरेखामें दंडवत् भूमिपर रखिये, इसका नाम दंडासन है। इसका फलभी श्रम परिहार ही है।

इन दोनों आसनोंको करनेके समय अपने सब स्नायु, अंग और अवयव बिलकुल ढीले रखने चाहिये। अपनी आत्मशक्ति शरीरसे हटाकर अपने आत्माके अंदूर लानी चाहिये, और शरीर बिलकुल प्रेतके समान स्थिर करना चाहिये। सब स्नायु जितने ढीले करेंगे उतना आराम अधिक प्राप्त होगा। दस पंध्रह मिनिट करके आप फिर अपनी शक्ति शरीरमें भेजिये। इस समय आपको नवीन उत्साह प्रतीत होगा, और प्रायः सब श्रमकी थकावट दूर होगी।

इस शवासन अथवा दंडासन करनेके समय श्वास उच्छ्वास बिलकुल शनैः शनैः और आवाज बिलकुल न करते हुए करने चाहिये। श्वास अंदर जानेके समय अथवा उच्छ्वास बाहिर छोडनेके समय थोडा भी आवाज न हो। परंतु पूर्णतासे श्वास अंदर जाय और पूर्णतासे बाहिर भी आजाय। श्वासोच्छ्वास के आवाजका भान अपने आपको भी न हो। इस प्रकार अत्यंत शांतिसे श्वासोच्छ्वास करनेसे शवासनमें बडा

लाभ होता है। श्वास और उच्छ्वासका प्रमाण सम हो, जितना दीर्घ श्वास होगा, उतनाही दीर्घ उच्छ्वास होना चाहिये। यह लंबाई आप मनमें ही अंकों या मंत्रोंकी गिनतीसे कर सकते हैं।

कुछ देर ऐसा करनेके पश्चात् जब श्वास प्रमाणमें होने लगेगा तब आप श्वासकी ओर का ध्यान हटाइये और अपने मनके विचार बंद कीजिये। जहांतक संभव हो वहांतक मनमें एक भी विचार न रखिये। तात्पर्य इस शवासनमें शरीरके स्नायुओंको ढीला करके तथा मनको भी निर्विकार करके जहांतक हो सके वहांतक शांत रहना चाहिये। आंख बंद रखिये और किसी अन्य इंद्रियका कोईभी व्यापार न कीजिये।

ऐसा शांत रहनेसे एक प्रकारकी अवर्णनीय शांति प्राप्त होती है और द्विगुणित उत्साह बढता है।

अन्य प्रकार बैठ या सोकर भी आप अपने स्नायुओंको ढीला करके कुछ आराम प्राप्त कर सकते हैं। स्नायुओंको ढीला करनेसे हमेशा शीघ्र विश्राम प्राप्त होता है। परंतु शवासनमें सबसे अधिक विश्राम प्राप्त होता है।

आप कार्य करते करते जब थक जाते हैं, तब दस पंद्रह मिनिट उक्त प्रकार शांतश्वसन पूर्वक शवासन करके अपने स्नायु ढीले करेंगे, तो आपको पूर्ण विश्राम मिलेगा, और

आपकी सब थकावट दूर होगी। न थकनेकी अवस्थामें भी दो तीन घंटे परिश्रम के पश्चात् बैठे बैठेही अपने स्नायु ढीले और मन बिलकुल शांत करेंगे, तो आपको थकावट ही नहीं आवेगी।

जिनको अभ्याससे स्नायुओंको ढीले और मन निर्विचार करनेकी कला अवगत हुई है; वे कभी थकेंगे नहीं अथवा थकनेके पूर्वही उक्त यौगिक क्रियासे फिर नूतन उत्साह युक्त बन जायंगे। अपने शरीरके इंद्रिय व्यापारोंमें भी परमात्माने ऐसी युक्ति रखी है कि, थोडा कार्य करनेके बाद उस इंद्रियको स्वयंही विश्राम मिलता है। सबसे मुख्य बात यह है कि, संपूर्ण इंद्रियां एकही समय कार्य नहीं करतीं, क्योंकि आत्माकी प्रेरणा ही समयान्तरके पश्चात् एक एक इंद्रियमें होती है। मन जिस समय आंखसे देखता है, ठीक उसी समय शब्दका श्रवण नहीं कर सकता। साधारणतः ऐसा होता है, इसलिये जिससमय एक इंद्रियके व्यापार चलते हैं उस समय दूसरे इंद्रियोंको विश्राम मिलता है। इतनाही नहीं प्रत्युत एक इंद्रियके व्यापार चलनेके समयमें भी प्रतिक्षण थोडी थोडी विश्रांति मनको मिलती है। उदाहरणके लिये समझ लीजिए कि, आप बोलते हैं, उस समय एक शब्द बोलनेके पश्चात् थोडी विश्रांति करके ही दूसरा शब्द बोला जाता है। हृदयका चलना भी एक आघात के पश्चात् विश्रांति लेकर दूसरा आघात होता है। श्वास उच्छ्वास की गतिमें भी

बीचमें थोडीसी विश्रांति मिलती है, इसी विश्रांतिको बढानेका नाम आंतरिक अथवा बाह्य कुंभक है। तात्पर्य मध्य समयमें विश्राम लेना निसर्ग स्वभावही है। इस विश्राममें आत्मा परमात्माके अभेद संबंधका अनुभव होता है। इस समय एक दूसरेमें मग्न होते हैं और जिवात्मामें बल आता है। दो दिनके बीचमें जो निद्रा आती है, इस निद्रामें भी यही होता है।

इस स्वभाव धर्मका निरीक्षण करनेसे पता लगेगा कि, दो कार्योंके बीचमें विश्रांति लेनेसे थकावट दूर होती है, और नवीन उत्साह प्राप्त होता है। यह न केवल मनुष्योंमें, परंतु पशुओंमें, वृक्षवनस्पतियोंमें और धातु आदि जड पदार्थोंमें भी है। वृक्षभी थकते और विश्राम मिलनेसे उत्साह पूर्ण होते हैं। जो लोहेके जड यंत्र हैं, उनको भी थकावट आती है, और विश्राम न देते हुए दिन रात कार्य करनेसे शीघ्रही बिगड जाते हैं। इस लिये मनुष्यको शवासन द्वारा अथवा अन्यप्रकार कार्य समाप्तिके पश्चात् पूर्वोक्त रीतिसे नवजीवन प्राप्त करना चाहिये। हरएक मनुष्य थोडेसे प्रयत्नसे उक्त रीतिमें निपुण हो सकता है, क्योंकि सब अन्य आसनोंसे यह सुलभ आसन है; शांतश्वसन तथा स्नायुओंका शिथिलीकरण भी बडाही सुगम परंतु अत्यंत लाभदायक है।

आसनोंका अभ्यास करनेके समय अथवा अन्य व्यायाम करनेके समय बीचबीचमें यदि आप स्नायु शिथिल करके

शांत श्वसन और मन को निर्विचार करते जांयगे, तो आपको अनुभव होगा कि, ऐसा एक दो मिनिट करनेसे भी बडा लाभ होता है, और किसी प्रकार थकावट नहीं आती।

विशेष थक जानेपर इसका लाभ स्पष्ट प्रतीत होता है। अन्य कुछ भी करते हुए, यदि आप मनको निर्विचार और स्तब्ध करेंगे, तो भी आश्चर्य जनक आराम मिल सकता है। जिस समय आपको घबराहट प्रतीत होती है, स्पर्धामें कार्य करना है, कोई बडा अधिकारी आगया है, कुछ परीक्षा का समय है, अथवा कुछ अन्य कारण घबराहट हुई है, तो आप शांतिसे और अत्यंत मंद गतिसे दस बीस दीर्घ श्वास उच्छ्वास लीजिये, मन श्वासकी गतिमें रखिये और अन्य सोचना बंद कीजिये; चार पांच मिनिटों में ही आपकी सब घबराहट दूर होगी और मनको विशेष शांति मिलेगी। यह अनुभवकी बात है, आपको भी ऐसाही अनुभव आ जायगा।

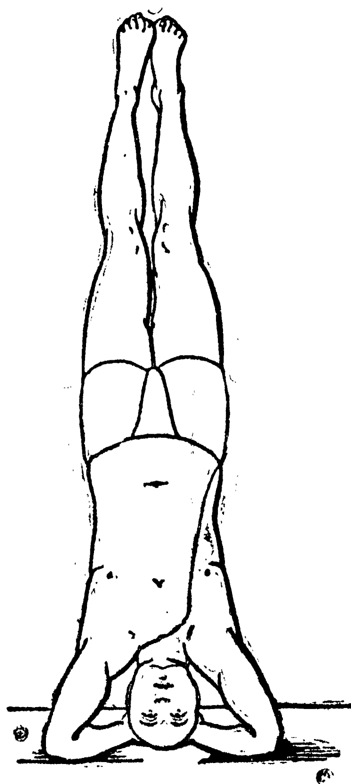
योग और दृष्टि।

लेखक—प्राणपुरी

कई व्यक्तियों की चक्षु-दृष्टि-मंद हो जाती है, उस समय कई रोगी तो कोई अंजन आंखमें लगाते हैं, और किसी वैद्यकी दी हुई औषधि खाते हैं। वैद्यका प्रथम काम यह होता है, कि रोग के निदान का पता लगावे। यदि वैद्यने निदान का पता ठीक लगा लिया, तब तो चिकित्सा से लाभ होता है, और यदि दुर्भाग्यवश निदान में ही भ्रम हो जाय, तो चिकित्सा से भी कोई लाभ नहीं होता है। जिस भांति चिकित्सा की अवस्था है इसी भांति योग की आसनों की अवस्था है; यदि सिर पीडादि रोग रुधिर के अधिक हो जानेसे हो, तब तो शीर्षकासन हानिकारक होगा और यदि इसके विपरीत हो, तो लाभदायक होगा। जैसे जो ज्वर क्षुधा से हो, उसमें भोजन करना ही ओषधवत् है, और यदि अजीर्णसे हो, उस समय भोजन विषवत् है।

इसी लिये ऐसे ही योग के आसन अथवा अन्य क्रिया

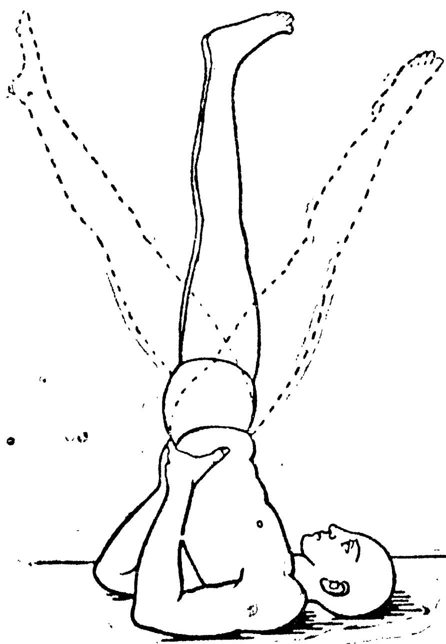
करने के इच्छुक का प्रथम कर्तव्य है, उस रोग के कारण का पता लगाना। निश्चय होने पर पीछे काम करना।



जो आसन अथवा क्रियाएं चक्षु-दृष्टि के लिये लाभकारी हैं, अब मैं उन का वर्णन करता हूं—

(१) शीर्षकासन इसका वर्णन कईवार आगे हो चुका है, इस लिये इसपर अधिक लिखने की आवश्यकता नहीं है। जो व्यक्ति मस्तिष्क संबंधी अधिक काम करते हैं, यदि उन्हें दृष्टि मंद का रोग हो, उनके लिये यह आसन विशेष लाभ दायक है।

(२) विपरीत करणी सीधे लेट कर टांगों को ऊपर उठा कर कंधोंके सहारे खडा होना, और कमरमें दोनों हाथों को लगाकर स्थूणावत् सहारा देना। इसे विपरीत करणी कहते हैं।



इन दोनों आसनोंके अतिरिक्त कुछ और भी साथ साथ करना चाहिये। कई स्थानोंपर तो आसन न करने पर भी इस क्रिया के करने से ही पर्याप्त लाभ हो गया और यह क्रिया करनी अत्यन्त सुगम है। इसका नाम है—

"जलकी नेति"

इसका विधि निम्न लिखित है। एक टूटीदार बतनमें जल डाल लें। बर्तन टूटीदार से प्रयोजन उसी भांति के बर्तन में से है, जैसे साधुओं के पास कमंडलु होता है, वैसा हो, अथवा जिसे पंजाब में गंगासागर कहते हैं, जो गडवे जैसा होता है, और उसमें एक ओर टूटी लगी होती है, अथवा जैसा मुसलमानों का लोटा होता है, वैसा हो। उस पात्र की

टूटी को नासिका के एक छिद्रमें लगाकर सिर को थोडासा दूसरी ओर झुकाकर उस पात्र से जल डाले और उस समय श्वास मुंह से ले और यत्न यह करे कि, जल जो नासिका के छिद्र में पात्रसे जाता है, वह नासिका के दूसरे छिद्र से निकले। इसी भांति कोई आध सेर जल एक छिद्रमें डालकर निकाल दे, और फिर इसी भांति उस पात्रकी टूटी को दूसरे नासिका छिद्रमें लगाकर करे। ताकी नाकके दोनों छिद्र साफ हो जायं।

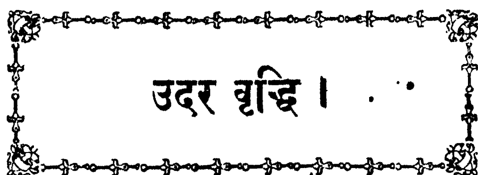
इस क्रियामें जो जल लिया जाय, वह अति शीतल न हो। यदि अति शीतल होगा, तो माथेमें पीडा हो जायगी। जिन स्थानों में कूप का जल काम में लाते हैं, उन स्थानों पर शीत और उष्ण ऋतु में कूप का जल काम दे देता है। जहां पर नलके का जल हो, वहां उष्ण ऋतु में तो उससे ही नेति कर सकते हैं, परंतु शीत ऋतुमें वह ठीक नहीं है। उस समय उसे थोडासा नमक भी डाल लें, तो लाभ अधिक होता है। इस क्रिया से अनेक व्यक्तियों को लाभ हुआ है। उदाहरणार्थ एक वर्णन करता हूं।

गत वर्ष गयाजी पर मैं एक दिन बाहर जा रहा था, पंडित विष्णुदास जी वैद्य मेरे साथ थे, हम परस्पर इसी विषय पर बातें करते जाते थे। आगे नदी तट पर एक व्यक्ति ने स्नानार्थ वस्त्र उतारे और जल के पास जाकर प्रथम उसने

नेति करनी आरंभ की। पंडितजी ने कहा, इनसे पूछें, यह क्यों ऐसा करते हैं? हम उसके समीप गए, और यही प्रश्न किया। उसने उत्तर दिया, मुझे जुकाम अधिक रहता था, एक महात्माने यह उपाय बताया। मैं इसे लगभग एक वर्षसे करता हूं। मैंने कहा आपको क्या लाभ होगया? उसने उत्तर दिया, जुकाम तो हट गया, उसके अतिरिक्त एक लाभ और हुआ जिसके लिये मैंने इसे छोडा नहीं, किये जाता हूं। पंडित जीने कहा वह क्या है? उसने कहा, मैं पहले दीपक के आलोक में अक्षर नहीं देख सकता था, किंतु अब भली भांति पढ सकता हूं, और मेरी दृष्टि पहले से बहुत अच्छी है। उसकी आयु ५० वर्षसे ऊपर थी।

इस लिये यदि जल की नेति प्रति दिवस की जाय, तो नेत्रों के लिये अत्यंत लाभ दायक है, अनेक स्थानों पर इसका परीक्षण किया है।

यदि कोई इससे भी अधिक लाभ का आकांक्षी हो, तो उसे धागे की नेति करनी चाहिये।



उदर वृद्धि।



(लेखक–प्राणपुरी)

शरीर का मोटा होना कई प्रकार का है, [१] एक तो वह है, जिसका सारा शरीर ही अति मोटा हो, और इसी मोटाई के कारण चलने फिरने तथा अन्य कार्य करने में भी कठिनाई हो। [२] दूसरे वह है, जो इतना मोटा शरीर हो, जो चलने फिरने में तो कोई कठिनाई न हो, परन्तु जो काम फुरती से किये जाते हैं, उन्हें न कर सके; और धीरे धीरे शरीर मोटेपन की ओर बढ रहा है।



[३] तीसरे वह शरीर जिसमें अन्य शरीरकी अपेक्षा केवल पेट बढ जाय, अथवा पेटके अतिरिक्त शरीर पतला पड जाय। कई बार यह पेट वृद्धि उन बालकों को हो जाती है, जिन्हे दूध नहीं मिलता है, और

रूखा अन्न ही मिलता है। उस अवस्था में भुजाएं और टांगें पतली हो जाती हैं, और पेट बढ जाता है; उसी बालक के सदृश कई व्यक्तियों का पेट बढ जाता है और कईयों का शेष शरीर पतला नहीं होता है, तो भी पेट अपेक्षा से अधिक बढ जाता है।

उपरोक्त तीनों प्रकार की स्थूलता की चिकित्सा यदि औषधि उपयोग को छोडकर, योग की रीति से करनी हो, तो योग की क्रियाओं और आसनों द्वारा की जाती है। इस लेख में मैं प्रथम और दूसरे प्रकार की मोटाई का कोई उपाय नहीं लिखूंगा, केवल तीसरे प्रकार की मोटाई का ही वर्णन करूंगा, और यह उपाय कई व्यक्तियों ने किया है, और उनका उदर न्यून हो गया है। इसी लिये मैंने यह लेख लिखने का उत्साह किया है।

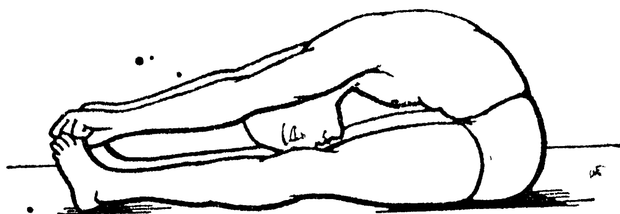
जिसका पेट बढ गया हो, अर्थात् जिसकी तोंद निकल आई हो, जिसे पंजाब में गोगड कहते हैं, उसे निम्न लिखित रीति से "योगका व्यायाम" करना चाहिये।

[१] प्रथम तो वह भूमि पर नितंब टेककर बैठ जाय, और एक टांग को सामने आगे फैला दे और दूसरे पांव का फैलाई हुई टांग के मूल में तलवा उपरको करके जमालें, और धीरे धीरे अपने दोनों हाथ फैला कर फैलाए हुए पांव के पंजे को पकडें। यदि न पकड सकें, तो जहां तक

हाथ जा सके ले जाएं, वहां ठहर कर फिर सिधे बैठ जाएं, । इसी भांति दो वार यत्न करके छोड दें । [२] और फिर दूसरी टांग को फैल कर अर्थात् पूर्व से विपरीत कर के, पहले की तरह दो वार यत्न करें [३]. और इससे पीछे दोनों टांगों को फैला कर पास पास रखें । सारी टांग भूमिपर लगी हुई हो, और एडी पृथिवी पर लगी हुई और पग का पंजा ऊपर को हो । इस भांति बैठकर दोनों हाथों को फैला कर यत्न करें, जो तर्जनी और मध्यमांगुली से पग के अंगूठें को पकडना है । यदि प्रथम दिवस न पकडा जाय तो कोई चिंता नहीं । दो बार यत्न करके छोड देना चाहिये । इसी भांति उस समय तक यत्नवान् हो, जिस समय तक पगके अंगूठे न पकड ले ।



जिस समय अंगूठों को पकड ले उस समय अंगूठोंको दृढ पकडकर धीरे धीरे शरीर को आगे झुकावे, जहांतक कि माथा जानु को स्पर्श करने लगे, और इसी रीतिसे अर्थात् माथा को जानु पर रख कर जितना समय ठहर सके, उतना ठहरा रहे । माथे को जानु पर लगने के समय इस बात का विशेष ध्यान रखना चाहिये, टांगें भूमि के ऊपर न उडें, और घुटना इकट्ठा न हो ।



इसी आसन का नाम पुस्तकों में "पश्चिमतान" लिखा है, और 'वैदिक धर्म' में इसका नाम "जानु शीर्षकासन" पूर्व लिखा गया है। जिस समय यह आसन उपरोक्त विधिसे सिद्ध हो जाय, उस समय उस आसनका समय बढाना चाहिये। मैं ने इस आसन को प्रति दिवस आध आध घंटे तक स्वयं किया है; इस लिये यदि किसी से प्रथम न हो तो उसे निरुत्साहित न होना चाहिये। क्यों कि बल पूर्वक करने से लाभ के स्थान में हानिका भय रहता है। इस लिये यह आसन धीरे धीरे करना उचित है। जो व्यक्ति इस आसन को १५ मिनिट प्रति दिवस करे, उसका उदर अवश्यमेव ठीक हो जाता है, और जिस समय यह आसन अनायास होने लग जाय, लाभ तो उसी समय प्रतीत हो जाता है। इस लिये जिन महानुभावों का पेट बढा हुआ हो उन्हें ओषधियों का पीछा छोड कर, इसी आसन का अभ्यास करना चाहिये। इस रोग के अतिरिक्त इस आसन से क्षुधा भी बढ जाती है, जिन्हें मंदाग्नि हो उनके लिये भी यह आसन लाभ दायक है।

उदर-वृद्धि वालों को आरंभ से इस आसन के साथ साथ "नौलिक" का अभ्यास करना अच्छा रहता है, वह इस प्रकार है।

सीधे खडे होकर, श्वास को बाहर निकाल कर, पेट को अंदर को संकोच करे, और फिर पूर्ववत् श्वास बाहर निकाल कर, कुछ झुककर, दोनों हाथ दोनों घुटनोंपर रख कर, पेट को ऊपर खैंचकर दाएं और बाएं हिलाए। इसी भांति तीन चार बार प्रति दिवस करे। यह भी पेट को हलका करने में सहायता देता है।

पेट-वृद्धिवाले यदि डाक्टरों की शरण में न जाकर और ओषधि पर धनका अपव्यय न करके, उपरोक्त योगके साधनों में प्रवृत्त हों, तो उन्हें विना धन नष्ट किये ही, लाभ हो सकता है। यही नहीं और भी कई रोग हैं, जिनकी चिकित्सा इस ढंग से हो सकती है। अतः लोगों को इसी भांति की चिकित्सा में प्रवृत्त होकर, इन आसनोंका विशेष प्रकार अभ्यास करना चाहिये।

आसनों के अभ्यास से उदर वृद्धि को दूर करो।

आसन का व्यायाम करने-वालोंके लिय कुछ नियम।

१ आसनों का व्यायाम करनेके लिये प्रातःकालका समय अच्छा है। गर्मीके दिनोंमें इस से भी पूर्व किया जासकता है। सायंकाल आसन करना भी योग्य है। परंतु कई अवस्थाओंमें थोडे थोडे दोनों समय करना बडा लाभ दायक है।

२ शौचादिसे निवृत्त होकर ही यह व्यायाम करना चाहिये। कब्जी बहुत रहती हो, तो रात्रीके सोनेके समय किंचित् उष्ण जल या दूध में घृत डालकर पीना चाहिये। जिससे कब्जी न रहेगी। एक कटोरी भर किंचित् उष्ण जल में दो चार या छः चमस घी लेना पर्याप्त है।

३ प्रारंभ करनेके पूर्व पेटके कृमियोंको औषधादि प्रयोगसे हटाना अच्छा है, इस विषय में वैद्यों या डाक्टरोंकी राय लेना उत्तम है। तथा तीन दिन एरंडीका तेल सेवन करके कोठेकी (पेटकी) शुद्धि करनी चाहिये। इस प्रकार शरीरकी अंतः-शुद्धि करके यह व्यायाम प्रारंभ करनेसे शीघ्र लाभ होता है और पुनः पेटके दोष उत्पन्नही नहीं होते हैं। परंतु एरंडीका तेल इतनाही लेना चाहिये कि जिससे एक दोबार ही शौच शुद्धि हो और अधिक दस्त न लगें। अधिकवार दस्त लगनेसे व्यर्थ अशक्तता आजाती है। किसी कारण यह न होसका तो भी कोई हानि नाहीं।

४ इस आसनके व्यायाम का प्रारंभ आरंभमें अति अल्प-प्रमाणमें करना चाहिये और शनैः शनैः इसका प्रमाण बढाना चाहिये। प्रथम दिन थोडा किया जाय और अपनी इच्छा-नुसार आगे बढाया जाय। शक्तिसे अधिक कभी न किया जाय।

५ अभ्यास के समय अर्थात् हरएक आसन के करनेके समय करनेयोग्य विशेष बातों का ख्याल विशेष रीतिसे करना योग्य है, अन्यथा विशेष लाभ की आशा करना व्यर्थ है। पूर्व स्थानमें हरएक आसनके करनेके समय ध्यान देने योग्य बातोंका विवरण कियाही है।

६ यदि कोई सर्दी आदिका क्लेश न होता होगा तो शीत-जलका स्नान अच्छा है, नहीं तो अपने शरीरकी स्थितिके अनुसार योग्य जलसे स्नान करना चाहिये।

७ यदि साथसाथ सूर्यभेदन का व्यायाम करना हो तो सूर्य-भेदन पहिले करनेके पश्चात् अनान्य आसनोंका अभ्यास पश्चात् करना चाहिये।

८ यदि दस पंद्रह से बहुतही अधिक वार प्राणायाम करने की इच्छा हो या कोई घंटा आधघंटे प्राणायामके अभ्यासी हों तो उन दिनों में उनको सूर्यभेदन या कोई अन्य व्यायाम नहीं करना चाहिये। केवल आसनोंका ही व्यायाम उस समय करना योग्य है।

९ गृहस्थी लोग ऋतुगामी रहें। स्त्री पुरुष संबंधका अतिरेक करनेसे हानि होती है। ब्रह्मचर्य रहनेसे ही यह व्यायाम लाभदायक होता है।

१० वीर्यदोषके दोषी लोग इस आसनके व्यायाममें अपने आपको पूर्ण निर्दोष बना सकते हैं। "ब्रह्मचर्य" पुस्तकमें लिखे नियमोंका पालन करके अपनी वीर्य रक्षा करें। ऐसा करनेसे वे पुनः पूर्ववत् पूर्ण वीर्ययुक्त हो सकते हैं।

११ इसके करने के दिनोंमे संभव होनेतक दवाईका सेवन न करें। अत्यावश्यकता होनेमेंही दवाई लेलें।

१२ रात्रीमें जागरण तथा अतिप्रवास आदि सब प्रकारके अत्याचार बंद रखने चाहियें, तभी लाभ होगा।

१३ पवित्र विचार, पवित्र आचार और पवित्र उद्देश्य धारण करें और पवित्र मित्रोंके साथही संगत करें।

१४ खान पान सात्विक रहे। इमली, मीरची, नमकीन चटपटे पदार्थ बहुत न सेवन किये जांय। भोजन सादा और हितकारक पथ्यकारक तथा परिमित हो। दूध घृत अधिक सेवन किया जाय।

१५ प्रारंभके दिनों में भोजन लघु होना चाहिये, पश्चात् इस नियम का कडा पालन करनेकी आवश्यकता नहीं है।

१६ दिनमें दसपांच मिनिट अथवा सप्ताहमें दसपंद्रह मिनिट तक अपने शरीरकी चमडी सवेरके सूर्यप्रकाशमें तपाई जाय तो अधिक लाभ होगा।

१७ घर भी हवादार हो। बंद कमरेमें सदा रहनेसे लाभ नहीं होसकता। तथा तंग कपडे भी पहनना हानिकारक है।

१८ रात्रीके समय भूख की अपेक्षा थोडा कम भोजन करना प्रशस्त है।

१९ गृहस्थधर्मानुसार रहनेवाली स्त्रियां अपनी अवस्थानुसार आसनोंका अभ्यास करें। हरएक आसनके समय स्त्रियोंके लिये आवश्यक निर्देश किये ही हैं। अधिक कठिन आसन स्त्रियाँ न करें। जो स्त्रियां ब्रह्मचर्य से जीवन व्यतीत करनें वाली हों, वे अपनी शक्ति और इच्छा के अनुसार किया करें पुरुषों के लिये यह रुकावट नहीं है। स्त्रियोंको प्रसूतिकी सुभीताके लिये ऐसा कोई व्यायाम अधिक करना योग्य नहीं, कि जिससे शरीरके पुट्ठे पुरुषोंके समान सख्त हो जावें। परंतु उक्त प्रमाण तक करना अत्यंत लाभकारी है।

आशा है कि इन नियमों तथा आरोग्य के अन्यान्य नियमोंका पालन करनेके साथ साथ इस आसनके व्यायामको करके सब अवस्थाओंमें रहनेवाले स्त्रीपुरुष उत्तम आरोग्यप्राप्त करके तथा धार्मिक जीवन व्यतीत करके यशके भागी होंगे।

आसनोंसे चिकित्सा।

आसनोंद्वारा रोग दूर करनेके यत्नका नाम आसन-चिकित्सा है। आसनोंके अभ्याससे शरीरके रक्षाकेंद्रोंको उद्दीपित करके उनके द्वारा आवश्यक जीवन रस इस शरीरमें अधिक उत्पन्न करनेसे यह चिकित्सा होती है।

शरीरमें कई रक्षाकेंद्र हैं, जिनकी नीरोगतापर शरीरका आरोग्य निर्भर है। गुदास्थान, नाभिस्थान, हृदय, कंठ और मस्तक इतने स्थानोंमें इन रक्षाग्रंथियोंका निवास है और आस-नोंके कारण इन ग्रंथियोंसे अमृतरस अधिक प्रमाणमें स्रवता है जो रोग दूर करनेमें सहायता करता है। परमात्माका धन्यवाद करना चाहिये जिसने हमारे ही शरीरमें आरोग्यके अनंत साधन उपस्थित रखे हैं और प्राचीन आर्य योगियोंकी प्रशंसा करना चाहिये इस लिये कि उन्होंने उक्त साधनोंकी खोज करके उनका उपयोग करनेके यौगिक उपाय हमारे सामने सुगम रीतिसे रखे हैं। आगे हमारा ही पुरुषार्थ है कि उनका साधन करके हम अपना आरोग्य बढावें।

मनुष्योंमें पेट ही एक ऐसा स्थान है कि जहां प्रायः हरएक बीमारीका प्रारंभ होता है। इसीलिये आर्योंके धर्मशास्त्रमें खान पानके विषयमें बहुतसे नियम लिखे हैं और योगशास्त्रमेंभी आसनोंके व्यायाय इसप्रकार बनाये हैं, जिनसे पेटके दोष

बहुत अंशमें दूर हो जांय। इसकारण हमभी यहां अजीर्ण विकारका विचार पहले करते हैं—

१ अजीर्ण।

अन्न उत्तम रीतिसे जीर्ण न होनेका नाम अजीर्ण है। यह दोष केवल पेटकाही नहीं है। भूखकी अपेक्षा अधिक खाना, जिह्वाकी खुशी के लिये जैसे चाहे वैसे पदार्थ आवश्यकतासेभी अधिक खाने, अकालमें भोजन करना, दिनमें अधिकवार खाना, पहिला खाया हुआ पूर्णरीतिसे जीर्ण होनेके पूर्वही दूसरीवार खाना, अयोग्य रीतिसे पका हुआ अन्न सेवन करना, परस्परविरोधी पदार्थोंका एक समय सेवन करना, मनकी अस्वस्थता की अवस्थामें भोजन करना, ठीक प्रकार न चबाते हुए खाना, खानेके पश्चात् कुछ विश्राम न करते हुए ही दौड आदि करना, अपेय पदार्थ पीना, अभक्ष्यपदार्थ भक्षण करना, सभ्यताकी रक्षा करनेके लिये अयोग्य समयमें अनावश्यक तथा हानिकारक पदार्थोंका सेवन करना, कारणके विना अतिशीत अथवा अति उष्ण पदार्थोंका सेवन करना, बहुत परिश्रम करतेही उसीसमय घनिष्ट आहार का सेवन करना, व्यायाम न करना, अति व्यायाम करना, इत्यादि अनेक कारण हैं कि जिनसे अजीर्ण रोगकी उत्पत्ति होती है। उक्त कारणोंमें कौनसे कारणसे या कारणोंसे अपना अजीर्ण रोग उत्पन्न हुआ है इस का निश्चय सबसे प्रथम रोगीको करना उचित है। क्योंकि जबतक उक्त कारण उप-

गे तबतक अन्य उपायोंसे स्थिर लाभ प्राप्त होना असम्भव है।

प्रायः अजीर्ण रोग स्वयं उत्पन्न नहीं होता, मनुष्योंके अस्वाभाविक बर्ताव के कारण उसकी उत्पत्ति है, यह जान कर इस रोगके रोगी अपना बर्ताव पहले सुधारें और पश्चात् उपाय ढूंढें। परंतु प्रायः सब लोग अजीर्ण होते ही औषधकी चिकित्सा शुरू करते हैं और पूर्वोक्त आवश्यक पथ्य और नियम पालन न करते हुए ही औषधियोंका सेवन करते हैं और अंतमें ऐसी अवस्थातक पहुंचते हैं कि जहांसे आरोग्य-मंदिरका मार्ग प्राप्त होना करीब अशक्यसा होता है।

आवश्यक पथ्य संभालनेके पश्चात् पाठक प्रतिदिन कुछ समय "सूर्यभेदन व्यायाम" के लिये देंगे तो उनका अजीर्ण विकार निःसंदेह दूर हो सकता है। और साथ ही साथ निम्न-लिखित आसन करनेसे रोग का मूल ही पूर्ण रीतिसे दूर होगा—

अजीर्णके दूर करनेके लिये प्रतिदिन निम्न आसन कीजिये— शीर्षासन, चक्रासन, पश्चिमतानासन, जानुशिरासन, सर्वां-गासन, ऊर्ध्वसर्वांगासन, कर्णपीडनासन, बद्धपद्मासन, सर्पा-सन, भुजंगासन, नागासन, उष्ट्रासन। प्रतिदिन शीर्षासन तथा ऊर्ध्वसर्वांगासन जितनी देर कर सकें कीजिये और अन्य आसन जितने हो सकें कीजिये।

निम्नलिखित आसन यदि कर सकेंगे तो आपको लाभ

अति शीघ्र होगा—मयूरासन, मत्स्येंद्रासन, वृश्चिकासन, मत्स्यासन, गर्भासन, ऊर्ध्वपद्मासन।

पथ्य—केवल दो वार अथवा एक वार लघुभोजन करना। यदि कोई कष्ट न हों तो छाछ सेवन करना। यदि हो सके तो फलभोज करना। अथवा दुग्धाहार करना। अथवा अपने अनुकूल पथ्य भोजन करना चाहिये।

अजीर्ण रोगसे ही आगे जाकर वीर्यदोष, बवासीर, अवष्टंभ, सिरदर्द, वातरोग, पित्तरोग, अग्निमांद्य, पांडुरोग आदि अनंतरोग होते हैं इस इस लिये आरोग्य चाहनेवाले पाठक अपने आपको इस रोगसे बचालेवें।

२ अग्निमांद्य।

पूर्वोक्त लेख इस विषयमें पाठक देख सकते हैं। यदि मंदाग्नि आनुवंशिक है तो दूर होनेके लिये बडी देर लगेगी, और यदि अपने ही अपथ्यसे बना है तो कुछ समयमें आरोग्य प्राप्त किया जा सकता है। जिनके बापदादा तमाखूके व्यसनके आधीन थे उनका मंदाग्नि बडा दुःसाध्य होता है। आज कलके चायपानका भी वही परिणाम है। इसके लिये उत्तम पथ्यके साथ अथवा केवल दुग्धाहारके साथ पूर्वोक्त आसन करना चाहिये। प्रतिदिन शौचशुद्धिका भी विशेष ख्याल रखना अत्यावश्यक है।

३ अरुची।

मुख की अरुची का पेटके अजीर्ण के साथ संबंध है। इस लिये पूर्वोक्त दोनों लेखोंमें वर्णित बातों की ओर ध्यान देनेसे इस विषयका सुधार होना संभव है। इस कारण इस विषयका विचार स्वतंत्र रीतिसे करने की कोई आवश्यकता नहीं है।

४ अवष्टंभ।

अजीर्ण और अग्निमांद्य के साथ अवष्टंभ अथवा बद्धकोष्ठ प्रायः रहता है। इसके लिये उषःपान के साथ आसनोंका प्रयोग करना उचित है। प्रातः चार पांच बडे उठकर थोडा पानी (बहुत ठंढा न हो और गर्म भी न हो) नाकके द्वारा अथवा मुख से पीनेसे अवष्टंभ दूर होने में बडी सहायता होती है। नाक के द्वारा पानी पीना हो तो एक नाक बंद करके दूसरे नाकसे शनैः शनैः कटोरीमेंसे खींचना चाहिये। थोडे अभ्याससे लडके भी आसानीसे पानी पीने लग जाते हैं। इस नासा-पानसे नासिकाके रोग दूर होते हैं और मस्तिष्ककी गर्मी हट जाती है और कब्जी भी दूर होती है।

उषःपान करनेके पश्चात् कमसे कम आध घंटा बिस्तरेपर पडे रहना चाहिये, अन्यथा उस जलका परिणाम आंतोंपर नहीं होता। पश्चात् उठकर शौच होकर निम्नलिखित आसन करने योग्य हैं। इसके साथ साथ रात्रीके समय किंचित् उष्ण दूधमें या जलमें दोचार चमस घी मिलाकर पीना कब्जीको दूर

करनेमें सहायक है। अधिक गर्म दूध या गर्म जल लेनेसे वीर्य-दोष होते हैं। इसलिये इसकी सावधानी रखनी चाहिय।

इसकेलिये निम्नलिखित आसन उपयोगी हैं-जानुशिरासन, पश्चिमतानासन, सर्वांगासन, कर्णपीडनासन, मयूरासन, चक्रासन, उष्ट्रासन, मत्स्येंद्रासन। सब व्यायामके अंतमें ऊर्ध्वसर्वांगासन तथा शीर्षासन अधिक समयतक करना चाहिये।

साथसाथ जलमें तैरना, भी हो सके तो बडा लाभदायी होता है। कब्जी दूर करनेके लिये फलभोज उत्तम है। इस विषयमें "अजीर्ण" विषयपर लिखे लेखकाभी यहां पाठक विचार करें। केवल छाछके प्रयोगसेभी कब्जी हट जाती है, परंतु वह केवल छाछ चाहिये अर्थात् जिसमें मख्खन का कुछभी अंश न हो और एकवार विलोडकर फिर उसमें किसीभी पदार्थकी मिलावट न की हो, कपड छानकर लिया जाय तो अधिक उत्तम होगा।

५ आंतोंके रोग।

आंतोंके रोगोंके साथ पूर्वोक्त चारों दोषोंका संबंध है इस लिये पाठक उन लेखोंको यहां अवश्य देखें। दूसरा कुछ अन्न न सेवन करते हुए एकवार थोडा दूध, घंटेके पश्चात थोडी छाछ इस प्रकार उचित प्रमाणमें जितना पचन हो उतना सेवन करनेसे एक दो मासमें बहुत आरोग्य प्राप्त होता है। बीचमें

कुछ रसदार फल सेवन करनेसेभी बडा लाभ होता है । योग्य पथ्यसे ही यह दोष दूर हो सकता है । उक्त पथ्यके साथ निम्नलिखित आसन कीजिये—

मत्स्येंद्रासन, उष्ट्रासन, चक्रासन, सर्पासन, मयूरासन, बद्ध-पद्मासन, गर्भासन, पश्चिमतानासन, जानुशिरासन, पवन-मुक्तासन ।

निम्नलिखित आसन विशेष प्रमाणमें कीजिये—सर्वांगासन, ऊर्ध्वसर्वांगासन, ऊर्ध्वपद्मासन, वृक्षासन । अंतमें शीर्षासन अधिक समय तक कीजिये ।

६ आमवात ।

अन्नका पूर्ण रीतिसे पचन न हुआ तो पेटमें आम उत्पन्न होता है । इससे ऊर्ध्वगति या अधोगति वात होता है । दोनों ओरकी गति न हुई और वातका पेटमें स्तंभन हुआ तो बडा क्लेश होता है । प्रतिदिन नियमपूर्वक सूर्यभेदन व्यायाम करनेसे यह पेटकी कमजोरी दूर होजाती है और साथ साथ निम्नलिखित आसन करनेसे बडा लाभ होता है—

पश्चिमतानासन, बद्धपद्मासन, चक्रासन, उष्ट्रासन, मत्स्यें-द्रासन, वृश्चिकासन, मयूरासन । अंतमें जितना हो सके उतना ऊर्ध्वसर्वांगासन तथा शीर्षासन कीजिये ।

पथ्यभोजन, मिताहार तथा नियमानुकूल व्यवहार करनेसे शीघ्र आरोग्य मिलता है ।

७ उदरशूल ।

पूर्वोक्त रोगोंका परिणाम उदरशूल, पेटदर्द आदिमें होता है । पेटदर्दके रोगियोंको पूर्वोक्त लेखोंका विचार विशेष रीतिसे करना चाहिये । भोजन सात्विक हुआ तो शीघ्र अरोग्य मिलता है । इस के लिये मयूरासन, मत्स्येंद्रासन, और शीर्षासन विशेष लाभकारी हैं ।

८ कमरदर्द ।

कमरदर्द तथा पीठदर्द के पूर्व प्रायः शौच खुलकर न आनेकी शिकायत रहती है । इस लिये बद्धकोष्ठ, अवष्टंभ, अजीर्ण, आदि शीर्षक के लेखोंका विचार यहां पाठक अवश्य करें और शौच खुलकर होनेका उपाय प्रथम करें । पश्चात् निम्नलिखित आसन करेंगे तो अधिक लाभ होगा ।

कोनासन, हस्तपादांगुष्ठासन, पश्चिमतानासन, जानुशिरासन, चक्रासन, उष्ट्रासन । इन में पश्चिमतानासन तथा जानुशिरासन बडा उपयोगी है । युक्तिसे उसी दर्दके स्थानपर खिंचाव उत्पन्न करनेसे बडाही लाभ होता है ।

इनके साथ साथ सर्वांगासन, कर्णपीडनासन, उर्ध्वसर्वांगासन, मत्स्येंद्रासन, वृश्चिकासन आदि करनेसे भी शीघ्र आरोग्य होता है । शीर्षासन भी सहाय्यकारी है ।

दर्दके अंगपर तेलसे मालिश और गर्मपानीकी भांपसे कपडेके द्वारा सेक देनेसे अति शीघ्र आरोग्य मिलता है, परंतु

मालिश और सेक के पश्चात् उस भागको हवा लगनी नहीं चाहिये। सेक के पश्चात् हवा में भ्रमण करनेसे कदाचित दर्द बढ भी जाता है।

९ कंठदोष।

कंठदोषका मुख्य कारण पेटकी विकृति है, इसलिये अजीर्ण के विषयका लेख इस विषयमें पाठक अवश्य पढें। किसी समय हवा की आकस्मिक शीतता भी कारण होता है। इसके निवारण के लिये कंठबंध, शीर्षासन, सर्वांगासन ये आसन बडे उपयोगी हैं। यदि कोई आकस्मिक कारण हुआ हो तो उसके लिये विशेष उपाय किये जा सकते हैं।

१० कास (खांसी)।

कास खांसीकाही नाम है। जो लोग प्रतिदिन नियमपूर्वक शीर्षासन अथवा ऊर्ध्वसर्वांगास करते हैं, उनको प्रायः कास श्वास या खांसी आदि बीमारी नहीं सताती। इसमें कई प्रकारकी खांसी होती है और इस विषयमें वैद्यों और हकीमोंकी सलाह लेना उत्तम है। परंतु किसी प्रकारकी भी खांसी क्यों न हो निम्न आसन इसके लिये आरोग्यप्रद हैं यह अनुभवसे सिद्ध हुआ है, जानुशिरासन, पश्चिमतानासन, ऊर्ध्वसर्वांगासन, शीर्षासन।

शुद्ध मधु (शहद) खानेसे भी कास श्वासादिके लिये लाभ होता है।

११ कृमिदोष।

पेटमें कृमि होनेका नाम कृमिदोष है। जो लोग आसनाभ्यासी हैं उनको कृमिदोष होता ही नहीं। तथा कृमिदोष होनेपर आसनोंका अभ्यास करनेसे वह दोष दूर होता है। इसके लिये चक्रासन, वृश्चिकासन, मत्स्येंद्रासन, पश्चिमतानासन, जानुशिरासन, उष्ट्रासन, मयूरासन, सर्वांगासन, ऊर्ध्वसर्वांगासन, गर्भासन, शीर्षासन, कर्णपीडनासन, ये बडे उपयोगी हैं। इनमें भी मत्स्येंद्रासन, सबसे अधिक लाभकारी है।

जो लोग शौच जानेके पश्चात् शुद्ध मिट्टीसे हाथ..पांव न धोते हुए ही अपना कार्य करने लगते हैं, अथवा ठीक प्रकार हाथ धोते नहीं, उन लोगोंको कृमि दोष होते हैं। प्रायः अपने शौचसे ही शौचद्वार धोनेके समय कृमिके अंडे हाथकी अंगुलियोंपर चिपक जाते हैं और यदि हाथ अच्छी प्रकार न धोये गये तो वे हाथपर चिपके हुए कृमिके अंडे पेटमें जाते हैं और उनसे कृमि होते हैं। इस लिये शौचके पश्चात् उत्तम स्वच्छता करना आवश्यक है।

इसके अतिरिक्त कूवेके पास शौचकूप (पाखाना) हुआ तो कूवेके जलमें कृमिके बीज पहुंचते हैं, तथा नंगे पांव ग्रामके बाहर शौच फेरनेसे भी पांवके द्वारा क्रीमियों के बीज शरीरमें प्रविष्ट होते हैं। तथा बाजारकी अशुद्ध चीजें छावडी आदि खाने से भी अनंत कृमिबीज पेटमें प्रविष्ट होते हैं। तात्पर्य जो शुद्ध-

ताके नियम आर्यशास्त्रोंमें कहे हैं तथा जो शुद्धतापर योग-शास्त्रमें लिखा गया है वह सब अति आवश्यक है और उसीसे उत्तम आरोग्य सिद्ध हो सकता है।

कृमिदोष के लिये वैद्यों और डाक्टरोंके पास अनेक औषधियां हैं और उनका उपयोग उनके विचारसे ही करना उचित है।

१२ खांसी।

इससे पूर्व " कास " के विषयमें जो लिखा है वह यहां देखिये।

१३ खट्टे ढकार।

इससे पूर्व " अजीर्ण " के विषयमें जो लेख आया है वह यहां पढिये।

१४ गंडमाला।

गंडमालाके प्रथम अवस्थामें ऊर्ध्वसर्वांगासन तथा शीर्षासन बडा उपयोगी सिद्ध हुआ है। तथापि इस विषयमें अधिक अनुभव लेनेकी आवश्यकता है।

१५ गर्भाशयदोष।

बस्तियंत्रद्वारा गर्भाशयको धोनेसे वहांकी स्वच्छता होती है। पश्चात् शीर्षासन तथा ऊर्ध्वसर्वांगासन का अभ्यास कर-नेसे दोष कम होता है। सूर्यभेदन व्यायाम संख्या १ के

करनेसे भी बडा लाभ होता है। (इस विषयमें " सूर्यभेदन व्यायाम " पुस्तक देखिये)।

१६ गलेपडने ।

कंठदोषके ऊपर इससे पूर्व जो लिखा है वह यहां देखिये ।

१७ गुल्मरोग ।

अजीर्ण, बद्धकोष्ठ, आमवात, आंतोंके रोग आदि विषयमें जो लेख इसके पूर्व लिखे हैं उनको यहां पढिये । प्रथमावस्थामेंही आसनोंसे लाभ होता है। ऊर्ध्वसर्वांगासन तथा शीर्षासन बडे उपयोगी हैं। इसका विशेष पथ्य प्रकृतिके अनुकूल वैद्योंसे पूंछकर निश्चित करना चाहिये।

१८ घुटनेकी बीमारी ।

इस विषयमें स्वानुभवकी कथा भूमिकामें पढिये। तेलसे मालिश, आगके पत्तोंसे सेक और शीर्षासन इसके लिये लाभकारी हैं।

१९ जंघादोष ।

हस्तपादांगुष्ठासन, पश्चिमतानासन, जानुशिरासन, सर्वांगासन, ऊर्ध्वसर्वांगासन, कर्णपीडनासन, मत्स्येंद्रासन इनका विशेष उपयोग होता है। इस दोषके दूर करनेके लिये सूर्यभेदन व्यायाम बडा लाभकारी है। जंघासंधिका दोष दूर करनेके लिये प्राणासन, चतुरकोणासन, एकहस्तभुजासन, द्विहस्तभुजासन, एकपादशिरासन, द्विपादशिरासन, तथा वातायनासन ये बडे उपयोगी हैं।

२० जुकाम।

नेती अथवा जलकी नेती जो करते हैं तथा शीर्षासन के जो अभ्यासी हैं अथवा नियमपूर्वक सूर्यभेदन व्यायाम जो करते हैं उनको जुकामके कष्ट नहीं होते। शीर्षासन और ऊर्ध्वसर्वांगासन इसमें बडे उपयोगी हैं। नेतीसे भी बडा लाभ होता है।

२१ जीर्णज्वर।

जो ज्वर पूर्वज्वरका अवशेष रूप बनकर शरीरमें रहता है और किंचित् सा शरीरमें नियत समयपर प्रकट होता है उसका यह नाम है। मयूरासन, चक्रासन, मत्स्येंद्रासन, जानुशिरासन, शीर्षासन और ऊर्ध्वसर्वांगासन ये इसमें लाभदायक हैं। यदि ज्वरका रूप विशेष न हो तो सूर्यभेदन व्यायाम भी लाभ करता है, परंतु यदि ज्वरकी अवस्था विशेष हो तो सूर्यभेदन करना नहीं चाहिये। ज्वरकी अवस्थामें तो कोई व्यायाम करना उचित नहीं है। जो भी व्यायाम—अल्प प्रमाणमें करना हो तो—ऐसे समय करना चाहिये कि जिस समय ज्वर नहीं होता है।

२२ जृंभा।

जम्हुआई शीर्षासन अथवा सर्वांगासनसे दूर होती है। अथवा कोई अन्य दोचार आसन वेगके साथ करनेसे तथा सूर्यभेदन वेगसे करनेसे दूर होती है।

२३ तापतिल्ली।

चक्रासन, पश्चिमतान, जानुशिरासन, सर्वांगासन, ऊर्ध्व सर्वांगासन, कर्णपीडनासन, शीर्षासन, गर्भासन, मयूरासन, चक्रासन, उष्ट्रासन, मत्स्येंद्रासन, वृश्चिकासन ये आसन, तथा सूर्यभेदन व्यायाम करनेसे यह रोग दूर होता है।

२४ थकावट।

दंडासन, प्रेतासन, मृतासन, शवासन अथवा शयनासन इससे थकावट दूर होती है।

२५ दंतदोष।

दांतोंकी स्वच्छता करनेसे दंतदोष दूर होते हैं, साथ साथ शीर्षासन लाभकारी है। दांतोंके साथ पेटके अजीर्णका बडा घनिष्ट संबंध है इसलिये अजीर्ण न होने देना उचित है।

२६ दृष्टिदोष।

दृष्टिदोषको दूर करनेके लिये संध्योपासनामें दृष्टि स्थिर करनेके प्रकरणमें लिखा है वह लेख यहां अवश्य देखिये। आसनोंमें शीर्षासन तथा ऊर्ध्वसर्वांगासन विशेष लाभ करते हैं।

२७ नलाश्रित वाय।

आमवात पर जो लेख लिखा है वह यहां पढिये।

२८ निद्रानाश।

अजीर्ण विषयपर जो लेख लिखा है यहां पढिये। पेटके दोषके कारण निद्रानाश प्रायः होता है। शीर्षासन विशेष

उपयोगी है। सूर्य भेदनके व्यायामसे भी चिरस्थायी लाभ होता है।

२९ पीठदर्द।

कमर दर्द के स्थानपर लिखा हुआ लेख यहां पढिये।

३० पांडु रोग।

प्रथमावस्थामें ही उपाय होना संभव है। द्वितीय अवस्थाके पश्चात् केवल आसन प्रयोगसेही आरोग्य प्राप्त होना अति दुष्कर है। तथापि औषधोंकी योग्य चिकित्साके साथ आसन किये जायंगे तो अधिक लाभ अवश्य होगा इसमें संदेह नहीं है। इस रोग की निवृत्तिके लिये निम्न लिखित आसन उपयोगी सिद्ध हुए हैं—पश्चिमतानासन, जानुशिरासन, सर्वांगासन, ऊर्ध्वसर्वांगासन, कर्णपीडनासन, शीर्षासन, मत्स्यासन, बद्धपद्मासन, मयूरासन, सर्पासन, चक्रासन, मत्स्येंद्रासन, वृश्चिकासन। इसके साथ साथ योग्य प्रमाणमें सूर्यभेदन व्यायाम किया जाय तो अच्छा है। यह करना हो तो प्रथम करके पश्चात् आसनका अभ्यास किया जाय।

३१ पीनस।

पीनस नासिका का रोग है। नासिका द्वारा कूएका ताजा पानी पीनेके अभ्यास से इस रोगकी निवृत्ति होती है। साथ साथ ऊर्ध्व सर्वांगासन तथा शीर्षासन करना बडा लाभ कारी है।

३२ पेटके दोष।

इससे पूर्व अजीर्ण, आंतोंके दोष, अग्निमांद्य, उदर शूल, आमवात आदि शीर्षकोंके नीचे जो जो लेख लिखे हैं वे यहां पढिये। वहां कहे गये आसनोंके साथ ताडासन, कोनासन आदि आसन तथा सूर्यभेदन व्यायाम लाभकारी है। इसके उपयोगी अन्यान्य आसन पूर्वोक्त शीर्षकों के नीचे दिये ही हैं।

३३ प्लीहादोष (तापतिल्ली)

पेटके दोषके लिये लिखा हुआ यहां देखिये। इसके लिये मत्स्येंद्रासन, सर्वांगासन, ऊर्ध्वसर्वांगासन विशेष लाभकारी हैं।

३४ बद्धकोष्ट।

इससे पूर्व दिया हुआ अवष्टंभ पर का लेख यहां पढिये।

३५ बलवर्धन। (अशक्तताको दूर करना)

बल बढानेके लिये आसनोंका सूर्य भेदन व्यायाम प्रशस्त है। इसका पुस्तक स्वतंत्र छपा है वही पाठक देखें, उसमें इसकी सब विधि लिखी है। इसके आतिरिक्त ऊर्ध्वपद्मासन उत्थित पद्मासन, कुक्कुटासन, बकासन, लोलासन, दोलासन, मयूरासन, वृश्चिकासन आदि आसन सहायक हैं।

३६ बुद्धिदोष।

शीर्षासन, ऊर्ध्वसर्वांगासन ये आसन इसके दूर करनेके लिये उपयोगी हैं।

३७ मंदाग्नि।

अग्निमांद्यपर जो लेख लिखा है वह यहां देखिये।

३८ मेदोरोग।

इसके लिये सूर्य भेदन व्यायाम करना बहुत लाभकारी है। इसके अतिरिक्त–चक्रासन, कोनासन, पश्चिमतानासन, जानुशिरासन, उत्तानपादासन, सर्वांगासन, ऊर्ध्व सर्वांगासन, कर्णपीडासन, गर्भासन, बद्धपद्मासन, मयूरासन, उष्ट्रासन मत्स्येंद्रासन, वृश्चिकासन, आदि आसन प्रशस्त हैं। पथ्य—मेद उत्पन्न करनेवाले पदार्थ कम खाने चाहियें।

३९ यकृत् (कलेजा, जीगर)

प्लीहा और पेटके दोषोंके विषयमें जो लिखा है वह यहां देखिये।

४० रक्तदोष।

कंठबंध, शीर्षासन, और ऊर्ध्व सर्वांगासन करनेसे रक्त दोष दूर होनेका अनुभव है।

४१ वातदोष।

वातदोषके अंदर सेंकडों प्रकारके रोग होते हैं। उन सब का विचार करना यहां कठिन है। परंतु प्रायः अंदरके और बाहरके सब वातदोषोंके लिये सूर्यभेदन व्यायाम बडा लाभकारी है। कई स्थानोंपर तेलकी मालिश और सेकभी

साथ साथ करना आवश्यक होता है। परंतु जो लोग नियम-पूर्वक प्रतिदिन कमसे कम सौवार सूर्यभेदन व्यायाम सं० १ का व्यायाम करते हैं उनको वातदोष होते ही नहीं। साथ साथ आसनों का अभ्यास भी होता रहे तो बहुत लाभ होते हैं। वातरोग स्थानस्थानके कारण भिन्नभिन्न आसनोंसे संबंध रखता है इसलिये जिसजिस अवयवमें वातदोष हुआ हो, उस अवयव का हित करनेवाले आसन उस समय करने योग्य हैं।

४२ वीर्यदोष।

" ब्रह्मचर्य " पुस्तक में इस विषयका सब विचार लिखा है। उस पुस्तकके अनुसार पथ्य करने और आसनोंका अभ्यास करनेसे वीर्यदोष दूर होते है।

४३ वृषण वृद्धि।

कई कारणोंसे इस रोगकी उत्पत्ति होती है और कारणोंके भेदके कारण आसन चिकित्सामें भी भेद होना संभव है तथापि सर्व साधारण रीतिसे शीर्षासन, ऊर्ध्व सर्वांगासन, गरुडासन ये आसन बडे उपयोगी हैं।

४४ शिरोरोग।

सिरदर्द आदि अनेक भेद इसमें हैं। परंतु शीर्षासन तथा सर्वांगासन येही इसके लिये उपयोगी आसन हैं। कब्जी आदि निवारण करनेके उपाय भी इसके लिये साथ साथ उपयोगी हैं।

४५ श्वास।

" कास " विषयपर इससे पूर्व लिखा है वह यहां पढिये।

४६ श्वेतबाल।

शीर्षासन और ऊर्ध्व सर्वांगासन करनेसे एक साल में बाल काले होने लगते हैं। प्रतिदिन कमसे कम आध घंटा यह अभ्यास करना चाहिये। सिरपर गरीका तेल मलनेसे भी अधिक लाभ होता है, परंतु आजकल बजार में इस तेलमें मिलावट होती है। वह मिलावटी तेल बालों को जल्दी सफेद करता है। इसलिये सावधान रहना योग्य है।

४७ शोथ (सूजन)

शीर्षासन, ऊर्ध्व सर्वांगासन के अभ्यास से सूजन कम होती है। तथा जिस अवयव के ऊपर सूजन हो उसके लिये हितकारी आसन करनेसे भी बडा लाभ हो सकता है। परंतु कई प्रकारके सूजन ऐसे हैं जो आसनोंसे ठीक नहीं होते और उसके लिये अन्यान्य उपाय करने आवश्यक होते हैं।

४८ श्रम।

" थकावट " विषयपर इससे पूर्वका लेख यहां पढिये।

४९ सुस्ती।

कोई दस पांच आसन करनेसे सुस्ती हट जाती है। सूर्य भेदन व्यायाम भी इसके लिये बडा उपयोगी है।

५० संधिवात।

वात विकार के विषयमें पूर्व स्थलमें लिखा हुआ लेख यहां पढिये। संधिभेद के कारण विभिन्न आसनोंकी योजना करना आवश्यक होता है।

५१ स्वरभंग।

कंठ दोष के विषय में इससे पूर्व लिखा है वह यहां देखिये।

५२ हृदय विकार।

भूमिपर लेटकर करनेके सब आसन इस विकार में किये जा सकते हैं। परंतु डाक्टरोंकी संमति द्वितीय दर्जेके पश्चात् लेनी उचित है। यदि पाचन दोष से इस विकार की उत्पत्ति है तो मंद वेगसे सूर्य भेदन व्यायाम करनेसे यह विकार हट जाता है।

विशेष सूचना।

पूर्वोक्त रोगोंकी चिकित्सा के विषयमें गत दस बारह वर्षोंमें जो आसनोंके व्यायामके विषयमें अनुभव लिये हैं और सहस्रों मनुष्योंपर इन आसनोंके व्यायामोंका परिणाम देखा है, उसका निछोड यह है। तथापि हम यह नहीं कहते कि ये चिकित्साके नियम परिपूर्ण हैं। अभी इस विषयमें बहुतसा अनुभव लेना है और कई बातोंका अनुभव भी देखना है, इस लिये जो जो पाठक जिस प्रकारके अनुभव देखें, उनकी योग्य प्रमाणों द्वारा छान बीन कर, जो विविध प्रमाणोंसे ठीक और सत्य सिद्ध

हो उसको हमारे पास लिख कर भेजेंगे, तो हम भी उसका अधिक विचार कर सकते हैं। परंतु ध्यान रहे कि किसी प्रकार भी जोशमें आकर अत्युक्ति नहीं करनी चाहिये और उतनाही कथन करना चाहिये जितनाकी बिलकुल ठीक हो।

बस्ति, धौती, नेति आदि षट्कर्म सिद्ध होनेसे आसनों की चिकित्सा विशेष फलीभूत होती है। इसलिये जो पाठक इन षट्ट कर्मोंको नहीं जानते उसको उतना लाभ नहीं हो सकता। योगबस्ति के स्थानपर 'यंत्र बस्ति', योगधौती के स्थानपर 'यंत्रधौति', इस प्रकार करनेकी कई लोग संमति देते हैं। और आपत्कालमें यह लाभ भी करता है तथापि ये प्रतिनिधि हैं और इसी कारण इनसे न्यून फल है इतनी बात अवश्य ध्यानमें धरनी चाहिये।

अंतिम निवेदन।

इस विषयमें अंतिम निवेदन इतनाही है कि योग की क्रियाएँ शीघ्रताके साथ तथा असावधानीके साथ करना योग्य नहीं है। अपनी प्रकृतिके अनुकूल बडी सावधानी के साथ करना योग्य है। जो इतना विचार मनमें रखकर इस पुस्तक का योग्य उपयोग करेंगे उनको अधिक से अधिक लाभ होगा इसमें यत्किंचित् भी संदेह नहीं।

विषयसूची ।



अथर्ववेदका सुबोधभाष्य ।

प्रथम काण्ड ।

इस प्रथम काण्डमें निम्नलिखित विषय हैं—

अथर्ववेदका महत्त्व । बुद्धिके संवर्धन करनेका उपाय । विजय प्राप्त करना । आरोग्य वर्धन । जलकी महिमा । धर्म-प्रचार करना । अपना तेज बढाना । पापोंसे छुटकारा । संघटन करना । चोर आदि दुष्टोंको दूर करना । रक्तस्राव बंद करनेका उपाय । सौभाग्य-वर्धन । शत्रुका नाश करना । आपसकी एकता । प्रजापालन । हृदयरोग, कामिला, श्वेतकुष्ठ, शीतज्वर इन रोगोंको दूर करना । सुख-प्राप्ति । विजयी स्त्री । राष्ट्र-संवर्धन । आयुष्य बढाना । दिग्विजय । जीवनरसका महा-सागर । मधुविद्या ।

इतने विषय प्रथम काण्डमें हैं । मूल्य २) डा. व्य. ॥)

द्वितीय काण्ड ।

इस काण्डमें निम्नलिखित विषय हैं—

गुह्य अध्यात्मविद्या । एक पूजनीय ईश्वर । आरोग्य प्राप्ति । जंगिडमणि । क्षत्रिय धर्मका आदर्श । ब्राह्मण धर्मका आदर्श । शापको दूर करना । आनुवंशिक रोग दूर करना । सन्निपात रोग दूर करना । दुर्गतिसे बचना । आत्माके गुण । मनका बल

बढाना । वस्त्रपरिधान । विपत्तियोंको हटाना । निर्भयजीवन । विश्वंभरकी भक्ति । आत्मसंरक्षणका बल । शुद्धिकी विधि । डाकुओंको असफल करना । पृश्निपर्णी । गोरस । विजय प्राप्ति । दीर्घ आयुष्य । पुष्टि । सुप्रजानिर्माण । पति और पत्नी । रोगोत्पादक क्रिमि । क्रिमिनाशन । यक्ष्म नाशन । मुक्तिका सीधामार्ग । आत्मसमर्पण विवाहका मंगलकार्य ।

इस काण्डमें इतने विषय हैं । मूल्य २) डा. ॥) है

तृतीय काण्ड ।

इस तृतीय काण्डमें निम्नलिखित विषय हैं—

अपने राष्ट्रका विजय । शत्रुसेनाका संमोहन । राजा की पुनः अपने राज्यपर स्थापना । राजाका चुनाव । राजाको बनानेवाले । वीर पुरुष । आनुवंशिक रोगोंको दूर करना । राष्ट्रीय ऐक्य । क्लेश प्रतिबंधक उपाय । कालका यज्ञ । हवनसे दीर्घ आयुष्य । गृहनिर्माण । जल । गोशाला । वाणिज्यसे धनकी प्राप्ति । प्रातः कालमें भगवान् की प्रार्थना । कृषिसे सुख । वनस्पती । ज्ञान और शौर्य । तेजस्वितासे अभ्युदय । कामाग्निका शमन । तेजकी प्राप्ति । वीर पुत्रकी उत्पत्ति । समृद्धि । उन्नतिकी दिशा । पशुओंका स्वास्थ्य । संरक्षक कर । एकता । सांमनस्य । सहृदयता । पाप निवृत्ति ।

इस काण्डमें इतने विषय हैं । मूल्य २) डा. व्य. ॥) है ।

चतुर्थ काण्ड ।

इस चतुर्थ काण्डमें निम्नलिखित विषय हैं—

ब्रह्मविद्या । हम किस देवताकी उपासना करें ? शत्रुओंको दूर करना । बल बढाना । निद्रा । विषको दूर करना । राजाका राज्याभिषेक । अञ्जन । शंखमणि । विश्वरूपी शकटका संचालक । रोहिणी औषधि । हस्तस्पर्शसे रोगनिवारण । आत्मज्योतिका मार्ग । वृष्टि । सर्वसाक्षी प्रभु । अपामार्ग औषधि । दिव्य दृष्टि । गोपालन । क्षात्रबल संवर्धन । पापमोचन । राष्ट्रदेवी की भक्ति । मनका उत्साह । पाप नाशन । अन्नका यश । दुष्टोंका दमन । रोग नाशक ओषधि । सूर्यके किरण । समृद्धिकी प्राप्ति । शत्रुओंका नाश करना ।

इत्यादि विषय इस काण्डमें हैं । मूल्य २ डा. व्य. ॥) है

पञ्चम काण्ड ।

इस पञ्चम काण्डमें निम्नलिखित विषय हैं—

आत्मोन्नतिकी विद्या । श्रेष्ठ देवकी उपासना । विजयकी प्राप्ति । कुष्ट और लाक्षा औषधि । ब्रह्मविद्या । शत्रुको हटाना । आत्मिक बल । यज्ञ । सर्पविष दूर करना । स्त्री के पातिव्रत्यकी रक्षा । गौ । ज्वरनिवारण । रोगजन्तुनिवारण । गर्भधारणा । दीर्घायु और तेजस्विता ।

इत्यादि विषय इस काण्डमें हैं । मूल्य २) डा. व्य. ॥) है

षष्ठ काण्ड ।

इस काण्डमें निम्नलिखित विषय हैं ।

अमृतदाता ईश्वर । यज्ञसे उन्नति । अद्रोहका मार्ग । दम्पतीका परस्पर प्रेम । सर्पविषनिवारण । क्षयरोग निवारण । गर्भधारणा । केशवर्धक औषधि । वृष्टि कैसी होती है ? जल-चिकित्सा । कपोतविद्या । चंद्र और पृथ्वी की गति । रोगकृमि-नाशक हवन । तेजस्विताकी प्राप्ति । रक्तस्रावकी औषधि । सूर्यकिरणचिकित्सा । राष्ट्रके ऐश्वर्यकी वृद्धि । अरुंधती औषधि । विवाह । बन्धनसे मुक्त होना । संघटनाका उपदेश । गौसुधार । वाजीकरण । एक विचारसे रहना । कंकणका धारण । कन्याके लिये वर । गंडमालाका निवारण । यक्ष्मचिकित्सा । शरीरसे बाणको निकालना । अश्व । रोगोंसे बचना । विषनिवारणका उपाय । बल प्राप्त करना । खांसीको दूर करना । पाशोंसे मुक्तता । ऋणरहित होना । पवित्र गृहस्थाश्रम । कफक्षयचिकित्सा । भाग्यकी प्राप्ति । मेखलाबंधन । दांतों की पीडा । अन्नकी वृद्धि । इत्यादि विषय इस काण्ड में हैं । मू० २) रु० डा० व्य० ।।) है ।

मंत्री—स्वाध्याय मंडल,

औंध (जि. सातारा).